गुरु जाम्भोजी की सबदवाणी और जाम्भाणी
संत–कवियों की रचनाओं से संग्रहित

सूक्ति सागर

(हिन्दी अर्थ सहित)

संपादन एवं संकलन
विनोद जम्भदास

प्रकाशक :
जाम्भाणी साहित्य अकादमी

कृति
सूक्ति सागर

प्रकाशक:
जाम्भाणी साहित्य अकादमी
सें. 1 ई. 134, जय नारायण व्यास कॉलोनी
बीकानेर (राजस्थान)

ISBN–

सन् – 2022 : प्रथम संस्करण

मूल्य : 50/–

मुद्रक :
तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
मो. 9314962474/75

भूमिका...

गुरु जांभोजी ने सबदवाणी को वेद सम कहा है– मोरा उपख्यांन वेदूं। जाम्भाणी संत अल्लूजी कविया ने सबदवाणी को पंचम वेद कहा है – **'पांचवों वेद सांभळि सबद।'** सनातन धर्म में वेदों का सार उपनिषद और उपनिषदों का सार गीता माना जाता है। इसी प्रकार सबदवाणी भी वेद–उपनिषदों के सार तत्व का बखान करती है। गुरु जाम्भोजी ने अपने जीवन काल में अनंत सबद कहे– **'अनंत सबद सतगुरु कहया,पच्यासी बरस परवाण्य। नाथव कंठि रहिया अता, सेइ सीख्या बील्ह सुजाण्य।।'** सार रूप में हमें एक सौ बीस सबद ही प्राप्त है तथा **पंथ प्राप्त को ही पर्याप्त मानता है।** संतों की वाणी सर्वशास्त्रों का सार प्रस्तुत करती है। जनमानस के समझ में आने वाली भाषा और भाव में गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी कही और उसी से संबल प्राप्त करके जाम्भाणी संत–कवियों ने साहित्य का सृजन किया। भाषा और साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों ने यह स्वीकार किया है कि गुरु जांभोजी की वाणी भवतारणी है तो इन संतों की रचनाएं राजस्थानी साहित्य का अलंकार है।

संक्षेपण को एक कला माना जाता है। सदैव से ही सार–संक्षेप की बहुत महिमा रही है है, कम शब्दों में प्रभावी ढंग से कही हुई बात को लोग ध्यानपूर्वक सुनते हैं जबकि– **बहुभाषिण: न श्रद्दधाति लोक: – 'अधिक बोलने वाले पर लोग विश्वास नहीं करते।'**

वर्तमान समय में लोगों का जीवन अति व्यस्त हो गया है, ऐसे में लोग कम से कम समय में अधिकतम जानकारी प्राप्त कर लेना चाहते हैं। सबदवाणी और जाम्भाणी संत–कवियों की रचनाओं से संग्रहित सूक्तियों के द्वारा इस पुस्तक में कुछ ऐसा ही प्रयास किया गया है। गुरु जांभोजी और जाम्भाणी संत–कवियों का यह कृपा प्रसाद है।

गुरु जांभोजी ने संवत 1508 में अवतार ग्रहण करके मारवाड़ की संतप्त, उपेक्षित, वीरान धरती के मनुजों के हृदयों को आह्लादित करने वाली अपनी वाणी के द्वारा जीवन युक्ति–मुक्ति की राह दिखाई। गुरु जांभोजी के आने से अकाल के थपेड़ो से जुझता यह देश सदैव सुहावना हो गया। वील्होजी ने उमाहो में कहा है– 'संभराथळ रळियांमणो, जित देव तणों दीवाण; – भगवान गुरु जांभोजी के विराजमान होने से समराथल रळियांमणो यानि बहुत ही मनमोहक, सुंदर, सुहावना हो गया है।

गुरु महाराज की सबदवाणी के बाद उनके हुजुरी और परवर्ती संतों की वाणी ने जिज्ञासुओं का मार्गदर्शन किया। डॉ. हीरालाल माहेश्वरी ने अपने शोध प्रबंध में ऐसे 129 जाम्भाणी संत–कवियों को सूचीबद्ध करते हुए उनके जीवन, वाणी और विचारों पर संक्षेप में प्रकाश डाला है– तेजोजी चारण, समसदीनजी, डेल्हजी, पदम भक्तजी, कील्हजी चारण, सुरजनजी हुजूरी, सिवदासजी, एकजी, अमियांदीनजी, जोधोजी रायक, केसौजी देहड़ू, लालचंदजी नाई, कान्होजी बारहट, आसनोजी, कोल्हजी चारण, उदोजी नैण, अल्लूजी कविया, दीन महमंदजी, रायचंदजी सुथार, कुलचंदजी अग्रवाल, राव लूणकरणजी, रेड़ोजी, वाजिंदजी, लक्ष्मणजी गोदारा, आलमजी, रैदासजी धत्तरवाल, भींवराजजी, दीन सुदरदीजी, मेहोजी गोदारा, रहमतजी, गुणदासजी, लाखूजी, वील्होजी, दसुंदीदासजी, आनन्दजी, नानिगजी, लालोजी, गोपालजी, हरियोजी, दुरगदासजी, किशोरजी, कालूजी, केसौदासजी गोदारा, सुरजनदासजी पूनियां, मिठुजी, माखनजी, रामूजी खोड़, रूपोजी वणियाळ, दामोजी, देवोजी, हरिनन्दजी, गोकलजी, रासानंदजी, मुकनजी, सेवादासजी, चतरदासजी, सुदामाजी, हीरानंदजी, हरजी वणियाळ, परमानन्दजी वणियाळ, गोविन्दरामजी बागड़िया, रामललाजी, हरचंदजी ढुकिया, गंगारामजी, सूरतरामजी, मयारादासजी, खैरातीरामजी, विरुणुदासजी, हरिकिसनदासजी, पोकरदासजी, ऊदोजी अड़ींग, मोतीरामजी, लीलकंठजी, गोविंदरामजी

गोदारा, खेमदासजी, साधु मुरलीदासजी, पीताम्बरदासजी, परसरामजी, साहबरामजी राहड़, बिहारीदासजी, शीतलजी, ईश्वरानंदजी गिरी, स्वामी ब्रह्मानंदजी, हिम्मतरायजी, किशोरीलालजीगुप्त, माधवानंदजी, विरधीदासजी, जगमालदासजी, श्रीरामदासजी गोदारा, कुम्भारामजी पूनिया, साधु जगदीशरामजी, असंख्य अज्ञात कवि और इनके अलावा और भी अनेक जाम्भाणी संत-कवि हुए हैं जिनकी बाद में खोज हुई है और अनेक ऐसे भी गुमनाम रह गए हैं जिनका व्यक्तित्व और कृतित्व समाज के सामने नहीं आ पाया,हम इन सबके के चरणों में वंदन करते हैं। पंथ सदैव इनका ऋणी रहेगा।

लगभग पांच वर्ष पूर्व स्नेही सुधिजनो ने प्रेरणा दी की अन्य मत-पंथों की तरह जाम्भाणी साहित्य की सूक्तियां भी आजकल प्रचार-प्रसार के सशक्त माध्यम सोशल मीडिया पर प्रेषित होनी चाहिए। आज्ञा को शिरोधार्य करके पिछले चार पांच सालों से सोशल मीडिया के पटल पर प्रात:काल इन सूक्तियों को प्रेषित करने का सौभाग्य मिला। पढ़ने वालों को इससे कितना लाभ हुआ यह तो वे ही बता सकते हैं परन्तु मुझे इसके कारण बहुत लाभ हुआ,जाम्भाणी साहित्य का आद्योपांत स्वाध्याय का सुअवसर मिला, कभी-कभी तो किसी सूक्ति का सम्यक अर्थ खोजने में पूरा दिन ही लग जाता था और इस तरह जाम्भाणी साहित्य सागर में गोते लगाने की ऐसी सुखद अनुभूति होती थी कि उसको शब्दों में बयान करना असम्भव है। सबदवाणी सूक्ति बनाते समय अर्थ के लिए डॉ हीरालाल माहेश्वरी की श्री ''जम्भवाणी : टीका'' का सहारा लिया गया है।

आचार्य कृष्णानंदजी, आचार्य डॉ संत गोरधनरामजी, सूर्यशंकरजी पारिक, श्रीकृष्णजी खिचड़, डॉ बनवारीलालजी सहू, डॉ कृष्णलालजी देहड़ू, डॉ सुरेन्द्रजी खिचड़ आदि सहित सभी जाम्भाणी साहित्य मर्मज्ञों और विशेषकर मैं जाम्भाणी साहित्य की अविस्मरणीय प्रज्ञा डॉ. हीरालालजी माहेश्वरी का हृदय से आभारी हूँ कि उनके साहित्य ने मुझे गुरु जांभोजी के भगवद् स्वरुप, सबदवाणी और जाम्भाणी संतों की रचनाओं के भावों को सम्यक प्रकार से समझने की अंतर्दृष्टि प्रदान की। डॉ. माहेश्वरीजी का साहित्य मेरे लिए वरदान साबित हुआ।

मेरे जैसे अल्पज्ञ के लिए भगवान गुरु जांभोजी और इन विलक्षण संतों की वाणी को समझने की सामर्थ्य कहाँ थी, इसमें मैं संत परमानंदजी बणियाल के इन शब्दों को अपने लिए अक्षरश: सत्य मानता हूँ -

कै बात सुणी साधाँ कना, कै पोथिया माँ परवाणि।
परमाणंद सुरताण रे, लिखिया सबद सुजाणि।
दीठा बाँच्या मैं लिख्या, सासतर माँ था सोय।
ग्याता कोई वाचि कै, दोस न देइयो मोय।।
मैं तो मांड्या मोह करि, पुस्तक देखि विचारि।
सबदाँ अरथ अनंत है, जाणै सिरजणहारि।।

स्वामी मनोहरदासजी शास्त्री महंत मेहराणा धोरा के शुभाशीष, श्री सुरेन्द्रजी गोदारा तरमाला (पूर्व प्रधान - विश्नोई सभा पंजाब) की शुभकामनाएँ, श्री हरिनारायणजी भादू रोड़ा के सहयोग से यह कार्य सम्पन्न हो पाया। इस पुस्तक के प्रकाशन में निमित्त बने डॉ. विपलेशजी भादू, अबोहर का हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने मेरे अनुरोध को बिना एक पल गंवाए तुरंत स्वीकार किया और उनके शुभ संकल्प से यह पुस्तक पाठकों के हाथों में पहुँची। गुरु जांभोजी और जाम्भाणी संत-कवियों की दिव्य वाणी पाठकों के हृदय और जीवन को आह्लादित करे यह मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ। जाम्भाणी साहित्य अकादमी के सभी सदस्यों और पदाधिकारियों का मैं धन्यवाद और आभार व्यक्त करता हूँ।

मौनी अमावस्या संवत् 2078
मंगलवार 1 फरवरी 2022
मेहराणा धोरा धाम, तह.-अबोहर,
जिला-फाजिल्का (पंजाब)

- विनोद जम्भदास
(प्रवक्ता- जाम्भाणी साहित्य अकादमी, बीकानेर)
गांव-हिम्मतपुरा, तह.-अबोहर,
जिला-फाजिल्का (पंजाब)
jambhdasvinod29@gmail.com
Mob. 9417681063

अनुक्रमणिका

सबदवाणी सूक्तियाँ	:	9-52
जाम्भाणी संत सूक्तियाँ	:	53-228
तेजोजी चारण	:	53
डेल्हजी	:	54
पदमजी	:	54
कील्हजी	:	56
शिवदासजी	:	61
जोधोजी रायक	:	61
कान्होजी	:	62
अज्ञात	:	65
आसनोजी	:	71
कोल्हजी	:	72
उदोजी नैण	:	75
अल्लूजी	:	84
दीनमहमंदजी	:	94
दीन सुदरदीजी	:	95
रायचन्दजी	:	96
राव लूणकरणजी	:	97
आलमजी	:	98
दूरगदासजी	:	104
मेहोजी गोदारा	:	105
रहमतजी	:	106
वील्होजी	:	107
दसुंधीदासजी	:	113
नागिनजी	:	114
गोपालदासजी	:	115
किसोरजी	:	118
कालूजी	:	119
केसोदासजी गोदारा	:	119
सुरजनदासजी पूनियां	:	135
मिठुजी	:	181
माखनजी	:	181
रामूजी खोड़	:	182
रूपोजी बणियाल	:	182
दामोजी	:	182
देवोजी	:	184
हरिनन्दजी	:	184
गोकलजी	:	185
लालचन्दजी	:	190
रासानन्दजी	:	191
मुकनदासजी	:	193
सेवादासजी	:	196
हरजी बणियाल	:	197
परमानन्दजी बणियाल	:	199
हरचन्दजी ढुकिया	:	218
मयारामदासजी	:	219
खेमदासजी	:	219
उदोजी अड़ींग	:	220
साहबरामजी राहड़	:	228

सबदवाणी सूक्तियाँ

जो गुरु होयबा सहजे शीले सबदे नादे विंदे,
तिंह गुरु का आलिंकार पिछाणी।

सहजता, शीलता, शब्द ब्रह्म और जीवात्मा सम्बन्धी ज्ञान समर्थ गुरु के आभूषण है।

छव दरसण जिंहि कै रूपण थापण,
संसार बरतण निजकर थरप्या।

छः दर्शन उसी (परमात्मा) के रूप का वर्णन कर रहे हैं, जिसने अपने हाथों से संसार की रचना की है।

जिंहि कै खरतर गोठ निरोत्तर वाचा।

केवल चर्चा के द्वारा उसकी प्राप्ति कठिन है, क्योंकि उसका पूरा स्वरूप बताने में वाणी असमर्थ है।

गुरु आप संतोषी अवरां पोषी, तत महारस वाणी।

परमात्मा आनन्द स्वरूप है, वह स्वयं इच्छा रहित रहते हुए सम्पूर्ण सृष्टि का पोषण करते है।

के के अलिया बासण होत हुताशन, तामैं खीर दुहीजूं।

जिस प्रकार कच्ची मिट्टी के घड़े में द्रव नहीं ठहर सकता उसी प्रकार अपरिपक्व बुद्धि के मनुष्य ज्ञान ग्रहण नहीं कर सकते।

गुरु ध्याईये रे ज्ञानी तोड़त मोहा। अति खुरसांणी छीजत लोहा।

जिस प्रकार खुरसाणी पत्थर लोहे के जंग को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार गुरु प्रदत्त ज्ञान जीव के मोह को समाप्त कर देता है।

पांणी छल तेरी खाल पखाला, सतगुरु तोड़े मन का साला।

सतगुरु के पास जाकर भ्रमित मन को ठीक करो, यह जीवन तो मशक के पानी के समान अनिश्चित है।

कोपूं न कलापूं, दु:ख न सरापूं।

परमात्मा न किसी पर कुपित होते, न किसी के दु:ख का कारण बनते है। जीव अपने कर्मों का भोग करता है।

मोरी आद न जाणत, महीयल धूवां बखाणत।

कहीं दूर धूंवे को देखकर अग्नि का अनुमान किया जाता है, उसी प्रकार परमात्मा की उत्पत्ति को सम्यक् प्रकार नहीं जाना जा सकता।

सोषी कै पोषी, कै जल बिम्ब धारी।

इस सृष्टि का पोषण और प्रलय करने वाला परमात्मा, इसमें जलबिम्ब की तरह प्रतिभासित होता है।

दया धर्म थापले निज बाला ब्रह्मचारी।

इस बार परमात्मा (श्री जम्भेश्वर) स्वयं बाल ब्रह्मचारी के रूप में दया धर्म की स्थापना के लिये प्रकट हुआ हूं।

अड़सठ तीरथ हिरदा भीतर, बाहर लोका चारूं।

अड़सठ तीर्थ तो हृदय के भीतर है, बाहर तो केवल लोक दिखावा है।

नान्ही मोटी जीया जूंणी, एती सास फुरंतै सारूं।

छोटी-बड़ी जितनी (जीया जूणी) जीव योनियां है, क्षणभर में उन सबकी सम्भाल मैं (परमात्मा) कर लेता हूं।

आला सूका मेल्हे नाहीं, जिहिं दिश करै मुहाणों।
पापे गुन्है वीहै नाहीं, रीस करै रीसाणो।

जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि जिस तरफ बढ़ती है, गीली-सूखी किसी भी वस्तु को नहीं छोड़ती। उसी प्रकार क्रोधवश हुआ मनुष्य पाप-पुण्य का विचार नहीं करता।

अइया लो अपरंपर बाणी, म्हे जपां न जाया जीऊं।

हे लोगों मेरी ब्रह्मवाणी है, हम पैदा हुए जीवों का जप नहीं करते।

नव अवतार नमो नारायण, तेपण रूप हमारा थीयूं।

नारायण के नौ अवतार हुए हैं, वे नवों हमारे ही रूप थे।

भवन-भवन में एका जोती, चुन-चुन लीया रतना मोती।

सभी बातों का सार यह है कि प्रत्येक पिण्ड और ब्रह्माण्ड में एक ही तत्त्व विराजमान है।

हिन्दू होय कै हरि क्यूं ना जंप्यो, कांय दहदिश दिल पसरायो।

हिन्दू होकर तुमने हरि का जप क्यों नहीं किया, क्यों दशों-दिशाओं में मन को फैलाकर रखा है।

जा दिन तेरे होम न जाप न तप न किरिया,
जान कै भागी कपिला गाई।

जिस दिन तुमने हवन, जप, तप, क्रिया कर्म नहीं किये, उस दिन ऐसा समझ कि तेरी बुद्धि रूपी कपिला गाय तेरे शरीर रूपी घर से निकल गई।

कूड़ तणो जे करतब कियो, ना तै लाव न सायो।

झूठ के बल पर जो तुमने कर्म किये है, उनसे तुम्हें कोई लाभ व सहायता मिलने वाली नहीं है।

भूला प्राणी आल बखाणी, न जंप्यो सुररायो।

हे भूले हुए प्राणी तुने व्यर्थ की बातें तो बहुत की पर भगवान का भजन नहीं किया।

छंद कहां तो बहुता भावै, खरतर को पतियायो।

हमें मनभावनी बातें तो बहुत अच्छी लगती है पर सत्चर्चा पर विश्वास नहीं करते।

अति आलस भोला वै भूला, न चीन्हो सुररायो।

हे भाई! तूं अति आलस्य और भूलावै में भूला फिरता रहा, तूने विष्णु भगवान को नहीं जाना।

पारब्रह्म की सुध न जाणी, तो नागे जोग न पायो।

परब्रह्म परमात्मा की तूने खोज नहीं की। केवल नंगे रहने से कोई योगी नहीं हो सकता।

परसराम के अर्थ न मूवा, ताकी निश्चै सरी न कायो।

परसराम (परमात्मा) के शरणागत होकर जो अपने अभिमान को नहीं

छोड़ता, निश्चय ही उसको मुक्ति नहीं मिलती।

दिल साबति हज काबो नैड़े, क्या उलबंग पुकारो।

हे मुसलमानों! यदि तुम्हारा हृदय साफ है तो हज और काबा आपके दिल में है। दिल में बसने वाले को जोर-जोर से आवाज देकर पुकारने की जरूरत नहीं है।

आप खुदायबंद लेखौ मांगे, रे बिन ही गुन्है जीव क्यूं मारो।

मृत्यु उपरांत स्वयं ईश्वर कर्मों का हिसाब मांगेगा, तुम निर्दोष जीवों की हत्या क्यूं करते हो।

थे तक जाणों तक पीड़ न जाणों, बिन परचै बाद निवाज गुजारो।

तुम जीवों को मारना तो जानते हो, किन्तु इससे उन्हें जो पीड़ा होती है उसे नहीं पहचानते। अत: बिना ज्ञान के तुम्हारी नमाज व्यर्थ है।

थे तुरकी छुरकी भिस्ती दावो, खायबा खाज अखाजूं।

तुम जीवों को मारकर खाते हो और स्वर्ग में जाने का दावा करते हो, यह सम्भव नहीं है।

कांहै काजे गऊ विणासो, तो करीम गऊ क्यूं चारी।

तुम गाय को क्यों मारते हो? परमात्मा भी गौ-सेवा करते हैं।

यामैं कौण भया मुरदारूं।

इनमें मरा हुआ कौन है? मृतक जीव या मरे हुए जीव को खाने वाला?

जीवां ऊपर जोर करीजै, अंतकाल होयसी भारूं।

निरीह जीवों पर अत्याचार करोगे तो तुम्हारा अन्त समय दु:खदायी होगा।

जिहिं कै सदकै भीना भीन, तो भेटीलो रहमान रहीम।

संसार के विभिन्न मत-पंथों में एक ही सत्य उद्भाषित हो रहा है, जो इस बात को जान लेता है, उसे ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है।

दिल खोजो दरवेश भईलो, तइया मुसलमानो।

हृदय में ईश्वर की खोज करने पर ही तुम दरवेश और सच्चे मुसलमान बन सकते हो।

हक हलाल पिछाण्यो नाहीं, तो निश्चै गाफल दोरे दीयो।

अगर तुम्हारा जीवन सत्य और न्याय पर आधारित नहीं है तो निश्चय ही तुम नरक में भेजे जाओगे।

खरी न खाटी देह बिणाठी, थीर न पवना पारूं।

पूर्व जन्मों के पुण्यों से मिली हुई यह मानव देही नष्ट हो रही है, इसमें प्राण सदा स्थिर रहने वाले नहीं है।

गुरु न चीन्हों पंथ न पायो, अहल गई जमवारूं।

गुरु को पहचानकर उनके बताये सुपथ न चला, इसलिये तेरा सारा जीवन बेकार चला गया।

अहनिश आव घटंती जावै, तेरा श्वास सबी कसवारूं।

दिनों दिन तेरी आयु घटती जा रही है, एक श्वास भी व्यर्थ नहीं खोना चाहिये।

जा जन मन्त्र विष्णु न जंप्यो, ताको लोही मांस विकारूं।

जिन लोगों ने विष्णु मंत्र का जप नहीं किया उनका रक्त और मांस विकारी हो जायेगा।

जा जन मन्त्र विष्णु न जंप्यो,
गांवै गाडर सहरे सूअर जन्म जन्म अवतारूं।

जिन लोगों ने विष्णु मंत्र का जप नहीं किया, वे गांवों में भेड़ और शहरों में सूअर की योनियों में बार-बार जन्म लेते है।

जा जन मन्त्र विष्णु न जंप्यो, ते न उतरिबा पारूं।

जिन लोगों ने विष्णु मंत्र का जप नहीं किया, वे भवसागर से पार नहीं उतर सकते।

तातै तंत न मंत न जड़ी न बूंटी, ऊंडी पड़ी पहारूं।

अगर तूनें भगवान का स्मरण नहीं किया तो अन्त समय में तूं गहरे संकट में पड़ जाएगा, उस समय तंत्र-मंत्र, जड़ी-बूटी कुछ भी काम नहीं आयेंगे।

विष्णु को दोष किसो रे प्राणी, तेरी करणी का उपकारूं।

कर्मफल भोग करते समय भगवान को दोष नहीं देना चाहिये, ये तेरे स्वयं के किये हुए कर्मों का ही फल है।

मोरा उपख्यान वेदूं कण तत भेदूं, शास्त्रे पुस्तके लिखणा न जाई।

मेरा कथन वैदिक ज्ञान है, जो आत्म तत्त्व का भेद बताता है। सम्यक् प्रकार से उस तत्व का स्वरूप शास्त्रों और पुस्तकों में नहीं लिखा जा सकता।

मेरा सबद खोजो, ज्यूं सबदे सबद समाई।

परमतत्व को प्राप्त करने के लिये उसे मेरे सबदों में खोजो।

ओछा कबही न पूरूं, कागण का जाया कोकला न होयबा।

ओछी मानसिकता वालों से कभी उत्तम कार्य नहीं हो सकता। कौवी से कभी कोयल का जन्म नहीं हो सकता।

कृष्ण चरित बिन, बुगली न जनिबा हंसूं।

बुगले के घर पर कभी हंस का जन्म नहीं हो सकता, पर भगवान की कृपा हो जाये तो मनुष्य हीन वृत्ति त्यागकर शुद्ध बन सकता है।

ज्ञानी के हृदय प्रमोद आवत, अज्ञानी लागत डांसूं।

सत्चर्चा सुनकर ज्ञानी के हृदय में तो खुशी होती पर अज्ञानी को यह बुरी लगती है।

सुरमा लेणा झीणां सबदूं, म्हे भूल न भाख्या थूलूं।

मेरी वाणी प्रतिश्वास शब्द-ब्रह्म का बखान कर रही है, हम भूल कर भी मिथ्या-भाषण नहीं करते।

सोपति बिरखा सींच प्राणी, जिंह का मीठा मूल समूलूं।

जैसे वर्षा सभी प्राणियों को तृप्त कर देती, वैसे अपने व्यवहार से सभी को सुख पहुंचायो। मीठे फल देने वाले धर्म रूपी वृक्ष का सदैव सिंचन करो।

पाते भूला मूल न खोजै, सींचो कांय कुमूलूं।

बाहरी दिखावे में भूला हुआ जीव मूल तत्त्व की खोज नहीं करता। भ्रमित जीव ही अशुभ कर्मों का उपार्जन करता है।

विष्णु-विष्णु भण अजर जरीजै, यह जीवन का मूलूं।

काम क्रोधादि को वश में करके भगवान विष्णु का जप करना, यही जीवन का मूल कर्त्तव्य है।

खोज प्रांणी ऐसा विनाणी, केवल ज्ञानी,
ज्ञान गहीरूं जिंह के गुणे न लाभत छेहूं।

मूल तत्त्व की प्राप्ति हेतु हे प्राणी! तूं इसके जानने वाले विज्ञानी, कैवल्य ज्ञानी, ज्ञान-गम्भीर और अनन्त गुणवान पुरुष की खोज कर।

गुरु गेवर गरवा शीतल नीरूं, मेवा ही अति मेऊं।

गहर-गम्भीर महिमावन्त सद्गुरु अपने जिज्ञासु शिष्यों को ज्ञान रूपी शीतल जल, मीठे मेवे प्रदान करता है।

हिरदै मुक्ता कमल संतोषी, टेवा ही अति टेऊं।

गुरु जीवनमुक्त, संतोषी अन्त:करण वाला और आश्रितों का परम आश्रय है।

चढ़कर बोहिता भवजल पार लंघावै। सो गुरु खेवट खेवा खेहूं।

असली गुरु तो वही है जो अपनी कृपा रूपी नौका में तुझे बैठाकर इस भवसागर से पार लंघा दे।

लोहा नीर किसी बिध तरिबा, उत्तम संग सनेहूं।

सत्संगति मनुष्य को पार-उतार सकती है जिस प्रकार लकड़ी में लगा हुआ लोहा नदी में तैर जाता है।

तइया सासूं, तइया मांसूं, रक्तू रूहीयूं।
खीरूं, नीरूं, ज्यूं कर देखूं।

प्राणवायु, मांस, रक्त और जीवात्मा सब में एक जैसी है। पानी में मिले हुए दूध की भांति सभी जीव आत्मा के रूप में एक-दूसरे से अभिन्न है।

ज्ञान अंदेसूं, भूला प्राणी कहै सो करणो।

दुविधा ग्रस्त जीव किसी प्रकार का निर्णय करने में असमर्थ रहता है, इसलिये उसे मैं जो कहता हूँ उसे वैसा ही करना चाहिये।

अइ अमाणो, तत समाणो।

अरे! जो अहंकार रहित होता है, वही आत्म-तत्त्व को जान सकता है।

अइया लो म्हे पुरुष न लेणा नारी, सोदत सागर सो सुभ्यागत।

आत्म तत्त्व के परिपेक्ष्य में स्त्री-पुरुष का कोई भेद नहीं है। जो आत्मतत्त्व की खोज करता है, वही सौभाग्यशाली है।

भीखी लो भिखियारी लो, जे आदि परमतंत लाधो।

अगर तुम्हें परमतत्त्व की प्राप्ति करनी है तो, जैसे भीखारी भीख मांगता, उस प्रकार विनम्र बनकर व मानापमान को त्यागकर सत्पुरुष के सामने भिक्षुक बनना पड़ेगा।

जाकै वाद विराम विरांसो सांसौ, तानै कौन कहसी साल्हिया साधो।

वाद-विवाद में उलझे हुए, अशांत, संशयग्रस्त व्यक्ति को सच्चा साधक कौन कहेगा।

जां कुछ-जां कुछ तां कुछ न जांणी,
ना कुछ-ना कुछ ता कुछ जाणी।

ब्रह्म के विषय में कोई जानने का दावा करता है तो वह कुछ नहीं जानता, इस विषय में जो मौन है, समझो वह कुछ जानता है।

ना कुछ-ना कुछ अकथ कहाणी, ना कुछ-ना कुछ अमृत वाणी।

सभी शास्त्र ब्रह्म के विषय में नेति-नेति कहते हैं, यहां तक कि वेद भी उसका स्वरूप निरूपण करने में असमर्थ है।

मरणत माघ संघारत खेती, के के अवतारी रोवत राही।

सभी का मृत्यु मार्ग पर जाना निश्चित है, फिर भी कुछ दुष्टों का पाप अधिक बढ़ जाता है तो अवतार लेकर भगवान अपने सृजित जीवों का दु:खी मन से संहार करते हैं।

जड़िया बूंटी जे जग जीवै, तो बैदा क्यूं मर जाही।

मृत्यु अनिवार्य है, इसके आने पर किसी प्रकार की औषधि और इसके जानने वालों (वैद्यों) का भी जोर नहीं चलता।

खोज पिरांणी ऐसा बिनाणी, नुगरा खोजत नाही।

हे प्राणी! तूं ऐसे तत्त्व की खोज कर जो मृत्यु से परे है पर अज्ञानी लोग ऐसा प्रयास नहीं करते।

जां कुछ होता ना कुछ होयसी, बल कुछ होयसी तांही।

अजर-अमर परमात्मा की उपस्थिति में सृष्टि का सृजन, प्रलय और फिर सृजन का चक्र चलता रहता है।

रूप अरूप रमूं, पिण्डे ब्रह्मण्डे, घट-घट अघट रहायो।

मैं (परमात्मा) साकार और निराकार दोनों ही रूपों में पिण्ड और ब्रह्माण्ड में रमण कर रहा हूँ। घट-घट में मेरा ही रूप व्याप्त है।

अनन्त जुगां में अमर भणीजूं, ना मेरे पिता न मायो।

अनन्त युग बीतने पर भी मेरे स्वरूप में परिवर्तन नहीं होता। मैं स्वयंभू हूँ, मेरा सृजन करने वाला कोई नहीं है।

जहां चीन्हो तहां पायो।

जिसने भी परमात्मा की खोज की है, उसे वह अवश्य मिला है।

अड़सठ तीरथ हिरदा भीतर, कोई-कोई गुरुमुख बिरला न्हायो।

ईश्वर प्राप्ति के लिये तीर्थों में जाना आवश्यक नहीं है, उसे अपने हृदय में खोजना पड़ता है। इस भेद को कोई विरले ही गुरुमुखी लोग जानते है।

जां-जां दया न मया, तां-तां विकरम कया।

जिन लोगों के हृदय में दया और प्रेमभाव नहीं है, उनके सभी कर्म दूषित है।

जां-जां आव न बैसूं, तां-तां सुरग न जैसूं।

जिनके मन में दूसरों के प्रति आदर-सत्कार का भाव नहीं है, उन्हें स्वर्ग नहीं मिल सकता।

जां-जां जीव न जोती, तां-तां मोख न मुक्ति।

जो प्रत्येक जीव में भगवान के दर्शन नहीं करता, उसे मुक्ति नहीं मिल सकती।

जां-जां पाले न शीलूं, तां तां कर्म कुचीलूं।

जो शील का पालन नहीं करते, उनके सभी कर्म बुरे है।

जां-जां खोज्या न मूलूं, तां-तां प्रत्यक्ष थूलूं।

जिसने अपने हृदय में स्थित आत्मतत्त्व की खोज नहीं की, उनका ज्ञान थोथा है।

जां-जां भेद्या न भेदूं, तो सुरगे किसी उमेदूं।

जिसने अद्वैत ब्रह्म के स्वरूप को नहीं जाना, उसको स्वर्ग प्राप्ति की आशा नहीं करनी चाहिये।

जां-जां घमण्डै स घमण्डूं, ताकै ताव न छायो, सूतै सास नसायो।

जो अहंकार के मद में चूर है, जिसे भले-बुरे का ज्ञान नहीं है, उसका सारा जीवन व्यर्थ चला गया।

जिहिं कै सार असारूं, पाप अपारूं, थाघ अथाघूं, उमग्या समाघूं।

इस संसार में एक परमात्मा ही सार तत्त्व है, जिसका सार व थाह पाना मुश्किल है। उसकी प्राप्ति के मार्ग पर चलना आनन्द प्रदान करने वाला है।

गगन पयाले, बाजत नादूं, माणक पायो,
फेर लुकायो, नहीं लखायो।

मनुष्य के अन्दर सबद-ब्रह्म का अनाहत नाद गूंजता रहता है, वहीं आत्म-ज्योति प्रकाशित है, पर ये छुपे हुए है। साधना के बिना इसका अनुभव नहीं किया जा सकता।

दुनियां राती वाद विवादूं, वाद विवादे दाणूं खीणा।

दुनियां वाद-विवाद में लगी हुई है, वाद-विवाद से तो अनेक शक्तिशाली दानव भी नष्ट हो गये।

सोई उत्तम लेरे प्राणी, जुगां जुगांणी सत करि जांणी।

हे प्राणी! तूं ऐसे तत्त्व को ग्रहण कर जो अनन्त युगों तक स्थिर रहता है।

ताकै ज्ञान न जोती, मोक्ष न मुक्ति।
याके कर्म इसायो, तो नीरे दोष किसायो।

जिनके हृदय में ज्ञान-ज्योति प्रज्ज्वलित नहीं है, उनको मुक्ति नहीं मिल सकती। उनके कर्म ही ऐसे है, इसमें किसी का दोष नहीं है।

साहिल्या हुवा मरण भय भागा, गाफिल मरणै घणा डरै।

जो सच्चा साधक है, उसको मृत्यु का भय नहीं है। अज्ञानी पुरुष मौत से बहुत डरता है।

रतन काया सोभंती लाभै, पार गिरायै जीव तिरै।

अमूल्य आत्मतत्त्व की प्राप्ति होने पर जीव मुक्त हो जाता है।

पार गिरायै सनेही करणी।

यदि अपना भला चाहते हो तो दूसरों के प्रति भलाई करो।

जपो विष्णु न दोय दिल करनी। जपो विष्णु न निंदा करनी।
मांडो कांध विष्णु कै सरणै।

पर निंदा और दुविधा-वृत्ति का त्याग करके एकमात्र विष्णु के शरण होकर उनका स्मरण कर।

अतरा बोल करो जे साचा, तो पार गिराय गुरु की वाचा।

मैं जो कहता हूँ अगर तुम सत्य में उस पर चलते हो तो मैं तुम्हें उद्धार का वचन देता हूँ।

रवणा ठवणा चवरां भवणां,
ताहि परे रै रतन काया छै, लाभै किसे विचारे।

चौदह भवन का ऐश्वर्य भी आत्मतत्त्व की प्राप्ति में सहायक नहीं हो सकता है, वह इनसे परे की चीज है।

जे नवीये नवणी, खवीये खवणी, जरिये जरणी, करिये करणी।
तो सीख हुवा घर जाइये।

जो विनम्र है, क्षमावान है, काम क्रोधादि जिसके वश में है, जो सत्कार्य करता है और जो सद्‌गुरु की आज्ञा में चलता है, उसे परम गति मिलती है।

गुरु प्रसादे केवल ज्ञाने, धर्म अचारे,
शीले संजमे, सतगुरु तूठे पाइये।

शिष्य के धर्माचरण से, शील और संयम के पालने तथा सेवा से संतुष्ट होकर सद्‌गुरु उसे कैवल्य ज्ञान (आत्म तत्त्व) प्रदान करते है।

आसण बैसण कूड़ कपटण, कोई-कोई चीन्हत वोजूं बाटे।

साधना-पथ सहज है, गुरु गद्दी पर बैठकर झूठ और कपट का सहारा लेने वाले इसे नहीं पा सकते है, इस सहज पथ को तो कोई विरला ही पहचानता है।

वोजूं बाटे जे नर भया, काची काया छोड़ कैलाशे गया।

जो इस सहज पथ पर चलते है, वे नश्वर शरीर को छोड़कर मोक्ष प्राप्त करते है।

राज न भूलीलो राजेन्द्र, दुनी न बंधो मेरू।
पवना झौले बीखर जैला, धुंवर तणा जै लोरूं।

धन ऐश्वर्य के अहंकार में पड़कर इस दुनिया में मत फंसो। गहरी छाई हुई धुंध हवा के एक झौंके से बिखर जाती है। ऐसे ही आपका यह वैभव एक पल में चला जाएगा।

आडा डम्बर केती वार विलम्बण, यो संसार अनेहूँ।

जैसे बादल आकाश में प्रकट और विलिन होते रहते हैं, ऐसे ही यह संसार भी अस्थिर है, इसके मोह में फंसना नहीं चाहिये।

भूला प्राणी विष्णु जपो रे मरण विसारो केहूं।

हे प्राणी! विष्णु का जप करो, तुम मृत्यु को क्यों भूल गये हो।

म्हां देखता देव दाणूं सुर नर खीणा, जंबू मंझे राचि न रहिबा थेहूं।

हमारे देखते-देखते देव-दानव, सुर-नर सब चले गये, इस संसार में कोई स्थिर नहीं है।

नदिये नीर न छीलर पाणी, धूंवर तणा जे मेहूं।

ओस का पानी बरसता हुआ तो प्रतीत होता है, पर उससे नदी-तालाब नहीं भर सकते, उसी प्रकार मात्र दिखावा करने से कुछ प्राप्त होने वाला नहीं है।

घण तण जीम्यां को गुण नांहि, मल भरिया भण्डारूं।

आवश्यकता से अधिक खाने से कोई लाभ नहीं है, इससे तो शरीर में मल की वृद्धि ही होती है।

घणा दिनां का बड़ा न कहिबा, बड़ा न लंघिबा पारूं।

बड़ी उम्र वाला गुणहीन व्यक्ति बड़ा नहीं कहा जा सकता और न ही वो पार उतर सकता है।

उत्तम कुली का उत्तम न होयबा, कारण किरिया सारूं।

श्रेष्ठ कुल में जन्म लेने मात्र से ही कोई श्रेष्ठ नहीं बन जाता। इसमें कर्म ही प्रधान है।

गोरख दीठा सिद्ध न होयबा, पोह उतरबा पारूं।

महापुरुष के देखने मात्र से तुम्हें सिद्धि नहीं मिल सकती, इसके लिये तुम्हें उनके बताये मार्ग पर चलना होगा।

कलयुग बरतै चेतो लोई, चेतो चेतण हारूं।

कलियुग के इस विषम काल में आयु शीघ्रता से समाप्त हो रही है, इसलिये हे जागरूक प्राणी! सचेत, सावधान हो जाओ।

पढ़ कागल वेदूं शास्त्र सबदूं, पढ़ सुन रहिया कछु न लहिया।

यदि किसी ने वेद, शास्त्रों और ज्ञान-वचनों को पढ़ा, विद्याध्यन भी किया पर उस पर चिन्तन-मनन नहीं किया तो उसे कुछ भी हासिल नहीं होगा।

ज्ञाने ध्याने नादे वेदे जे नर लेणा, तत भी ताही लीयो।

जो व्यक्ति ज्ञान, ध्यान और अपने अन्तर की आवाज की साधना करता हुआ आत्मचिन्तन करता है, तत्त्व की प्राप्ति उसे ही होती है।

करण, दधीच, सिव र बलिराजा, हुई का फल लियो।

मनुष्य को अपने कर्मों का फल अवश्य मिलता है। कर्ण, दधीचि, राजा शिवि और राजा बलि के महान कार्यों के फलस्वरूप उनकी कीर्ति आज तक व्याप्त है।

तारादे रोहितास हरिचन्द, काया दसबन्ध दीयो।

महाराज हरिश्चन्द्र, महारानी तारादे और राजकुमार रोहितास ने परोपकार के लिये अपना शरीर ही दान में दे दिया।

विष्णु अजप्यां जनम अकारथ, आके डोडा खींपे फलीयो।

विष्णु के जप-स्मरण के बिना मनुष्य का जन्म उसी प्रकार व्यर्थ है, जैसे आक के फल और खींप की फलियां किसी काम नहीं आती।

नानारे बहु रंग न राचै काली ऊंन कुजीऊं।

दुष्ट बुद्धि का व्यक्ति अच्छी बात को ग्रहण नहीं करता, जैसे काले रंग की ऊन पर कोई दूसरा रंग नहीं चढ़ता।

देखत अन्धा सुणता बहरा, तासो कछु न बसाई।

अनजान को तो कोई बात समझाई जा सकती है पर जो देखते हुए भी नहीं देखना चाहता और सुनते हुए हुए भी नहीं सुनना चाहता, उनका कोई उपाय नहीं है।

परम तंत है ऐसा, आछै उरबार न ताछै पारूं।

परमतत्त्व अगम्य है, उसका आर-पार नहीं पाया जा सकता।

मीन का पंथ मीन ही जांणै, नीर सुरंगम रहीयूं।

मछली का मार्ग मछली ही जान सकती है क्योंकि वह जल में रहती है। इसी प्रकार परम तत्व में आत्मसात हुए बिना उसे जाना नहीं जा सकता।

सिध का पंथ साधू जाणत, बीजा बरतन बहियो।

परमात्मा को प्राप्त करने का उपाय कोई साधक ही जानता है बाकी तो सांसारिक क्रियाकलापों में रत है।

अनन्त कोड़ गुरु की दावण विलम्बी, करणी साच तरीलो।

अनन्त करोड़ लोग गुरु आज्ञा को शिरोधार्य करके, सत्कर्म करते हुए पार उतर गए।

भगवीं टोपी थलसिर आयो, हेत मिलाण करीलो।

मैं भगवीं टोपी पहनकर साधु के वेष भी इस धरती पर आया हूँ। मेरा यहाँ आने का हेतू बिछुड़े हुए जीवों का परमात्मा से मिलन करवाना है।

अम्बाराय बधाई बाजै, हृदय हरि सिंवरीलो।

सर्वत्र भगवान की महिमा प्रकाशित हो रही है। भगवान की कृपा के लिये हर्षित होते हुए उसका निरन्तर स्मरण करो।

कृष्ण मया चोखंड किरसांणी, जम्बूदीप चरीलो।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का रचयिता भगवान है, ऐसा भाव रखकर इस पृथ्वी पर विचरण करो।

ऊंनथ नाथ कुपह का पोहमा आंण्या, पोह का धुर पहुंचायो।

मैंने (गुरु जाम्भोजी) उदण्ड लोगों को शिक्षा देकर सुमार्ग पर लगाया है। सुमार्ग पर चलने के बाद ही मुक्ति संभव होती है।

मौरे धरती ध्यान वनस्पति वासो, ओजूं मंडल छायो।

यह धरती मेरे ध्यान में है, पेड़-पौधे आदि वनस्पति में मेरा वास है। आकाश तक सर्वत्र में ही छाया हुआ हूँ।

कण बिन कूकस कांय पीसो, निश्चै सरी न कायो।

अन्नरहित अपशिष्ट को कूटने से अन्न नहीं प्राप्त होता। व्यर्थ के कार्य करने से निश्चय ही तुम्हें लाभ नहीं होगा।

जो ज्यूं आवै सो त्यूं थरप्या, साचा सूं सत भायो।

भाव के अनुसार ही फल प्राप्ति होती है। सत्यवादी भगवान को प्रिय है।

सुकरत साथ सगाई चालै।

मरने के बाद सत्कर्म ही साक्षी के रूप में मनुष्य के साथ चलते हैं।

इहि खोटे जन मन्तर स्वामी, अहनिश तेरो नाम जपंतो।

मरणोपरांत अपनी दुर्गति देखकर जीव कहता है कि अगर मुझे मनुष्य शरीर की अमूल्यता का पता लग जाता तो मैं दिन-रात भगवान का स्मरण करता।

सुरपति साथ सुरासुरंग, सुरपति साथ सुरासुंग मेलो,
निज पोह खोज ध्याइये।

सच्चे और श्रेष्ठ लोगों से भगवान प्रसन्न होते है। ऐसे ही लोग भगवान को प्राप्त करते हैं। इसलिये सत्मार्ग की खोज करो और उस पर चलो।

गुरुमुख पवन उडाइये, पवणा डोले तुस उडैलो।

समर्थ गुरु अपने शिष्य के अज्ञान को इस प्रकार हटा देता है जैसे कचरा मिश्रित अन्न को हवा में उछालने पर हवा कचरे को उड़ा देती है।

यूं क्यूं भलो जे आप न जरिये, औरां अजर जराइये।

काम क्रोधादि विकारों को जो स्वयं वश में नहीं कर सका, दूसरों को वह इसका उपदेश देने का अधिकारी नहीं है।

पहले किरिया आप कमाइये तो औरां न फरमाइये।

पहले स्वयं को कोई कार्य करना चाहिये, तब ही दूसरों को उसको करने के लिये कहना चाहिये।

जो कुछ कीजै मरणै पहले, मत भल कहि मर जाइये।

शुभकर्म शीघ्रता से कर लेने चाहिये, पता नहीं कब मृत्यु आकर दबोच ले।

शील बिबरजीत जीव दुहेलो, यमपुरी ये सताइये।

जिसके जीवन में शील नहीं है उसे इस जीवन में भी दु:ख उठाना पड़ेगा और मरने के बाद नरक प्राप्त होगा।

रतनकाया मुख सूवर बरगो, अबखल झंखे पाइये।

अमूल्य मानव शरीर जिसमें जीवात्मा का वास है, उसे पाकर जो मुंह से व्यर्थ बकवाद करते हैं, तो गन्दगी में मुंह मारने वाले सुअर और उन में क्या अन्तर है।

निज पोह पाखो पार असी पुर, जाणी गीत विवाहे गाइये।

परमात्मप्राप्ति के अपने लक्ष्य को पहचाने बिना मानव के सभी कर्म विवाह में गाए जाने वाले गीतों के समान असार है।

भरमी भूला वाद-विवाद, आचार-विचार न जाणत स्वाद।

लोग भ्रमित होकर वाद-विवाद में उलझे रहते हैं, वे शुद्ध आचरण और पवित्र विचारों के उत्तम फल को नहीं जानते।

कीरत के रंग राता मुरखा मन हठ मरै,
ते पार गिराये कित उतरै।

संसार में केवल यश प्राप्ति ही जिनका लक्ष्य है, वे मनहठी और मूर्ख है। वे पार कैसे उतर सकते हैं?

भल मूल सींचो रे प्राणी, ज्यूं का भल बुद्धि पावै।
जामण-मरण भव काल जु चुकै तो आवागवण न आवै।

मूल तत्त्व (परमात्मा) का स्मरण करना चाहिये, जिससे बुद्धि पवित्र होती है और आवागमन से छुटकारा मिल जाता है।

हरि परिहरि की आण न मानी, झंख्या झूल्या आलूं।

परमात्मा की अवज्ञा करके तुमने उनकी मर्यादा को नहीं माना, संसार में व्यर्थ ही बकवाद करता हुआ भटकता रहा।

देवा सेवा टेव न जाणी, न बंच्या जम कालूं।

अगर तुमने सत्पुरुषों की संगति न की तो तुम्हें यमपाश से बचने का उपाय कौन बताएगा?

भूलै प्राणी विष्णु न जंप्यो, मूल न खोज्यो,
फिर-फिर जोया डालूं।

हे भूले हुए प्राणी! तुमने सांसारिक सुखों की प्राप्ति का प्रयत्न तो किया पर भगवान का भजन और मूल तत्त्व (परमात्मा) की खोज नहीं की।

जीव र पिंड बिछोड़ो होयसी, ता दिन थाक रहै सिर मारूं।

मृत्यु के समय जब जीव इस शरीर से बिछुड़ेगा, तब तेरा कुछ भी वश नहीं चलेगा।

जां जां वाद विवादी अति अहंकारी लबद सवादी,
कृष्ण चरित बिन नाहिं उतरिबा पारूं।

जो अति वाद-विवाद और अहंकार करते हैं, नैत्रों और जीव्हा पर जिनका वश नहीं है, बिना भगवान की कृपा के उनका उद्धार सम्भव नहीं है।

कवण न हूवा कवण न होयसी, किण न सहया दुःख भारूं।

यह संसार दुःखालय है। यहां ऐसा कौन हुआ है और कौन होगा जिसने दुःख सहन नहीं किया है।

कवण न गइया कवण न जायसी, कवण रहया संसारूं।

यह संसार चलायमान है। यहां सदा रहने के लिये कोई नहीं आता।

भूली दुनिया मर मर जावै, न चीन्हों करतारूं।

भारी भूल में पड़ी हुई दुनियां जन्मती है और मरती है पर परमात्मा को प्राप्त करने का प्रयास नहीं करती।

विष्णु-विष्णु तूं भण रे प्राणी, बल-बल बारम्बारूं।

हे प्राणी! तूं विष्णु का जप कर। निरन्तर और बार-बार उनका ही स्मरण कर।

कसणी कसबा भूल न बहबा, भाग परापति सारूं।

कर्म पूरी लग्न और सावधानी के साथ करने चाहिये, क्योंकि कर्मों के अनुसार ही फल प्राप्ति होती है।

फोकट प्राणी भरमे भूला, भल जे यो चीन्हों करतारूं।

व्यर्थ में ही भ्रम में पड़े हुए लोगों के द्वारा कभी परमात्मा की प्राप्ति नहीं की जा सकती।

खेत मुक्त ले कृष्ण अर्थो। जे कंध हरै तो हरियो।

भगवदार्पण कार्य में मरना उत्तम है।

विष्णु जपन्ता जीभ जु थाकै, तो जीभड़ियां बिन सरियों।

भगवान का नाम जप करते हुए यदि जीभ थकती है, तो ऐसी जीभ के बिना भी काम चल सकता है।

हरि-हरि करता हरकत आवै, तो ना पछतावो करियो।

नाम स्मरण करते हुए यदि बाधाएं आती है तो पछतावा नहीं करना चाहिये।

भीखी लो भिखियारी लो जे आदि परमतत लाधो।

परमतत्व की प्राप्ति के इच्छुक को मानापमान में सम रहना चाहिये।

बल बल भणत व्यासूं। नाना अगम न आसूं।

व्यास आदि विद्वान ऋषि मुनि परमतत्त्व के स्वरूप का बार-बार वर्णन करते हैं, किन्तु उसको अगम्य जानकर नेति-नेति कह उठते हैं।

नाना उदक उदासूं। बल बल भई निरासूं।

परमतत्व अत्यन्त गूढ़ है, इसकी थाह पाने वालों को निराश होना पड़ता है।

गल में पड़ी परासूं। जां जां गुरु न चीन्हों।

समर्थ गुरु के बिना गले में पड़ी यमपाश से कौन छुड़ा सकता है।

तइया सींच्या न मूलूं। कोई कोई बोलत थूलूं।

परमतत्त्व की प्राप्ति के बिना जो इसके बारे में कथन कहते है, वे मिथ्याभाषण करते हैं।

रे रे पिंड स पिंडू। निरधन जीव क्यूं खंडू।

अरे भाई! जैसे तुझे अपना शरीर प्यारा है, वैसे अन्य जीवों को भी है, फिर तुम निर्दयता से क्यों जीव हत्या करते हो?

उत्तम संग सुसंगू। उत्तम रंग सुरंगू।

सत्संगति ही उत्तम संगति है, आत्मज्ञान का रंग ही उत्तम रंग है।

उत्तम लंग सुलंगू। उत्तम ढ़ंग सुढ़ंगू।

संसार-सागर को लांघना ही उत्तम लांघना है, मुक्ति का उपाय ही उत्तम उपाय है।

सहज सुलीलूं। सहज सुपंथूं। मरतक मोक्ष दवारूं।

आत्मतत्त्व की प्राप्ति का मार्ग सहज ही आनन्ददायी है, इस पर चलने वाले मरणोपरान्त मोक्ष की प्राप्ति करते हैं।

तइया सांसू तइया मांसू। तइया देह दमोई।
उत्तम मध्यम क्यूं जाणीजै? बिबरस देखो लोई।

सबके वही श्वास है, वही मांस है, वही देह, वही प्राण है, फिर किसी को उत्तम और किसी को नीच क्यों समझते हो?

दिल दिल आप खुदायबंद जाग्यो। सब दिल जाग्यो सोई।

प्रत्येक के दिल में परमात्मा का वास है, सब के हृदय में भगवद्-ज्योति प्रकाशित है।

नाम विष्णु कै मुसकल घातै। ते काफर सैतानी।

जो लोग परमात्मा के नाम-जप में बाधाएं डालते हैं वे काफिर और शैतान है।

रण मध्ये से नर रहियो। ते नरा अडरा डरूं।

जो आत्मस्थ होकर सभी प्रकार की कठिनाइयों, बाधाओं में अडिग रहता है, वह निश्चय ही मृत्यु के डर को पार कर जाता है।

ज्ञान खड़गूं जथा हाथे। कोण होयसी हमारा रिपूं।

ज्ञान रूपी तलवार से काम क्रोधादि शत्रुओं का संहार करो, जिसके हाथ में ज्ञान की तलवार है उसका कोई शत्रु नहीं हो सकता।

कर कृसाणी बेफायत संठो। जो जो जीव पिंडे नीसरणा।

मनुष्य को व्यर्थ के कामों में समय बर्बाद न करके सार-संचयन करना चाहिये, पता नहीं कब जीव शरीर को छोड़कर निकल जाए।

सुरां पुनां तेतीसां मेलो। जे जीवन्ता मरणो।

जीवन मुक्त पुरुषों को ही देवताओं का आश्रय और तेतीस करोड़ जीवों का साथ प्राप्त होता है।

बादीलो अहंकारीलो। वै भार घणा ले मरणो।

जो हठी और अहंकारी है वे पापों का बोझ लेकर मरेंगे।

मिनखा रै ते सूतै सोयो खूलै खोयो। जड़ पाहन संसार बिगोयो।

हे मनुष्य! तुमने मनमाना आचरण करते हुए आलस्यवश होकर सोते हुए सारा जीवन खो दिया।

निरफल खोड़ भिरांति भूला। आस किसी जा मरणो।

तूं भ्रमवश इस संसार रूपी वीरान जंगल में किस आसा से भटक रहा है, यहां तो मृत्यु अवश्यम्भावी है।

निश्चै छेह पड़ेलो पालो। गोवलवास जू करणो।

इस संसार से जाते समय निश्चित ही तूं अकेला पड़ जाएगा। यह जगत गोवलवास के समान स्थिर नहीं है।

गोवलवास कमाय ले जिवड़ा, सो सुरगा पुर लहणा।

जो इस संसार को अस्थिर समझकर मोहरहित होकर शुभ कर्म करते है उन्हें सद्‌गति प्राप्त होती है।

कुपात्र कू दान जु दीयौ। जाणै रैण अंधेरी चोर जु लीयो।

कुपात्रों को दिया हुआ दान, अंधेरी रात में चोरों द्वारा चुराई गई वस्तु के समान है।

दान सुपाते बीज सुखेते। अमृत फूल फलीजै।

सुपात्रों को दिया गया दान उन बीजों के समान है जो उपजाऊ खेतों में बोए जाकर अमृत के समान फल देते है।

काया कसोटी मन जो गूंटो। जरणा ढ़ाकण दीजै।

शरीर को ज्ञान की कसौटी पर कसकर मन को जोगी बनाओ तथा काम क्रोधादि को वश में करो।

थोड़े माहिं थोड़ेरो दीजै। होते नाह न कीजै।

यदि पास में थोड़ी वस्तु है तो उसमें से थोड़ी दे देनी चाहिये पर होते हुए ना नहीं करनी चाहिये।

जोय-जोय नाम विष्णु के बीजै। अनन्त गुणा लिख लीजै।

जो वस्तु निष्काम भाव से भगवदार्पण करके दी जाती है, वह अनन्त गुणा फलित होती है।

घट ऊंधै बरसत बहु मेहा। नीर थयो पण ठालूं।

यदि तत्त्वप्राप्ति के प्रयास उल्टे है तो सिद्धि नहीं मिल सकती जैसे औंधे घड़े पर भारी बरसात होने पर भी वह खाली रहता है।

जपिया तपिया पोह बिन खपिया। खप खप गया इवांणी।

सुपथ पर न चलकर मनमुखी जप-तप करने वाले नष्ट हो जाते है, तत्त्वप्राप्ति नहीं होती।

तउवा दान जू कृष्णी माया। और भी फूलत दानों।

भगवान की कृपा का दान मिल जाये तो उसके समान फलित होने वाला कोई दूसरा दान नहीं है।

तेऊंपार पहूंता नाही। ते कीयो आपो भांणो।

वे पार नहीं पहुंच सकते जिन्होंने अपने सामर्थ्य का अहंकार किया है।

पहलू प्रहलादा आप पतलीयो, दूजा काजै काम बिटलीयो।

भीषण कष्ट सहकर पहले प्रहलाद ने अपने को प्रमाणित किया, फिर वे दूसरों के उद्धारक बने।

पढ़ कागल वेदूं शास्त्र सबदूं। भूला भूले झंख्या आलूं।

अनेक पुस्तकों और वेद-शास्त्रों को पढ़कर तथा ज्ञान-कथन सुन पढ़कर भी तूं व्यर्थ की बातें करता है और झूठ बोलता है इससे बड़ी भूल और क्या हो सकती है।

अहनिश आव घटंती जावै। तेरा सास सबी कसवारूं।

दिन-रात तेरी आयु घटती ही जाती है, एक सांस की देरी करना भी अब ठीक नहीं है।

एक दु:ख लक्ष्मण बंधु हइयो। एक दुख बूढ़े घर तरणी अइयो।

लक्ष्मण जैसे भाई से वियोग और बूढ़े आदमी के तरुण स्त्री का होना बड़े दु:ख का कारण है।

एक दु:ख बालक की मां मुइयो। एक दु:ख औछे को जमवारूं।

बच्चे की मां मर जाना उसके लिये दु:ख है। हीन, नीच प्रति वाले ओछे व्यक्ति का जीवन दु:ख का कारण है।

बिखा पटंतर पड़ता आया। पूरस पूरा पूरूं।

जो महान बने है उन्होंने भी दु:ख सहे है, इसलिये दुख से विचलित नहीं होना चाहिये।

जे रिण राहे सूर गहीजै। जे सुरज सुरा सूरूं।

युद्ध क्षेत्र में यदि शूरवीर कैद कर लिया जाए तो भी उसकी शूरवीरता कम नहीं होती। धर्मी आपत्तिकाल में भी धर्म को नहीं छोड़ते।

दुखिया है जे सुखिया होयसै। करसै राज गहीरूं।

दु:ख में धैर्य रखने वाले बाद भी सुखी भी होते है तथा राज भी भोगते है।

इतना मोह न माने शिंभु। तही तही सूसीरूं।

जो पुरुष संसार के सुख-दुख में एक समान रहता है उसे ही परमात्मप्राप्ति होती है।

मैं कर भूला मांड पिराणी। काचै कन्ध अगाजूं।

हे प्राणी! तूं धोखे और वैभव में भूला हुआ है, नश्वर शरीर से बुरे-अकार्य करता है।

काचा कंध गले गल जायसै, बीखर जैला राजों।

यह नाशवान शरीर क्षीण होते-होते नष्ट हो जाएगा तब तूं समस्त सांसारिक वैभव भूल जाएगा।

जाकै परसण बाजा बाजै।

सो अपरम्पर काय न जपो हिंदू मुसलमानो।

जिस अपरम्पर की महिमा प्रतिक्षण प्रतिभासित हो रही है, हे हिन्दुओं! हे मुसलमानों! उसे क्यों नहीं जपते।

डर डर जीव कै काजै।

जीवात्मा के उद्धार के लिये बुरे कर्मों से डरो।

मरणात एको माघो।

मृत्यु का मार्ग तो सबका एक ही है।

पशु मुकेरूं लहै न फेरूं, कहे ज मेरूं सब जग केरूं।

मुक्त हुआ पशु भी फिर बन्धन में नहीं आना चाहता फिर तूं मनुष्य होकर भी जगत को अपना समझकर इसमें फंसाना चाहता है।

रिण छाणै ज्यूं बीखर जैला। तातै मेरूं न तेरूं।

जंगल में पड़े हुए उपले के समान तूं बिखरकर नष्ट हो जाएगा, इसलिये यहां मेरी-तेरी करना व्यर्थ है।

विसर गया तै माघूं। रक्तूं नातूं सेतूं धातूं।

कुमलावै ज्यूं शागूं।

संसार के रिश्तों के मोह में तूं परमतत्व का मार्ग भूल गया है, ये रिश्ते-नाते तो एक दिन ताजे कटे हरे साग की भांति कुम्हलाकर नष्ट हो जाएंगे।

आडन पैंको रती बिसोवो सीझे नाही। ओ पिंड काम न काजूं।

जब इस संसार से तुम्हारा जाना होगा तब यहां से तुम्हें जरा भी

सहायता नहीं मिलेगी। यहां किया हुआ विश्वास रत्तीभर भी सिद्ध नहीं होगा, यहां तक की यह शरीर भी पराया हो जायेगा।

आवत काया ले आयो थो। जातै सूको जागो।

संसार में आते समय तूं शरीर लेकर आया था पर जाते समय वह भी यहीं छोड़ना पड़ेगा।

भाग परापति कर्मा रेखां। दरगै जबला-जबला माघौ।

कर्मों से ही भाग्य का निर्माण होता है। भगवद्प्राप्ति के अनेकों मार्ग है।

बिरखे पान झड़े झड़ जायला। तेपण तई न लागूं।

वृक्ष से पत्ते एक बार झड़ जाने पर वे वापस उस पर नहीं लगते। भगवद्प्राप्ति के लिये मिला हुआ यह मनुष्य शरीर दोबारा नहीं मिलेगा।

भूला तेण गया रे प्राणी। तिहिं का खोज न माघूं।

हे प्राणी! जो लोग भूल में भटकते हुए संसार से चले गए, उनका अनुसरण मत कर।

विष्णु-विष्णु भण लई न साई। सुर नर ब्रह्मा को न गाई।

इस संसार से जाते समय अगर तुम्हारे पास विष्णु नाम जप की कमाई नहीं है तो आगे देवगण और ब्रह्माजी भी तुम्हारा पक्ष नहीं लेंगे।

जां जां शैतानी करै उफारूं, तां तां महतज फलियो।

जब-जब दुष्ट लोग अहंकार के वशीभूत होकर अन्याय करते है, तब-तब परमात्मा की महिमा फलीभूत होती है।

मंडलीक कांय न जोयबा। इहिं धर ऊपर रत्ती न रहीबा राजूं।

आप अनेक मंडलीक राजाओं को क्यों नहीं देखते? इस धरती पर उनकी रत्ती भर सत्ता भी शेष नहीं रही।

ऊमाज गुमाज पंज गंज यारी।

उन्माद, अहंकार और पंचेन्द्रियों की विषय-वासनाओं से दूर रह। इनकी आसक्ति छोड़ दे।

रहिया कुपहीया शैतान की यारी।

दुष्टों की संगति और कुपथ से दूर रह।

काचै पिंडै किसी बड़ाई। भोलै भूल अयांणो।

नश्वर शरीर की बड़ाई कैसी? अज्ञानी लोग इस भूल में ही भटकते रहते है।

दुनियां राचै गाजै बाजै। तामैं कणूं न दाणूं।

दुनियां तो गाजे-बाजे से प्रसन्न रहती है किन्तु इसमें तत्त्व रूपी एक भी दाना सार नहीं है।

दुनियां के रंग सब कोई राचै। दीन रचै सो जाणी।

दुनियां के रंग में तो सभी रंग जाते हैं पर जो धर्म के रंग में रंगता है उसे ही सच्चा जानना चाहिये।

काचा तोड़ै नीकुचा भाखै। अघट घटै मल माणो।

सत्कर्महीन और कुकर्मी पुरुष नष्ट हो जाएंगे। पाप और अहंकार के कारण तो बड़े-बड़े शक्तिवानों का बल भी घट जाता है।

भूत परेती कांय जपीजै। यह पाखण्ड परमाणों।

भूत-प्रेतों को क्यों जपते हो? ऐसा करना निश्चित रूप से पाखण्ड है।

सो अपरंपर कांय न जंपो। ततखिण लहो इमाणो।

तुम उस परमात्मा का जप क्यों नहीं करते? उसका जप करने में क्षणमात्र भी देर मत लगाओ।

जइया मूल न सींच्यो। तो जामण मरण बिगोवो।

जिसने मूल (परमतत्व) को नहीं खोजा, उसने लोक और परलोक दोनों गंवा दिये है।

कोई-कोई भल मूल सींची लो। भल तंत बूझीलो।

कोई बिरले पुरुष ही इस परमतत्व को जानने और प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

जा जीवन की विध जाणी। जीव तड़ा कछु लाहो होसी।
मूवा न आवत हांणी।

जिन्होंने जीवन-विधि को जान लिया है, उन्हें इस जीवन में भी लाभ होगा तथा मरणोपरांत आवागमन से मुक्त हो जाऐंगे।

हक हलालूं हक साच कृष्णों। सुत अहल्यो न जाई।

हक जायज है, हक और सत्य से परमतत्त्व की प्राप्ति होती है, पुण्यकर्म कभी व्यर्थ नहीं जाते।

भल बाहीलो भल बीजीलो। पवणा बाड़ बलाई।

शरीर का सदुपयोग करते हुए इससे सुकृत्य करो तथा विषय-वासनाओं से दूर रहो।

उनमुन मनवा जीव जतनकर। मन राखी लो ठांई।

मन को पूर्णरूपेण स्थिर तथा उसकी वृत्तियों को अर्न्तमुखी करके जीवात्मा के उद्धार का यत्न करो।

कोई गुरु कर ज्ञानी तोड़त मोहा। तेरो मन रखवालो रे भाई।

कोई समर्थ ज्ञानी गुरु ही संसार से मोह तोड़ाकर अपने उपदेश से मन को स्थिर करा सकता है।

जो आराध्यो राव युधिष्ठिर, सो आराधो रे भाई।

राजा युधिष्ठिर ने जिस सत्य और न्याय को धारण किया था, उसे तू भी कर।

निज पोह खोज पिराणी।

व्यक्ति को आत्मतत्त्व की प्राप्ति का मार्ग खोजना चाहिये।

जे नर दावो छोड्यो मेर चुकाई। राह तेतीसों की जाणी।

जिस मनुष्य ने 'मेरापन' और 'मैंपन' (ममता और अहंकार) का सर्वथा त्याग कर दिया है, उसने वस्तुत: मोक्षमार्ग को जान लिया है।

वेद कुराण कुमाया जालूं। भूला जीव कुजीव कुजाणी।

पाखण्डियों ने वेद और कुरान के नाम पर जाल फैला रखा है तथा भूले-भटके लोगों को उस जाल में फंसा लेते हैं।

बसंदर नहीं नख हीरूं। धर्म पुरुष सिरजीवै पुरूं।

अग्नि का प्रकाश हीरे की कान्ति की बराबरी नहीं कर सकता। पाखण्डियों का प्रकाश अग्नि की तरह प्रकट होकर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है किन्तु धर्मात्मा पुरुष की कीर्ति चिरस्थायी रहती है।

बे राही बे किरियावन्त, कुमती दौरे जायसै।

महामलिन और दुष्कर्मी लोग नरक में जाएंगे।

नील मध्ये कुचील करबा, साध संगिणी थूलूं।

दुष्ट लोग परमात्मा की लीला में विक्षेप करते हुए, साधु पुरुषों को दु:ख देते है।

पोहप मध्ये परमला जोती, यूं सुरग मध्ये लीलूं।

सज्जन लोग संसार में फूल में सुगन्ध की भांति रहकर स्वर्गीय आनन्द उपस्थित कर देते है।

संसार में उपकार ऐसा, ज्यूं घण बरसंता नीरूं।

संसार में इस प्रकार उपकार करना चाहिये जैसे बादल बिना किसी से कुछ चाहे भेदभाव से रहित होकर पानी बरसाते है।

संसार में उपकार ऐसा, ज्यूं रूही मध्ये खीरूं।

स्वाभाविक प्रेम और सहज रूप से परोपकार की भावना हो तो रूधिर में से भी दूध की उत्पत्ति हो जाती है।

सोखा बाणू एक बखाणूं। जाका बहु परवाणूं।
निश्चय राखी तास बलूं।

जिस भगवान ने महापराक्रमी रावण को मार दिया, उसकी महिमा बखान करने योग्य है, जो अनन्त है। हे प्राणी! तूं उसके बल का भरोसा रख।

राय विष्णु से बाद न कीजै। कांय बधारो दैत्य कूलूं।

हे लोगों! भगवान से विमुख होकर क्यों दैत्यों के अवगुणों को अपना रहे हो?

सा पुरुषा की लच्छ कूलूं।

सत्पुरुषों के लक्षण और गुण ग्रहण करो।

बैकुण्ठे विश्वास बिलम्बण। पार गिराये मात खिणूं।

यदि कोई पूर्ण विश्वास से भगवद्प्राप्ति (बैकुण्ठ) के मार्ग पर लग जाये तो क्षणमात्र में उद्धार हो सकता है।

विष्णु-विष्णु तूं भण रे प्राणी। विष्णु भणन्ता अनन्त गुणूं।

हे प्राणी! तूं विष्णु-विष्णु जप कर, विष्णु जप में अनन्त गुण है।

कृष्णी माया घन बरषंता। म्हे अगिणि गिणूं फूहारूं।

भगवान की कृपा से बादलों से जो बरसात होती है, भगवान बरसात की उन बूंदों की भी गणना कर सकता है। असम्भव कार्य भी सम्भव कर सकता है।

राखण मता तो पड़दै राखां। ज्यूं दाहै पान बणासपती।

भगवान यदि किसी की रक्षा करनी चाहे तो भयंकर शीतदाह में भी वनस्पति के पत्तों की तरह रक्षा कर सकते हैं।

यह कंवराई खेह रलाई। दुनियां रौले कंवर किसो।

यह संसार की प्रभुता एक दिन मिट्टी में मिल जाएगी। वह सत्तावान किस काम का जो दुनियां का विनाश कर दे।

अरथूं गरथूं साहण थाटूं। धूंवै का लहलोर जिसो।

यह धन-सम्पति और सेना, धुंध की लोर के समान है जो हवा का झोंका आते ही उड़ जाते हैं।

सो शारंगधर जप रे प्राणी। जिहिं जपिये हुवै धरम इसो।

हे प्राणी! तूं भगवान विष्णु का जप कर, उसके जप से ही धर्म की प्राप्ति (अभिवृद्धि) होती है।

सास फुरंतै किवी न कमाई। तातैं जंवर बिन डसीरे भाई।

हे प्राणी! अगर सांसो के रहते तूने सत्कर्म नहीं किया तो बड़ी भूल होगी क्योंकि मृत्यु तुम्हें एक दिन नष्ट कर देगी।

जंवरारै तैं जग डांडीला। देह न जीती जांणो।

तूने शक्तिवान बनकर जगत को तो दण्डित किया किन्तु स्वयं की देह को नहीं जीत सका।

माया जाले ले जम काले। लेणा कोण समाणो।

संसार एक मायाजाल है, यह नष्ट हो जाएगा, इसकी प्राप्ति को लेकर अहंकार कैसा?

दीन गुमान करैलो ठाली। ज्यूं कण घातै घुण हाणी।

दूसरे के धर्म को नीचा कहना और अपने धर्म का अभिमान करना उस अनाज के घुन के समान है जो अन्दर से थोथा कर देता है।

साच सिदक शैतान चुकावो। ज्यूं तिस चुकावै पाणी।

जैसे पानी प्यास को मिटाता है, वैसे ही सच्चाई और निश्छलता से दुष्ट वृत्तियों को मिटाना चाहिये।

मैं नर पूरा सरि विणजै हीरा। लेसी जांकै हृदय लोयण। अंधा रहा इवांणी।

मैं पूर्ण पुरुष समराथल पर ज्ञान रूपी हीरों का व्यापार कर रहा हूँ, जिनके अन्तर्दृष्टि है, वे ही इनको लेंगे। अज्ञानी लोग तो अंधे के समान ही रहते हैं।

जंपो रे जिण जंपे लाभै। रतन काया ए कहांणी।

हे भाई! विष्णु का जप करो, जप से ही आत्मोपब्धि होगी, केवल इस मनुष्य जन्म में ही तत्त्वप्राप्ति हो सकती है।

काही मारूं काही तारूं। किरिया बिहूंणा पर हथ सारूं।

अत्यधिक दुष्ट लोगों को भगवान मारते हैं, साधु पुरुषों का उद्धार करते हैं सत्कर्मों से रहित पुरुष को भी जीवात्मा के कल्याण का अवसर मिलता है।

हरी कंकेहड़ी मंडप मैड़ी। जहां हमारा वासा।

कंकेहड़ी आदि हरे वृक्षों के नीचे ही मेरा वास है।

चार चक नव दीप थरहरै। जो आपो परकासूं।

यदि हम (श्री जाम्भोजी) अपने को पूर्ण रूप से प्रकाशित करें, तो चारों दिशाएं और नवों द्वीप थरथराने लगेंगे।

गुणियां म्हारा सुगणा चेला। म्हे सुगणा का दासूं।

सुपात्र और गुणवान लोग ही मेरे शिष्य है और ऐसे गुणवानों की मैं सेवा करता हूँ।

सुगणा होय सैं सुरगे जास्ये। नुगरा रहा निरासूं।

जो गुणवान है वो ही भगवद्प्राप्ति करेंगे। गुणहीन निराश ही रहेंगे।

जा का थान सुहाया घर बैकुण्ठे। जाय संदेसो लायो।

सुपात्र लोगों का वास्तविक स्थान तो बैकुण्ठ है, उन्हीं को लेने के लिये मैं धरती पर आया हूँ।

जागो जोवो जोत न खोवो। छल जासी संसारूं।

हे लोगों! जागो और आत्मतत्त्व को खोजो, जीवन ऐसे ही मत बिताओ। एक दिन संसार का वियोग हो जाएगा।

रे भल कृषाणी। ताकै करण न घातो हेलो।

हे भाई! सुकृत्य करो और इसके लिये सदैव प्रयत्नशील रहो।

कड़वा मीठा भोजन भख ले। भखकर देखत खीरूं।

रूखा-सूखा जैसा भी भोजन मिले, उसे खीर के समान उत्तम समझना चाहिये।

धर आखरड़ी साथर सोवण। ओढ़ण ऊना चीरूं।

सोने के लिये धरती हो या बिछाना तथा ओढ़ने के लिये ऊनी वस्त्र हो या चिथड़ा, सबको समान समझना चाहिये।

जोगी रे तूं जुगत पिछाणी। काजी रे तूं कलम कुरांणी।

हे योगी! तू योग की युक्ति को पहचान! हे काजी! तू कुरान की कलम (ज्ञान) को जान।

गऊ बिणासो काहे तानी। राम रजा क्यूं दीन्ही दानी।
कान्ह चराई रनबे वांनी।

तुम गाय की हत्या किसलिये करते हो? ऐसा करना ठीक होता तो भगवान राम उनको दान में क्यों देते? भगवान कृष्ण उनको निर्जन वन में क्यों चराते?

ध्याय रे मुंडिया पर दानी।

हे जोगी! परमतत्व का ध्यान कर तथा प्राप्त ज्ञान का दान कर।

फीटा रे अण होता तानी। अलख लेखो लेसी जानी।

जीव-हत्या अनुचित है, उससे दूर रहो, अन्त समय में परमात्मा कर्मों का हिसाब लेगा।

तन-मन धोइये संजम हुइये। हरष न खोइये।

तन, मन दोनों को पवित्र रखते हुए संयमपूर्वक रहना चाहिये। किसी भी परिस्थिति में अपनी प्रसन्नता को खोना नहीं चाहिये।

ज्यूं-ज्यूं दुनियां करै खुंवारी। त्यूं-त्यूं किरिया पूरी।

ज्यों-ज्यों दुनियां दुर्दशा करती है, त्यों-त्यों इससे विरक्ति और परमात्मा की तरफ आकर्षण बढ़ता जाता है।

मुग्धा सेती यूं टल चालो। ज्यूं खड़कै पात धनूरी।

पास में जरा सी आवाज होने पर धनेर पक्षी उड़ जाता है, वैसे मूढ़ लोगों से बचकर रहना चाहिये।

सतगुरु होयबा सहजे चीन्हबा। जाचंध आल बखाणी।

सतगुरु के मिलने पर सहज ही आत्म तत्त्व का ज्ञान हो जाता है पर सत्‌गुरु के पर नाम पाखण्ड करने वाले कुछ लोग उस जन्म से अंधे व्यक्ति के समान है जिसने स्वयं संसार नहीं देखा पर इसका दूसरों को बखान करता है।

ओछी किरया आवै फिरियां। भ्रांती स्वर्ग न जाई।

नींच कर्म करने वाले आवागमन के चक्कर में पड़े रहते है। भ्रान्ति में पड़े हुए मनुष्य को तत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती।

हरि बिन देहरै जाण न पावै। अम्बाराय दवारूं।

भगवान की कृपा के बिना बैकुण्ठ की प्राप्ति नहीं हो सकती।

कांय रे सींचो बनमाली। इंहि बाड़ी तो भेल पड़सी।

इस शरीर को इतना क्यों सजाते-संवारते हो, एक दिन यह नष्ट हो जाएगा।

सुबचन बोल सदा सुहलाली। नाम विष्णु को हरे सुणो।

सदा सुवचन बोलना चाहिये, एकदम जायज कमाई ही खानी चाहिये तथा प्रेमपूर्वक विष्णु नाम-स्मरण करना-सुनना चाहिये।

घण तण गड़बड़ कायों बायों। निज मारग तो बिरला कायों।

अधिकांश लोग बुरे कर्मों में लिप्त है, कौओं की कांव-कांव के समान व्यर्थ की बातों में समय बर्बाद करते हैं। आत्मप्राप्ति के मार्ग पर तो कोई-कोई ही चलते हैं।

इस गढ़ कोई थीर न रहिबा। निश्चै चाल गया गुरु पीरूं।

इस शरीर को एक दिन छोड़कर जाना ही पड़ता है। गुरु-पीर कोई भी इसे स्थिर नहीं रख सकते।

अलख-अलख तूं अलख न लखणा। तेरा अनन्त इलोलूं।

हे परमात्मा! तूं अलक्ष्य है, हे प्रभु! तेरे गुण असंख्य है, तेरी गति अनन्त है।

कौण सी तेरी करणी पूजै। कौण सैं तिहिं रूप सतूलूं।

ऐसा कौन है जो तेरी महिमा का पार पा सके? तेरे तुल्य और कौन है।

जो नर घोड़ै चढ़ै पाग न बांधै। ताकी करणी कौण बिचारूं।

बड़ा होकर जो अपने पद के अनुरूप आचरण नहीं करता, उसकी करनी का क्या विचार किया जाए?

शुचियारा होयसी आय मिलसी। करड़ा दोजग खारूं।

जो सच्चे लोग है वो मुझे प्राप्त होंगे। अहंकारी लोग दु:खी और दुर्दशाग्रस्त होते हुए नरक में जाएंगे।

जीव तड़े को रिजक न मेटूं। मूवां परहथ सारूं।

मैं किसी जीव के जीते जी उसके कर्मों में हस्तक्षेप नहीं करता किन्तु मरने के बाद जीवात्मा को सम्भाल लेता हूँ।

मूंड मुंडायो मन न मुंडायो। मूहिं अबखल दिल लोभी।

सिर मुंडवाकर साधु तो बन गए पर मन अभी तक वश में नहीं किया। मुंह से व्यर्थ बकवास करते हो और दिल में लोभ भरा है।

अन्दर दया नहीं सुरकाने। निंदरा हड़ै कसोभी।

तुम्हारे अन्त:करण में दयाभाव नहीं है और श्रेष्ठ-पुरुषों की तुम मानते नहीं। निंदा और अशोभनीय कार्य तुम करते हो।

गुरु गति छूटी टोट पड़ैला।

यदि तुम गुरु के उपदेश से विमुख हुए तो बहुत ही घाटे में रहोगे।

उनकी आवा एक पख सातो पै करणी हूंता खूंधा।

जो पाखण्डी लोग है उनकी थोड़े दिन ही प्रतिष्ठा होती है, अन्त में वे अपनी करनी के कारण कष्ट पाते हैं।

गुरु प्रसाद काया गढ़ खोजो। दिल भीतर चोर न जाई।

गुरु-कृपा से प्राप्त आदेश के अनुसार साधना करते हुए सावधान रहो ताकि काम-क्रोधादि विकार भीतर प्रवेश न पा सके।

थलिये आय सत्गुरु परकाश्यो। जौ लै पड़ी लोकाई।

संभराथल पर सत्गुरु के ज्ञान का प्रकाश फैला हुआ है, उसमें आत्मतत्त्व की खोज कर लो।

दशरथ सो कोई पिता न देख्यो। देवलदे सी माई।

दशरथ के समान पिता तथा देवकी के समान माता दूसरी नहीं हो सकती।

सीत सरीखी तिरिया न देखी। गरब न करीयो काई।

कोई स्त्री अपने पातिव्रत्य धर्म का अहंकार न करे, क्योंकि इसमें सीता से बढ़कर कोई नहीं हो सकती।

हनमत सो कोई पायक न देख्यो।

हनुमान के समान दूसरा कोई सेवक नहीं देखा गया है।

इहिं कलयुग में दोय जन भूला। एक पिता एक माई।

कलियुग में मां और बाप दोनों ही भूल में है, वे सन्तान से सांसारिक सुख की कामना तो करते हैं पर उसके कल्याण की चिन्ता नहीं करते।

जुग जागो जुग जाग पिरारंणी। कांय जागंता सोवो।

हे लोगों जागो। हे प्राणी जागो। जागते हुए क्यों सो रहे हो।

भलकै बीर बिगोवो होयसी। दुसमन कांय लकोवो।

बिजली के चमकने जितनी देर में जीव इस शरीर से निकल जाएगा। काम-क्रोधादि अपने शत्रुओं को भीतर क्यों छिपा रखा है?

जंपो रे जिण जंप्यो जणीयर। जपसी सो जिण हारी।

हे लोगों! जप करो, जप से ही उस परमात्मा को जाना जा सकता है। जो ध्यानपूर्वक खोजने वाला है, वही उसको जान पाएगा।

लह-लह दाव पड़ंता खेलो। सुर तेतीसां सारी।

यह संसार माया का खेल है, इस खेल को तुम सावधानी पूर्वक खेलो ताकि इस मायाजाल से बाहर निकलकर वैकुण्ठ प्राप्ति हो जाए।

शील स्नाने संजमे चालो। पाणी देह पखाली।

स्नानादि से शरीर को तथा शील से अन्त:करण को धोकर बाहर-भीतर से पूर्णत: पवित्र रहना चाहिये।

वस्तु पियारी खरचो क्यूं नांही। किहिं गुण राखो टाली।

अपने प्यारे शरीर और धन को सत्कर्म में क्यों नहीं लगाते? किसलिये इनको बचाकर रखा है, एक दिन ये चले जायेंगे।

घर आगी इत गोवल बासो। कूड़ी आधो चारी।

जीव का वास्तविक घर तो आगे वैकुण्ठ है, यहां गोवलवास मात्र है, यहां का आधोचार झूठा है।

ताण थकै क्यूं हार्‌यो नांही। मुरखा अवसर जोला हारी।

मनुष्य जब समर्थ है तब सत्कार्य करता नहीं, असमर्थ होने पर चाहकर भी कर नहीं पाता।

जिहिं का उमग्या समाघूं। तिहिं पंथ के बिरला लागूं।

परमतत्त्व का मार्ग आनन्दमय है, उस मार्ग पर बिरले ही लगते है।

कबही झूझत रायूं। पासै भाजत भायों। तातैं नुगरा झूझ न कीयों।

मुक्ति चाहने वालों को अपने मन से जूझना पड़ता है। उन्हें संसार के आकर्षणों का त्याग करना पड़ता है। निगुरे व्यक्ति इस मार्ग परनहीं चलते।

चोईस चेड़ा कालिंग केड़ा। अधिक कलावंत आयसै।

कलियुग में अनेक प्रकार की तामसी साधना करने वाले पाखण्डी कलाबाज पैदा होंगे।

जाणत भूला महापापी। बहू दुनिया भोलायसै।

जो लोग जान-बूझकर बुरे कर्म करते हैं, वे महापापी है। ऐसे लोग दूसरों को भी भूल में डालते हैं।

दिल का कूड़ा कुड़ीयारा। उपंग बात चलाय सै।

(बाहर से उजले होने पर भी) कुछ लोग दिल से झूठे होंगे। वे लोग झूठी आधारहीन बातों का प्रचार करेंगे।

आप थापी महापापी। दग्धी परलै जायसै।

स्वयं की पूजा करवाने वाले पाखण्डी लोग महापापी है। वे भयंकर नरकों में डाले जाएंगे।

छंदे मंदे बालक बुद्धे। कूड़े कपटे ऋध न सिद्धे।

मनभावनी बातों से प्रसन्न होने वालों की बुद्धि बालक के समान होती है। झूठ और कपट से ऋद्धि-सिद्धि नहीं मिलती।

ध्यान न डोले मन न टले। अहनिश ब्रह्म ज्ञान उच्चरै।

परमात्मा में अखण्ड ध्यान रखकर मन को वश में रखने वालों की जबान से हर समय ब्रह्म ज्ञान का उच्चारण होता है।

है कोई आछै मही मंडल शूरा। मनराय सूं झूझ रचायले।

इस धरती पर ऐसा कोई शूरवीर है जो अपने मन से युद्ध करे?

अथगा थगायले। अबसा बसायले। अनबे माघ पाल ले।

ऐसा कौन है जो भोगों से न तृप्त होने वाले मन को थकाकर बस में न आने वाले मन को बस में करके आवागमन से मुक्ति पा ले।

पढ़ वेद कुराण कुमाया जालों। दंत कथा जुग छायो।

वेद और कुरान के नाम पर पाखण्ड फैला हुआ है। इनके नाम पर दन्त कथाऐं प्रचलित है पर इनके तत्व को बहुत कम लोग ही जानते हैं।

सिध साधक को एक मतो। जिन जीवत मुक्त दृढ़ायो।

जीवन मुक्ति की प्राप्ति का दृढ़ निश्चय करने वाले सभी साधक एक ही मत है।

क्यूं-क्यूं भणता। क्यूं-क्यूं सुणतां।
समझ बिना कुछ सिद्धि न पाई।

पढ़ने और सुनने मात्र से कुछ नहीं होगा, बिना उचित समझ के सिद्धि नहीं मिल सकती।

ओइम् आद सबद अनाहद बाणी।

ब्रह्माण्ड में व्याप्त आदि शब्द 'ओइम्' है, वही पिण्ड में अनाहत नाद के रूप में गूंजायमान है।

चवदै भवण रहया छल पाणी। जिहिं पाणी से इंड ऊपना।

सृष्टि-निर्माण से पूर्व चौदहों भुवनों में पानी ही पानी था। उस पानी से अण्डे (हिरण्यगर्भ) की उत्पत्ति हुई।

सहस्र नाम सांईभल शिंभु। म्हे उपना आदि मुरारी।

उस निराकार परमात्मा के हजारों नाम है। वह सगुण रूप में प्रकट होता है तो मुरारी आदि नाम धारण करता है।

नरसिंघ रूप धर हिरण्यकश्यप मार्‌यो।
प्रहलादो रहियो शरण हमारी।

प्रहलाद मेरी शरण में था, अत: नरसिंह रूप धारण करके मैनें हिरण्यकश्यपु का वध किया।

शेष जम्भराय आप अपरंपर। अवल दिन से कहियो।

इस बार आदि-अनादि अपरम्पर विष्णु ही जाम्भोजी के रूप में है।

बाद-विवाद फिटाकर प्राणी। छाड़ो मनहट मन का भाणो।

हे प्राणी! वाद-विवाद और बकवाद से दूर रह। मनहठ और अहंकार छोड़ दे।

नुगरा कै मन भयो अंधेरो। सुगरा सूर उगाणो।

निगुरों के मन में अज्ञानांधकार है और सुगरों के मन में ज्ञान का सूर्योदय हुआ है।

चरण भी रहिया लोयण झूरिया। पिंजर पड़यो पुराणो।

वृहवस्था में व्यक्ति असहाय हो जाता है, पैर चलने-फिरने तथा आंख देखने से इन्कार कर देती है। ऐसी अवस्था में भजन नहीं होता।

जीवड़ा नै पाछो सूझण लागो। सुकरत नै पछताणो।

धर्मराज के पास पहुंचने पर जीव को समझ में आएगा और वह इस लोक में सुकृत न करने के लिये पछताएगा।

विष्णु-विष्णु तू भण रे प्राणी! जो मन मानै रे भाई।

हे भाई! यदि तेरा मन माने, तो विष्णु-विष्णु जप कर।

दिन का भूला रात न चेता। कांय पड़ा सूता आस किसी मन भाई।

दिन-रात भ्रम और भूल में पड़ा निश्चिन्त क्यों सोता रहा, तेरे मन में किस की आशा है।

तेरी कूड़ काची लगवाड़ घणो छै। कुशल किसी मन भाई।

तेरा शरीर नश्वर है और झंझट अनेक है, ऐसे में हे भाई! तेरी कुशल कैसी?

हिरदै नाम विष्णु को जंपो। हाथे करो टवाई।

हृदय में तो विष्णु का नाम जपो और हाथों से कार्य करो।

पाहन प्रीत फिटा कर प्राणी। गुरु बिन मुक्त न जाई।

हे प्राणी! तूं पत्थर पूजा का प्रेम छोड़, बिना गुरु ज्ञान के मुक्ति नहीं मिल सकती।

पंच क्रोड़ी ले प्रहलाद उतरियो। जिन खरतर करी कमाई।

भक्त प्रहलाद ने बहुत ही श्रेष्ठ कमाई की क्योंकि उन्होंने पांच कोटि जीवों के साथ मुक्ति प्राप्त की थी।

सात क्रोड़ी ले राजा हरिचन्द उतरियो।
तारादे रोहिताश हरिचन्द हाटोहाट बिकाई।

महाराजा हरिश्चन्द्र ने सात कोटि जीवों के साथ मुक्ति प्राप्त की इस हेतु उन्हें अपनी पत्नी तारादे और पुत्र रोहिताश्व के साथ काशी के बाजार में बिकना पड़ा।

कृष्ण करंता बार न होई। थल सिर नीर निवाणो।

उस परमात्मा को किसी कार्य को करने में देर नहीं लगती। वह रेत के धोरे पर जल से भरा तालाब बना सकता है।

भूला प्राणी विष्णु जंपो रे। ज्यूं मौत टलै जिरवाणो।

हे भूले हुए प्राणी! विष्णु का जप करो जिससे मृत्यु और आवागमन से छुटकारा मिले।

भीगा है पण भेद्या नाहीं। पांणी मांहि पखाणो।

अन्त:करण को शुद्ध न करके लोक दिखावे के लिये ज्ञान की बातें करने वाले उस पत्थर के समान है जो पानी में पड़े रहने के बाद भी अन्दर से सूखा रहता है।

जीवत मरो रे जीवत मरो। जिन जीवन की बिध जाणी।

जीते जी मरो-जीवन मुक्ति प्राप्त करो, जो जीने की सही विधि जानता है, वही ऐसा कर सकता है।

जे कोई आवै हो हो कर। आप जै हुईये पांणी।

यदि कोई व्यक्ति अत्यन्त क्रोधित होकर आता है, तो अपने को पानी के समान शीतल और विनम्र होना चाहिये।

जाकै बहुती नवणी बहुती खवणी। बहुती क्रिया समाणी।

अत्यन्त विनम्र, अत्यन्त क्षमाशील तथा सभी प्रकार के कार्यों को धैर्यपूर्वक समभाव से करें।

यह मढ़ देवल मूल न जोयबा। निज कर जपो पिराणी।

मढ़ियों और देवालयों में परमात्मा को खोजने की जरूरत नहीं है। हे प्राणी! अपनी सामर्थ्यानुसार विष्णु का जप करते रहो।

अनन्त रूप जोवो अभ्यागत। जिहिंका खोज लहो सुर बाणी।

अनन्त रूप धारण किये हुए सर्वत्र परमात्मा ही मौजूद है। ज्ञानी पुरुषों के बताये हुए मार्ग पर चलकर उसकी खोज करो।

साच सही म्हे कूड़ न कहिबा। नेड़ा था पण दूर न रहीबा।

मैं सत्य और सही बातें करता हूँ, मिथ्या भाषण नहीं करता। परमतत्व रूप में मैं प्रत्येक प्राणी के अन्दर हूँ, उससे दूर नहीं हूँ।

तज्या अलिंगण तोड़ी माया, तन लोचन गुण बांणो।

-वही सिद्धि प्राप्त कर सकता है, जिससे सांसारिक आकर्षणों, माया के बन्धनों को तोड़ दिया। उसे शरीर की भी आवश्यकता महसूस नहीं होती।

अर्थूं गर्थूं साहण थाटूं। कूड़ा दीठो ना ठाटो।

धन-सम्पत्ति, साधन इत्यादि सांसारिक वैभव झूठा है, इसके कारण अपनी शान-शौकत मत समझो।

कूड़ी माया जाल न भूली रे राजेन्द्र अलगी रही ओजूं की बाटों।

यह जगत का ऐश्वर्य झूठा माया जाल है। मुक्ति का मार्ग इससे अलग है।

ऊँचे नीचे करै पसारा। नाहीं दूजै का संचारा।

मनुष्य को विशेष प्रयत्न करके अपने अन्त:करण को निर्मल बनाना चाहिये। यह कार्य दूसरा कोई नहीं कर सकता उसे स्वयं ही करना पड़ेगा।

तिल में तेल पहुप में बास। पांच तत्त्व में लियो प्रकास।

जैसे तिलों में तेल और फूलों में सुगन्ध होती है। वैसे पंचतत्त्व निर्मित इस देह में यह जीवात्मा प्रकाशित है।

बिजली कै चमकै आवै जाय। सहज शून्य में रहै समाय।

देह में आत्मा का आना-जाना बिजली की चमक के समान क्षणमात्र में होता है। जीवात्मा हृदय-गगनमंडल में समाहित है।

नै यो गावै न यो गवावै। सुरगे जाते बार न लावै।

तत्त्वप्राप्त पुरुष तत्व के विषय में न तो किसी से कहता है और न सुनता है। वह मुंह, नैत्र और कान से मौन हो जाता है तथा शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

सत्गुरु ऐसा तंत बतावै। जुग जुग जीवै बहुर न आवै।

ऐसा सत्गुरु अगर किसी से तत्व का रहस्य बता दे तो वह जीवन मुक्त हो जाता है उसे आवागमन से छुटकारा मिल जाता है।

धरम हुवै पापां छूटीजै। हरि पर हरि को नाम जपीजै।

निरंतर हरि नाम स्मरण करते हुए तू धर्म-कर्म कर, ऐसा करने से तू पाप-बन्धन से मुक्त हो जायेगा।

हरियालो हरि आण हरूं। हरि नारायण देव नरूं।

दूसरे जीव-पदार्थों में प्रत्येक जगह परमात्मा को देख। सर्वत्र हरि विराजमान है।

आशा सास निरास भईलो। पाईलो मोक्ष दवार खिणूं।

अन्त समय में भी अगर तेरी प्रत्येक जीव में परमात्मा को देखने की दृष्टि हो जाये तो उसी क्षण तुझे मोक्ष-प्राप्ति हो सकती है।

देखि अदेख्या सुण्या असुण्या। क्षमारूप तप कीजै।

बुरा देखकर अनदेखा करना चाहिये, बुरी बात सुनकर अनसुनी करनी चाहिये तथा क्षमारूपी तप करना चाहिये।

थोड़े माहि थोड़ेरो दीजै। होते नाहिं न कीजै।

अपने पास अगर थोड़ी वस्तु है तो मांगने पर उसमें से थोड़ी दे देनी चाहिये। होते हुए साफ मना नहीं करना चाहिये।

कृष्णी मया तिहूं लोका साक्षी। अमृत फूल फलीजै।

तीनों लोकों में सर्वत्र परमात्मा विराजमान है, उसे साक्षी मानकर शुभ कर्म करते हुए परमतत्व की प्राप्ति करनी चाहिये।

जोय जोय नांव विष्णु के दीजै। अनन्त गुणा लिख लीजै।

भगवदार्पण करके दिया हुआ दान अनन्त होकर मिलता है।

मानूं एक सुचील सिनानूं।

भीतर और बाहर की मन और तन की पवित्रता बड़े से बड़े दान से भी श्रेष्ठ है।

आप अलेख उपन्ना शिंभु। निरह निरंजन धंधूकारूं।

अगोचर स्वयंभू अपने आप ही उत्पन्न हुआ है। सृष्टि निर्माण से पूर्व निराकार निरंजन था और धुंधलेपन की स्थिति थी।

नर निरहारी एकलवाई। जिन यो राह फुरमाई।

मैं विष्णु हूँ, मैं निराहारी हूँ और केवल वायु के सहारे ही रहता हूँ, मैनें यह मार्ग बताया है।

जोर जरब करद जे छोड़ो। तो कलमा नाम खुदाई।

किसी निरीह जीव पर शक्ति मत अजमाओ, उन पर चोट मत करो और उनको मारने के लिये धारण की हुई छुरी को छोड़ो, तभी तुम धर्म के मूल तत्व को पहचान पाओगे।

जिनकै साच सिदक इमान सलामत। जिण यो भिस्त उपाई।

जिनके हृदय में न्याय, सच्चाई और ईमान मौजूद हैं, उनको ही स्वर्ग प्राप्ति होती है।

सहजे शीले सेज बिछायों। उनमन रहया उदासूं।

जिसमें जीवात्मा की अमरता तथा शरीर और संसार की नश्वरता को पहचान लिया है, जो शीलवान है, जिसका मन स्थिर है, उसी को आत्मतत्त्व की प्राप्ति होती है।

रवि उगा जब उल्लू अन्धा। दुनियां भया उजासूं।

सूर्योदय होने पर दुनियां में तो प्रकाश हो जाता है किन्तु उल्लू को दिखाई नहीं देता। दुनियां के बहुत से लोग ऐसे ही है जो सत्य को बताने वाला सतगुरु को सामने होने पर भी पहचान नहीं पाते।

जां जांण्यो तहां प्रवाण्यो। सहज समाणो।

जिहिं के मन की पूगी आसूं।

जिन्होंने सत्गुरु को जाना है और विश्वास किया है, उन्हें ही आत्मस्वरूप के दर्शन हुए हैं तथा उनके मन की आशाएँ भी पूर्ण हुई है।

सत संतोष दोय बीज बीजीलो। खेती खड़ी अकासी।

सत्य और संतोष को धारण करके शून्यमण्डल में साधना करो।

चेतन रावल पहरै बैठे। मृगा खेती चर न जाई।

परिश्रम पूर्वक की गई साधना रूपी खेती को मन रूपी मृग चर न जाए इसलिये हर समय सचेत रखने वाले चैतन्य राजा जीवात्मा के पहरे में रहो।

गुरु प्रसादे केवल ज्ञाने, ब्रह्म ज्ञाने सहज स्नाने।

गुरु की कृपा से साधक को ब्रह्मज्ञान की कैवल्य अवस्था प्राप्त होती है, जिसमें आत्मतत्त्व का बोध हो जाता है।

देखत भूली को मनमानै। सेवै बिलोवै बाझ सनानै।

हे भाई! दूसरों की देखादेखी और मनमानी करना भूल है। पानी से स्नान तो किया जा सकता है पर उसे बिलौने पर घी नहीं निकलता।

देखत भूली को मन चेवै। भीतर कोरा बाहर भेवै।

दूसरों की देखादेखी जो मनमानी करते हैं वे बाहरी दिखावा तो कर लेते हैं पर भीतर से खाली होते हैं।

देखत भूली को मन मानै। हरि परहरि मिलियो शैताने।

जो परमात्मा को छोड़कर, दुष्टों की संगति और दुष्कर्म करता है, यह दूसरों की देखादेखी और मनमानी का ही परिणाम है।

कवले चूकी बचने हारी। जिहिं औगुण ढ़ांची ढ़ोवै पांणी।

गर्भवास में परमात्मा को सुकृत करने के दिये वचन को हारने के बाद जीवात्मा को अगले जन्म में पशु बनकर कष्टसाध्य कार्य करने पड़ते हैं।

विष्णु कूं दोष किसो रे प्राणी। आपे खता कमाणी।

हे प्राणी! इसमें विष्णु का क्या दोष है? अपने किये हुए पाप कर्मों का फल तो भुगतना ही पड़ेगा।

कृत खेत की सींव मैं लीजै। पीजै ऊंडा नीरूं।

हमें हक की कमाई खानी चाहिये तथा पानी स्वच्छ पीना चाहिये।

भोलब भालब। टोलम टालम। ज्यूं जाणो त्यूं आणो।

भूले-भटके लोगों की टोलियों की टोलियां ही आवागमन के चक्कर में पड़ी है।

जांका जन्म नहीं पर कर्म चंडालूं।

और कूं जिभै कर आप कूं पोखणा।

जो अपना पेट भरने के लिये दूसरे जीवों की हत्या करते हैं, वे उच्च कुल में जन्म लेने के बाद भी कर्म से हीन (चाण्डाल) है।

उरका फुरका निवाज फरीजां। खासा खबर बिनाणी।

कुरान शरीफ के अनुसार मुसलमान का यह कर्त्तव्य है कि वह नमाज को हृदय में धारण करके उस पर अमल करे। इससे उसको सर्वशक्तिमान परमेश्वर के रहस्य का पता चलेगा।

चांदणै थकै अंधेरै क्यं चालो। भूल गया गुरु बाटो।

गुरु ज्ञान रूपी प्रकाश के होते हुए तुम अज्ञानांधकार में क्यों चल रहे हो? क्या गुरु के बताये हुए मार्ग को भूल गए।

नीर थकै घट थूल क्यूं राखो। सबल बिगोवो खाटो।

गुरु ज्ञान रूपी जल के रहते हुए तुम अपने हृदय रूपी घड़े को खाली लिये क्यों बैठे हो? यह मनुष्य जन्म दुर्लभ है इसे व्यर्थ में नष्ट मत करो।

बिन्दो ब्योहरो ब्योर विचारो। भूलस नाहीं लेखो।

आत्म चिन्तन करते हुए अपने पापकर्मों का प्रायश्चित करो। इन्हें कभी भूलो नहीं, इनका हिसाब रखो।

नदिये नीरूं सागर हीरूं। पवणा रूप फिरै परमेश्वर।

परमात्मा अनेक रूपों में सर्वत्र विद्यमान है, नदियों में नीर रूप में, सागर में रत्न रूप में तथा हवा के रूप में वह सब जगह है।

ते सरवर कित नीरूं। गहर गंभीरूं।
खिण एक सिद्धपुरी विश्राम लियों।

परमतत्व गूढ़–गम्भीर है। वह सरोवर कहाँ हैं जहाँ यह परमतत्त्व रूपी जल मिलता है? एक क्षण के लिये ही सही अपने–आप में स्थित होकर देखो।

अब जु मंडल भई अवाजूं। म्हे शून्य मंडल का राजूं।

हृदय में निरन्तर अनाहत नाद की ध्वनि गुंजरित होती रहती है। जीवात्मा का इसी शून्य मंडल में वास है।

जोग जुगत की सार न जाणी। मूंड मुंडाया बिगूता।

हे जोगी! तुम जोग और उसकी साधना के बारे में कुछ भी नहीं जानते, मुंड मुंडाकर भी भ्रम में पड़े हुए हो।

चेला गुरु अपरचै खीणा। मरते मोक्ष न पायो।

बिना आत्मज्ञान के गुरु और चेला दोनों ही नष्ट हो जाएंगे और मरणोपरांत उन्हें मोक्ष भी नहीं मिलेगा।

विष्णु–विष्णु तूं भण रे प्राणी। पैंके लाख उपाजूं।

हे प्राणी! तूं निरन्तर विष्णु का जप कर, जैसे पाई–पाई करके लाखों रुपये एकत्र हो जाते हैं वैसे ही निरन्तर विष्णु जप से अनन्त पुण्य संचित हो जाते हैं।

विष्णु विष्णु तूं भण रे प्राणी। इस जीवन कै हावै।

इस जीवन के भले के लिये, हे प्राणी। तूं निरन्तर विष्णु–विष्णु जप कर।

क्षण–क्षण आव घटंती जावै। मरण दिनों दिन आवै।

क्षण–क्षण करके तेरी आयु घटती जा रही है और मृत्यु नजदीक आ रही है।

ज्यूं–ज्यूं लाज दुनी की लाजै। त्यूं–त्यूं दाब्यो दावै।

भगवद्प्राप्ति के इस मार्ग पर लगने के बाद तुझे दुनियां की लोक–लज्जा से नहीं डरना चाहिये वरना तो दुनियां तूझे और दबाएगी और दु:ख देगी।

•••

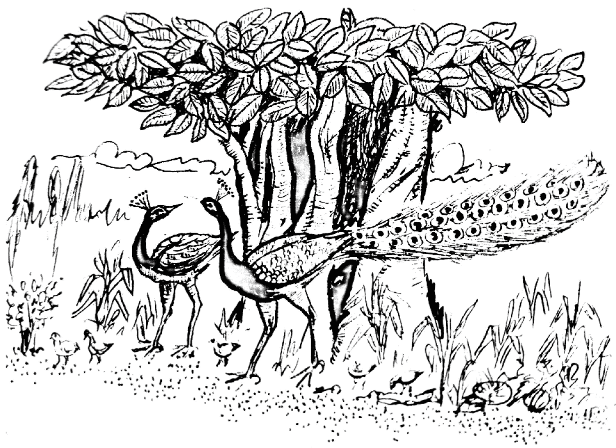

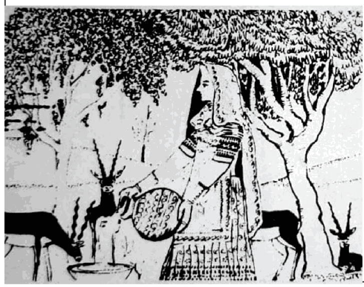

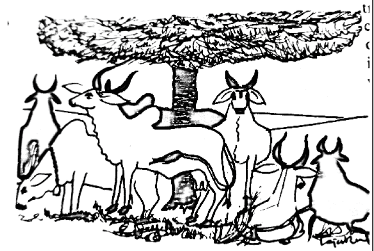

जाम्भाणी संत सूक्तियाँ

तेजोजी चारण

भगवंत हुंता छानै, कित छिप किजै चोरी।
भगवंत नै सब सूझै, गढ़ दरवाजा मोरी।।

भावार्थ – भगवान सर्वत्र व्याप्त है, वह हमारे सब कर्मों का साक्षी है। पाप कर्म उससे छुपाने असम्भव है।

साम्य जप्पां सुख उपनुं, जग मा सुख न जाण्य।
हीरद तेजा हेत करि, विसनों विसंन बखाण।।

भावार्थ – संसार में सुख नहीं है, सुख तो भगवान का स्मरण करने में ही है। हृदय में भगवान से प्रेम करते हुए उसके विष्णु नाम का जप करो।

करि प्रनाम लै नाम, कर्म क कारण सारण।
करि प्रनाम लै नाम, साम्य संकट उबारण।
करि प्रनाम लै नाम, पाप जो परलै करिसी।
करि प्रनाम लै नाम, अंत आत्मा उधरिसी।।

भावार्थ– भगवान के समक्ष प्रणिपात करके उनका नाम स्मरण करने से वे संकटों से उबारते हैं, पापों का नाश करते हैं और मरणोपरांत मुक्ति प्रदान करते हैं।

एको ग्यांन ध्यान पण्य एको, अपरंपर थानक एको इ एक।
भरमी दुनिया भेद न जांणै, आडा उभा राह अनेक।।

भावार्थ – ज्ञान, ध्यान आदि द्वारा जिस को प्राप्त किया जाता है वह अपरम्पर तत्त्व वास्तव में एक ही है। इसकी प्राप्ति के अनेक मार्ग है। भ्रमित लोग इसका भेद नहीं जानते।

डेल्हजी

अप्रवाणी जल कीव न पैसी, इधकन्न बोली सभा मां वैसी।
चौहटबात न कहियैपराई, सभा मां बोल बोलियै विचारी।।

भावार्थ– बिना थाह लिए जल में प्रवेश, अपने घर बैठकर परनिंदा तथा सभा में बिना विचारे और आवश्यकता से अधिक नहीं बोलना चाहिए।

पद्मजी

आंम मौर नीचा नवै, एरण्ड ऊपर जाय।
करै ओछा से प्रीतड़ी, फिर पीछै पछिताय।।

भावार्थ– सज्जन व्यक्ति सम्मान और संपत्ति पाकर मीठे फलों से भरे आम के वृक्ष की तरह नीचे की ओर झुकता है पर दुर्जन आदमी अल्प संपति पाकर भी थोड़े से कटु फल वाले अरंडी की तरह ऊपर की ओर जाता है। किसी से मित्रता करते समय पहले सावधानी से उसके गुण–दोष की पहचान कर लेनी चाहिए।

मन मोती अरु दूध का, ज्यां कां यही सुभाव।
फाट्यां पीछे ना मिले, क्रोड़न जतन कराव।।
अगनी दाह मां पालवे, कर ही पालण तेल।
वचन दग्ध ज्यां कां हिया, हिरदै पड़ गया छेल।।

भावार्थ– मन, मोती और दूध एक बार फटने पर करोड़ उपाय करने पर भी दोबारा उसी स्वरूप में नहीं आते। इसलिए सवाचेत रहें, अग्नि से जली हुई बाहर की चमड़ी औषधि लगाने से ठीक हो जाती है परन्तु कटु वचनों से जलाए हुए हृदय के कोई औषधि नहीं लगती।

आधी सूंड रही जल बाहर, तब गज ध्यान लगायो।
गरुड़ छोड़ निज चरण धाय कर, गज को दुःख मिटायो।।

भावार्थ– भगवान के शरणागत रहने वालों की वे गजेन्द्र की तरह रक्षा करते हैं। मन की गति से भी तेज चलने वाला वाहन गरुड़ भी भगवान को तब धीमा लगता है जब वे संकट में पड़े हुए अपने भक्त को बचाने के लिए जाते हैं।

खेत सूके बिरखा भई, अमृत वर्षा नीर।
मीन मरया सागर भरे, तो कोन काज बलबीर।।

भावार्थ– कितना ही अच्छा कार्य हो अगर समय पर न किया जाए तो वह बेकार है, जैसे फसल सूखने के बाद अमृत के समान फल देने वाली वर्षा भी किसान के किस काम की और मछली के मरने बाद सूखा सागर अगर लबालब भर जाए तो उस मछली के किस काम का।

त्रास आस भरी लगी, कद पुरवै करतार।
पलक वर्ष सम जात है, या तुम लेहूं विचार।
हिरदा फाटै कंप ज्यूं, छिन छिन लेत उसास।
पदमैयो स्वामी भणै, म्हारी आण मिटाओ त्रास।।

भावार्थ– भगवान की प्राप्ति में देर लगती है तो भक्त व्याकुल हो जाता है उसे एक पल भी वर्ष के समान लगता है, उसे लगता है कि जैसे हृदय फट जाएगा, वह दीर्घ श्वास छोड़ते हुए भगवान से प्रार्थना करता है कि – अब यह वियोग सहन नहीं होता शीघ्र ही मुझे दर्शन दो और इस पीड़ा का शमन करो।

व्याह वैर अरु प्रीत राजा, बरोबर से कीजिए।
जात योग्य सुजान सुंदर, जाय सगपन कीजिए।।

भावार्थ– विवाह, दुश्मनी और प्रेम समान अवस्था वालों के साथ ही निभता है। लड़के–लड़की का रिश्ता करते समय यह अवश्य देखें की वह योग्य, बुद्धिमान, सुंदर और स्वजातीय हो।

मान सरोवर हंसा देख्या, काग नजर नहीं आवै।
सागर नागर शीर पड़यो जब, नाडूल्यां कुण न्हावै।।

भावार्थ– समुद्र के सम्पर्क में आने वाले को छोटै तालाब से कोई मतलब नहीं रहता, उसी तरह जिनको परमात्मा से प्रेम हो जाता है उन्हें संसार फीका लगने लगता है, परन्तु ऐसी स्थिति किसी विरले को ही प्राप्त होती है क्योंकि मानसरोवर पर हंस ही निवास कर सकते है कौए की वहां तक पहुंच नहीं होती।

ज्यो जाकै सरणै रहे, जाकी जानै लाज।
उलटे जल मच्छी चढ़े, बह्या जात गजराज।।

भावार्थ– नदी का तीव्र वेग सह न सकने के कारण बड़े–बड़े शक्तिशाली गजराज जल के साथ ही बह जाते है जबकि एक छोटी–सी मछली, जिसने जल की शरण ली है, जल ही उसका जीवन है वह जल के सामने बहती है। शरणागत की रक्षा का भार शरण्य पर होता है।

डूंगरिया रा बाहला, ओछा तणां सनेह।
बहता बहै उतावला, अंत दिखावै छेह।।

भावार्थ– छोटी पहाड़ी पर बहने वाला बरसाती नाला और घटिया आदमी द्वारा प्रदर्शित प्रेम क्षणिक होता है, कब गायब हो जाए पता ही नहीं चलता।

कील्हजी

पींडत हुं का गुण गल्य, गांव वसीयो गींवार।
गींवर हुं का गुण गल्य, बारे बंधीया कुंभार।।
नागर वेल का गुण गल्या, चुंटि चौपदा चराइ।
गुणवंती का गुण गल्य, नाह नीगुण परणाइ।।
जीमै कंत परूसि क, धण कंठ झुरव खड़ी।
कीसन भगत कील्हो कह, वा सुहब रां... न बापड़ी।।

भावार्थ– गंवारों के गांव में निवास करने वाले विद्वान पंडित को कौन पूछता है। कुम्भकार के बाड़े में गधों के साथ बंधा हाथी अपनी शोभा खो देता है। औषधिय गुणों से भरपूर नागर वेल को जब काटकर पशुओं को खिलाने के लिएडाल दिया जाता है तब उसके सब गुण मिट्टी हो जाते हैं। गुणवान स्त्री को जब मुर्ख पति मिल जाता है तो उसके गुणों का सम्मान नहीं होता। अपने पति को भोजन परोसने के बाद पास खड़ी होकर अनावश्यक रूदन करती है वह स्त्री अबला नहीं अपितु महामुर्ख है।

रतन विसन को नांव, दुलभ संसारि उदाधी।
विसन नांव बाखाणी, हेत करि काया साधी।।
रतन विसन को नांव है, पायो ता माथै क्रम।
किसन भगत कील्हौ कहै, सेइ धन्य से कर करम।।

भावार्थ– विष्णु का नाम अनमोल रत्न है, संसार में इसकी प्राप्ति दुर्लभ है। विष्णु से प्रेम करते हुए उनके नाम का स्मरण करो यही इस देहधारण की सार्थकता है। भगवद्भक्त कील्हजी कहते हैं की जिसकी कर्म अच्छे होते हैं उसे ही विष्णु का नाम मिलता है, धन्य है वे जो यह नाम जपते हैं।

निरवाह करत जन नारायण, असरण सरण विद सूं।
कोल कर जोड़या औचरे, सहंस कला गुर जंभ सूं।।

भावार्थ– अशरण को शरण देने वाले भगवान अपने जन का पालन पोषण करते हैं। हजारों कलाओं से युक्त गुरु जाम्भोजी से कोल्हजी हाथ जोड़कर में शरण में लेने की प्रार्थना करते हैं।

तुमे सुरा सुख दियण, तुमे असुरा संघारण।
तुमे जगतपति जगदीस, तुमे सिध साध सुधारण।।
तुमे जग जीवा जीव, तुमे केवल अरु कांमी।
तुमे त्रिगुण पति आद, तुमे तत अंत्रजामी।।
सकल सिरजत सांइयां, करतार आप आया कले।
वीनती कोल बलबल विसन, सारंग धर संभराथले।।

भावार्थ– देवताओं को निर्भय करने के लिए असुरों का संहार करने वाले, इस जगत के स्वामी जगदीश, सिद्धों और साधुओं के उद्धारक, संसार के प्रत्येक जीव के पालक, कैवल्य ज्ञानी तथा सकामी, तीनों गुणों को धारण करने वाले आदिनारायण, तत्त्व के प्रकाश अंतर्यामी, सृष्टि की रचना करनेवाले तुम भगवान स्वयं कलियुग में सारंगधर विष्णु ही समराथल पर गुरु जाम्भोजी के रूप में विराजमान हो। कोल्हजी कहते हैं की मैं आपकी बार–बार वंदना करता हूँ।

विद्या तो वर नागरी, मोख संसारा तारी।
विद्या मित्र विदेस, खण्ड प्रखण्ड पयारी।
विद्या आदर दान, मान पण विद्या पावै।
विद्या रुप करुप, जहाँ जाय तहाँ समावै।
विद्या नागरबेल सी, चतरा नर रिझावणी।
मीठी मिसरी खांड सी, कील्ह कहे मन भावणी।।

भावार्थ– विद्या वह सर्वोत्तम सुसंस्कृत कला है जो सम्यक् प्रकार से ग्रहण करने पर मुक्ति देकर इस संसार से तार देती है। विदेश में विद्या सच्चा मित्र है। संसार के समस्त भूभागों में विद्या को प्यार प्राप्त होता है। विद्या आदर, दान, मान प्रदान करती है। विद्या अनुकूल–प्रतिकूल देश, काल परिस्थितियों में अपने बल से प्रभाव कायम करती है। विद्या नागर बेल की तरह अद्भूत है, यह चतुर पुरुषों को मोहित करती है। विद्या ग्रहण करने पर यह मिश्री–खाण्ड की तरह मिठास देती है। कील्हजी कहते हैं कि विद्या मेरे मन को बहुत भाती है।

सुगणा तो सदा सुरंग, रंग सुगणा मां दीसै।
सुगणा था इकवे किया, सुगण मनि इम्रत वसै।।
सुगण माय बाप का भगत, सुगण परमारथ भावै।
सुगण सदा सपीयार, सुगण गनि बुरौ न आवै।।
सुगण न पूजे लख सौ, सुगण मन्य धीरज रहै।
सुगणा सुरगै जायस्यै, यौ नारायण कील्हो कहै।।

भावार्थ– गुणवान सदा दिव्यानन्द में रहता है, आनंद उसके भीतर से छलकता है। वह सबकी भलाई चाहता है, उसके मन में सबके लिए शुभ कामना रहती है। वह मातृ–पितृ भक्त होता है, परमार्थ करना उसके स्वभाव में होता है। वह सबको स्नेह करता, किसी का बुरा नहीं चाहता। वह धैर्यवान होता है, उसकी निष्ठा पल–पल में परिवर्तित नहीं होती। कील्हजी कहते हैं की ऐसा गुणवान भगवद्धाम प्राप्त करके भगवद्स्वरुप ही हो जाता है।

अड़क सदा आंटो रहै, अड़क ओगम नहीं छाडै।
अड़क मूंहि कुवचन कहै, अड़क आपौ ही भांडै।।

अड़क दहै पाड़ोसी, राड़ी अणहुंती मांडै।
अड़क सदा उझड़ि वहै, अड़क चाले नहिं डांडै।।
अड़काइ आठु पहरी, निस वासरि उलझयौ रहै।
अड़क न सिरजी देवजी, नारायण जी कोल्हो कहै।।

भावार्थ– हठी उदण्ड सदा वक्रगति चलता हे, वह अवगुण नहीं छोड़ता। मुँह से अशिष्ट भाषा बोलता है और अपनी प्रतिष्ठा को नष्ट करता है। पड़ोसियों को दु:ख देने के लिए अकारण उनके साथ झगड़ता है। वह सदा कुमार्ग पर चलता है, उसे सुमार्ग पर चलना अच्छा नहीं लगता। दिनरात वह अपने घंमड में ही चूर दूसरों के साथ द्वंद्व में उलझा रहता है। कील्हजी भगवान से प्रार्थना करते हैं आप ऐसे घमंडी उदण्ड का सृजन ही मत किया करो।

किसो तया सणगार, नारि ज होय निलजी।
किसो तुरी को तेज, सहे चांमठी बाजी।।
किसो पुरिष को बोल, बोल बोलियै न पालै।
किसो नदी को नीर, जको सूकै उन्हालै।।
निजल नारी माठौ तुरी, खर लज बाह सुकणौ।
तन मन रा ठोल, पुरिष ज वाचा चूकणौ।।

भावार्थ– लज्जाहीन स्त्री का श्रृंगार व्यर्थ है। घोड़े की वह सुंदरता बेकार है अगर वह चाबुक मारने पर चलता है। जो पुरुष अपने वचन का पालन नहीं करता उसका कथन विश्वास करने योग्य नहीं है। वह नदी किस काम की जो गर्मी की ऋतु में सूखी नदी केवल आकृति से अपने होनो पना सिद्ध करते हैं, उपोगिता से नहीं, ऐसे ही वाचाचूक मनुष्य का देहधारण व्यर्थ है।

विण दीन्हा फल एह, (पारधी) ज्यौं भुवें भिखियारी।
कांधै पाछै छाज, हाथ सिर धणख बुहारी।।
तन छीना वसतर धौ धिग, बोझ सिरि सहे कपाली।
काया सदा कुचील, नीर नहीं देह पखाली।।
पगे न जुड़ै पांणही वै, रीण वासरि साथरि पड़ि रहै।
विसन भगत कील्हो कहै, विण दिया फल ए लहै।।

भावार्थ– अपने उदर पोषण के लिए जो दूसरे जीवों को मारता है उसका फल यह है कि वह शिकारी सारा जीवन एक भिखारी की तरह भटकता फिरता है। अपने कंध पर मारे हुए जानवर को डालने का झोला, हाथ में धनुष बाण, वस्त्रहीन शरीर, कपाल का बोझा बना हुआ सिर, स्नान से वंचित मेली–कुचौली देही, नंगे पैर और जंगल में ही पड़ा रहना उसका जीवन होता है। वह जीव हत्यारा यहाँ भी दु:ख पाता है और आगे भी घोर नरकों में डाला जाता है। विष्णु भगत कील्होजी कहते हैं की सामर्थ्यवान होने पर भी दान न देने वाले कृपण को भी ऐसा ही फल मिलता है।

ज्यौ चंद रिप राह, रीण रिप सूर सवाई।
कुंजर वन को रिप, नीर रिप अगनि उपाई।।
पिनंगा को रिप गुरड़, हेम रिप सुहागो होई।
पांणी को रिप पूंगण, तणि रिप मंगल जोई।।
कैरव को रिप इंद सुत, ऐरापति कह रे भाई।
पाप को रिप विसन नांव, भणै कील्ह सिवरौ सही।।

भावार्थ– जैसे चंद्रमा का शत्रु राहु, रात्रि का सुर्य, वन का हाथी, अग्नि का पानी, सर्पों का गुरुड़, सोने का सुहाना, पानी की हवा, बुझी बत्ती दीपक की, ऐरावत पति इंद्र का पुत्र अर्जुन कौरवों का शत्रु है ऐसे ही पापों का शत्रु विष्णु का नाम है, कील्हजी कहते हैं कि इसका स्मरण करो।

अजूं कया मां कोप, अजूं रीस मंनि आवै।
अजूं पांच वसि नहीं, अजूं मन दौह दिस धावै।।
अजूं भूख तिस घंणी, अजूं परतायत ईणां।
अजूं वाद अहंकार, अजूं माया मन लीणां।।
एक जीव बैरी अता, कुसंग साथ घट सूं चलै।
कलिकाल कील्हो कहै, किसन किसी परि म्हां मिलै।।

भावार्थ– अभी तक कर्मों में क्रूरता है, मन में क्रोध है, पंचेन्दियां वश में नहीं है, मन दसों–दिशाओं में भाग रहा है, भूख और तृषा भजन में बाधा डाल रही है, चाहना यथावत है। वाद–विवाद और अहंकार की प्रबलता है,

मन को माया ने मोह रखा है। जीव तो एक है इसके शत्रु इतने है, पिछले अनेक जन्मों के कुसंस्कार भी हृदय पर कब्जा करे बैठे हैं। कलियुग का भयंकर काल चल रहा है, कील्हजी कहते हैं कि ऐसे में कैसे पार पड़ेगी, भगवान हमें किस विध मिलेंगे।

शिवदासजी

मोमण हुवे सो वीरा आपो रे मारे, अवरां मारण केहा।
मोमण हुवे सो वीरा टूटी रे सांधै, दुशमण घातैला बेहा।।
भरी सभा मा बीरा पड़दो रे पाड़े, दोरे जैला दुशमी ऐहा।।

भावार्थ– सच्चा साधक तो स्वयं के अहं को मारता है, दूसरों को मारना उसका उद्देश्य नहीं है। वह विध्नकारी लोगों द्वारा समाज में पैदा किये गए वैमनस्य को मिटाकर आपसी सौहार्द और भाईचारे का भाव जगाता है। लोगों के सामने किसी के दोष प्रकट करना पाप है, साधक को ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि सर्वथा कोई निर्दोष नहीं है।

माटी सूँ वीरा रळमिळ रे जैली, कुंकुंभ वरणी देहा।
ऊपर हाली भइया हल रे खड़ैला, ढोर चरैला ऐहा।।

भावार्थ– बहुत यत्न से पाल–पोषकर रखा हुआ यह सुन्दर शरीर एक दिन मिट्टी में मिलकर मिट्टी हो जाएगा। कुछ समय बाद तो लोग उस मिट्टी को भी भूल जाएंगे, उस स्थान पर किसान हल चलाएगा और पशु घास चरेंगें। जीन की ऐसी अकाट्य परिणति को देखते हुए क्या परमात्मा को विस्मृत करवा देने वाला इतना पसारा उचित है?

जोधोजी रायक

मोमण आवैला हो जी, कर कुरजां ज्यूं डार।
मोमण मिलैला हो जी, लांबी बांह पसार।।
मोमण बैसेला हो जी, हंसां रै उणियार।
मोमण बोलैला हो जी, कर मोरां ज्यूं झिंगार।।

भावार्थ– एक सद्गृहस्थ द्वारा अपने घर पर भगवद्प्रेमी साधकों के

आगमन के इंतजार में की गई कल्पना में साधक की सुन्दर परिभाषा है– वे कुरजां पक्षी की तरह अनुशासित और शान्तिप्रिय है, मिलते समय वे अति उत्साह के साथ निश्छल प्रेम प्रदर्शित करते हैं, ध्वल परिधान धारण किये वे बैठते हैं तो ऐसा लगता है जैसे हंस बैठे हों, बोलते समय ऐसा लगता है कि जैसे मेघों को देखकर हर्षित हुआ मोर बोल रहा हो।

कान्होजी

एकळवाई थळ सिर ऊभो, केवळ ग्यांन कथै करतार।
सुरग देवंण आयो सुचियार, विसंन जपौ दसवैं अवतार।।
त्रिषा नींद षुध्या तिस नांहीं, जोवो भगतौ आळीगार।
आदि विसंन संभरथळ आयौ, लंक तंणों गढ़ लेवंणहार।।

भावार्थ– स्वयम्भू भगवान श्री जम्भेश्वर समराथल पर विराजमान होकर कैवलज्ञान प्रदान कर रहे हैं। भगवान विष्णु के दसवें अवतार के रूप में अपने सच्चे भक्तों के उद्धार के लिए भगवान आए हैं। भूख–प्यास रहित उनक चिन्मय गुणों से अलंकृत स्वरूप का भक्तों तुम दर्शन करो। त्रैतायुग में लंका विजय करने वाले राम यही है। समराथल पर आने वाले यही आदि विष्णु है।

जाचक रो कहा जांच, जांच राजा जुगपत्ती।
दीन्है रो कहा देत, आप हनीं होत त्रिपत्ती।
सुरपत नरपत साह, राव राजा र भिखारी।
लख चौरासी जीव, एक दातार मुरारी।
जांचौ तो जांच जरणारजन, वेद पुराणां बांचियै।
कान्हिया जांच किरतार नै, जाचक रो कहा जांचियै।

भावार्थ– याचक से क्या मांगना, मांगो तो जगतपति से मांगो। याचक क्या दे सकता है वह तो स्वयं तृप्त नहीं होता। देवराज, नरपति शाह, राव, राजा और चौरासी लाख योनियों के जीव सब भिखारी है, दाता तो एक भगवान है, याचना करनी है तो उससे करो, वेद–पुराण जिसकी महिमा का गान कर रहे हैं। कान्होजी कहते हैं कि मैं उस करतार से याचना करूंगा, याचकों से क्या याचना करूँ।

आमो काट अजांण, जेत बम्बूल जमाये।
सोवन कुस घात, खेत कोद्यूं का बाये।।
कुल्लो करै कपूर, किनक चरब्बी चढ़ी।
बाल चंदण बावमो, मांहि मुरख खल रंधी।।
भरम रै मांहि भूल्यो फिरयो, नीच करम गत नान्दियो।
राम रो नाम खोयो रतन, कोड़ी बदलै कान्हियो।।

भावार्थ– आम का वृक्ष काट कर जो बबूल की बाड़ करता है, सेवण घास को उखाड़कर जो कोदो की खेती करता है, कपूर से कुल्ला करता है, स्वर्ण भस्म खाकर शरीर को बलिष्ठ करके पापकर्म करता है, खल को पकाने लिए चंदन की लकड़ी जलाता है ऐसे ही भ्रम में भूला हुआ मनुष्य नीच कर्म करके दुर्गति को प्राप्त होता है। कान्होजी कहते हैं कि यह दुर्लभ मानव शरीर प्राप्त करके जो जीव भगवन्नाम की कमाई न करके विषय कमाता है उसने कोड़ी के बदले रत्न खो दिया है।

नर निरहारी झंभ निकलंकी, अंनंत अंनंत गुर एक अछै।
पंणमियां जके नर पारि पहुंचिसी, पांत्रीयल नर रोयसी पछै।।

भावार्थ– अनंत गुणशाली, निराहारी, पावनस्वरूप गुरु जाम्भोजी मनुष्य बनकर बेठे हैं, जो इनके बताए मार्ग पर चलते हैं वे पार पहुँच जाते हैं, अवहेलना करने वाले रोते रहते हैं।

आई लहरि संमंद री लोकां वूठो छै ते वाहौ।
वारो वारि न लभिसी प्रांणी, रतन कया रो दावौ।।
कांन्हौ कहै सुंणौ कांने कथ, अवगति गुर मांहरो अछै।
वीकांण देस विसंनजी परगट, परंम गुर परसियां पछै।।

भावार्थ– आनंद प्रवाह उमड़ पड़ा है, जैसे रत्नाकर अपनी लहरों में भरकर रतन प्रदान करता है, समय पर बरसात होने पर अच्छी खेती होती है, ऐसे मनुष्य शरीर की प्राप्ति का सुरदुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ है, ऐसा मौका बार–बार नहीं मिलता। कान्होजी कहते हैं की कानों से महिमा सुनकर मैं दर्शन करने आया हूं, बीकानेर क्षेत्र में विष्णु भगवान प्रकट हुए हैं जो परम गुरु के रूप में हमारे सामने विराजमान है।

बावन आषर भेद बोह, पवंन कियो पढाय।
तेणि गुर उपरि वारि तंन, प्रणवे लंगू पाय।।
बरस बौहत बांणारसी, और पढैं अनेक।
घरि मिळियो विदिया धंणी, आण दिया गुर एक।।

भावार्थ– वर्णमाला के बावन अक्षरों में बहुत भेद भरा हुआ, इन्हें पढ़ाकर मुझे पवित्र कर दिया है। उस गुरु के ऊपर मैं बलिहारी जाता हूँ, उनके चरणों में प्रणिपात करता हूँ। बहुत वर्ष बनारस और अन्यों जगहों पर जाकर अनेकों विद्याएं पढ़ने का क्या मतलब है जब स्वयं विद्याधणी मुझे घर पर ही मिल गया है, मैंने सभी दूसरे सहारों का परित्याग करके एक गुरु जाम्भोजी का आश्रय ग्रहण कर लिया है।

जाति वरंण जांह कुल नहीं, ऊंच नीच न कहाय।
सुरति निरति दोऊं धरे, तो उस मारग जाय।।

भावार्थ– परमात्मा की प्राप्ति में जाति, वर्ण और कुल का ऊंचा–नीचा होना कारण नहीं, जो परमात्मा को याद करता है और उसके ध्यान में तल्लीन रहता है वह उसे ही मिलता है।

जिण वासग नाथियो, जिण कंसासुर मारे।
जिण गोवल राखियो, अनड़ अगाली उधारे।।
जेण पूतना प्रहारी, लिया थण खीर उपाड़ै।
जिणी कागासुर छेदीयो, चंदगिर नावै चाड़ै।।
एतला परवाड़ा पूरीया, अवर परवाड़ा प्रभु सहै।
अवतार वेद जंभ तंणौ, कान्ह तंणै अवतार कहै।।

भावार्थ– जिसने बलशाली नाग को नाथा, कंस को मारा, गोकुल की रक्षा की, बड़े–बड़े सिरमौर उद्दंडों को सुधारा, स्तनपान करके पूतना का उद्धार किया, कागासुर का वध किया, गोवर्धन धारणा किया, इतने तथा और भी पराक्रम जिस प्रभु ने किये थो, कान्होजी कहते हैं की उसी वेदवंदित परमात्मा ने जम्भेश्वर के रूप में अवतार लिया है।

केवल हंस कही जिभ संकड़ी, बोह नामी रे बापड़ी।
मोकळी वहंती महमांण, जप नारायण जीभड़ी।

भावार्थ– वही जीभ सार्थक है जो बकवादी नहीं होकर क्षीर–नीर विवेकी हंस की तरह केवल भगवन्नाम का ही आहार करती है। धन्य है वह बेचारी जीभ जो संसार के विषयों का कथन करते हुए तो अड़ जाती है परन्तु नारायण नाम का जप करते समय अति उत्साह से तेज गति से चलती है।

पण धन मणी फुंणिंद, वन भीतर वासंदर।
अक्र सीप इन्द्री अवधूत, कलहै काया जिम कायर।।
मानस सर हंस जिम माछली, हुवै बाल माता हियौ।
महमांण नाम मन मंडली, कान्ह हम हृदै रहावियौ।।

भावार्थ– कंजूस को धन, नाग को मणि, अग्नि को वन, सीप को मोती, अवधूत को ब्रह्मचर्य, कायर को शरीर, हंस को मछली और माता को जैसे बालक प्रिय होता है, कान्होजी कहते हैं की ऐसे ही मेरे हृदय को भगवान का नाम प्रिय लगे।

अज्ञात

बाड़ कीजै जतन नै, पालण नै हरियाव।
बाड़ चरै जो खेत नै, करणो कासूं जाय।।

भावार्थ– खेती को नुकसान पहुँचाने वाले पशुओं से सुरक्षा के लिए खेत की बाड़ की जाती है पर बाड़ ही जब खेत को खाने लगे तो खेत का बचना असम्भव है।

राजिये राज तज्यौ जीव काजै, गुर सिख मांगी भीखा।
चंद छिप्पै निस होय अंधियारौ, गुर विण एह परीखा।।

भावार्थ–अपने जीव के उद्धार के लिए राजाओं ने राज त्याग दिया तथा गुरु के आदेश से भिक्षा मांगी। चंद्रमा के छिपने पर जैसे रात अंधियारी हो जाती है ऐसे ही समर्थ गुरु के बिना जीवन अंधकारमय हो जाता है।

रे मंन झूठा करि पांच अपूठा, ज्यौं चालूं ज्यौं चाली।
मंन हठ मांण मेर जे छाडो, कूड़ कपट सौह पाली।।
पालो प्रीती पुंवण घंण संचौ, नर निरहारी दीठो।
हीर पखो कांय हुजति साझौ, मंन झगड़ालू झूठौ।।

भावार्थ–अरे झूठे मन, तूं काम–क्रोधादि पंच विकारों को छोड़ दे और जैसा मैं कहता हूँ वैसा कर। हठ, अभिमान, मेरापन, झूठ और कपट का परित्याग कर दे। भगवान श्रीजाम्भोजी से प्रेम कर, जिनका शरीर वायुप्रधान और निराहारी है, वह मनुष्य के रूप में दिखाई दे रहे हैं। अनमोल रत्न को छोड़कर क्यों व्यर्थ का विवाद करता है। अरे मन, तूं झगड़ालू और झूठा है।

सुकरत सुरग्यैं सुहेला हुइयै, मन मां देखि विचारि।
गरथ विहूंणौं जिसो वौपारी, क्रिया विहूंणौं हारी।।
संबळ विहूंणौं कोस न चालियै, घर है भुंय जळ पारी।
दिन दिन आव घटै सौणि मंनवा, ज्यौं छक्यौ विधि सारी।।

भावार्थ–यह मन में निश्चय कर लो की अच्छे कर्म ही सुगमतापूर्वक स्वर्ग की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करेंगे। धनहीन व्यापारी की तरह कर्महीन मनुष्य हार जाता है। जैसे बियावान मार्ग की यात्रा में भोजन सामग्री साथ न रखने से भूखों मरना पड़ता है वैसे दुस्तर भवजल से तरने के लिए पुण्यकर्मो का संबल आवश्यक है। दिन–प्रतिदिन आयु घटती जा रही है, तूं निश्चिंत होकर कैसे बैठा है।

जैह मंन्य खोटा तैह मंन्य तोटा, नं करि पराई नंद्या।
हिरदै जो हरष्यौ हरि जपै, तो सत सीझै बंदा।।

भावार्थ–मन में दूसरे के प्रति दुर्भावना स्वयं की दुर्गति का मूल कारण है। जो पराई निंदा नहीं करता तथा आत्मानंद में निमग्न होकर भगवान के नाम का जप करता है वह मनुष्य वास्तव में परिपक्व है।

विसंन जपंता पाप न रहिस्यैं, पहि उतरिबा पारी।
सुरां सूं मेळौ कांन्ह दीसांवरि, गोठी मिलौ दीदारी।।

भावार्थ–विष्णु का जप करने से पाप समाप्त हो जाएंगे और जीव इस भवसागर से पार ऊतर जाएगा। भगवद् प्रदत्त मार्ग पर चलने से देवताओं से मिलन होगा और सत्पुरुषों की साक्षात सन्निधि प्राप्त होगी।

जैसो कुमावै तैसो फळ पावै।
कुंमांई लह्यौस्यैं आपो आपणी।

भावार्थ– हम जैसा कर्म करते हैं हमें वैसा ही फल मिलता। संचित कर्मों का संग्रह ही भविष्य में प्रारब्ध बनकर फल प्रदान करता है।

अवसर जांहै न चेतियौ, वळे न लाभै वेर।
कूड़ै जीवण कै कारणै, मन्यै न कीजै मेर।।
मं करि मेरा नांहि तेरा, कळपि भार न लीजियै।
छोड मंन मुखि हुय गुरमुखि, जो गुर कह्यौ स कीजियै।।
कांम क्रोध कलोभ परहरि, ध्याय मन सूधो करे।
जुगि चौथै विसंन परगट, चेति जीव इण औसरे।।

भावार्थ–अवसर जा रहा है परन्तु अभी तक चेते नहीं हैं, यह मौका फिर नहीं मिलेगा। इस क्षणभंगुर और नश्वर जीवन को पाकर संसार में ममता नहीं करनी चाहिए। जिसे तूं अपना मानकर गर्व करता है वह तेरा नहीं है फिर इस कल्पित झूठे भार को क्यों उठाता है। मनमुखी मार्ग को छोड़कर गुरमुखी हो जाओ, वही करो जो गुरु ने कहा है। काम, क्रोध, कुलोभ का परित्याग करके, सुचि मन से ईश्वर का ध्यान करो। इस चौथे युग कलिकाल में गुरु जाम्भोजी के रूप में विष्णु प्रकट हुए हैं, हे जीव! सावचेती से इस सुदुर्लभ अवसर का लाभ उठा ले।

पारि गिरांय वसेरौ कहियै, नर निरहारी आयौ।
च्यारि चहूंचकि फिरै दुहाई, जिद झबकि जगायौ।।
जिद झबकि जगायौ मोमिण, न्हांणौ न्हांण करंता।
एक मंनि एक चित करौ बंदगी, कंवळां ज्यौं विगसंता।।
सुख मांणिक अळियौ मत भाषौ, बोहड़ि न होयसी फेरो।
जळंम जळंम को पछतावौ चुकावौ, दे पार गिरांय वसेरौ।।

भावार्थ–वह निराहारी ईश्वर गुरु जाम्भोजी के रूप में नरदेह धरकर तुम्हें पार उतारने के लिए आया है। चारों दिशाओं में उसकी जय जयकार हो रही है, उसने हठपूर्वक शीघ्रता से मुमुक्षुओं को तारने का संकल्प लिया है। स्नानादि से देह को निर्मल करके अपने चित्त को एकाग्र करें। जैसे सुर्य को देखकर कमल खिलता है वैसे ही प्रफुल्लित होकर अपने ईष्ट की उपासना करें। किसी को कुवचन मत कहो, परस्पर सदभाव से सुखपूर्वक रहो क्योंकि यहाँ दोबारा आना नहीं होगा। असंख्य जन्मों का भटकाव समाप्त करके भगवान के धाम में परम विश्राम प्राप्त करो।

रगत पीत न धात दस दर, जुगति बांणि जोजनी।
रहति अंति गति मुगति मारग, जोग मुंद्रा उंनमंनी।।
व्रंभ ग्यांन नियांन केवळ, नीरति सुरति नीरंजंणौ।
उपख्यान वेद उमेद इह निस, ग्यांन गति मंन मंजणौ।।
संसार का आकार वसि करि, वीसन ईस विसंभरुं।
चिरत एक अंनेक चक्रत, मुकति दाता महिधरुं।।

भावार्थ– जो दशों द्वार वाले रक्त, रज, धातु से निर्मित शरीर के आश्रित नहीं है, जिनकी वाणी योजन पर्यत श्रव्य है। जो जीवन युक्ति और मरण मुक्ति का पाठ पढ़ाते हैं। जो सदैव योगियों की उनमुनी मुद्रा में ब्रह्मीभूत, कैवल्यज्ञानी निज ब्रह्मस्वरूप के ध्यान में तल्लीन रहते हैं। जिनके श्रीमुख से अहर्निश वेदवाणी निसृत होती है जो श्रोता के मन को परिमार्जित करके ज्ञान से प्रकाश से आलोकित करती है। जो ईश्वर विश्वंभर विष्णु संसार रूप में साकारित है वह मनुष्य शरीर से लीला करने के लिए मुक्तिदाता बनकर धरती पर गुरु जाम्भोजी के रूप में प्रकट हुए है।

पापां प्रीत तजौ मेरा जी हो, क्रिया करौ कमाई।
जम की भीड़ पड़ै मेरा जी हो, ता दिन विष्णु सहाई।।
विष्णु सहाई होय भाई, औघट घाट लंघावही।
जीव काजै दांन दीजै, अंति आडो आवही।।
आण को आराध मेटौ, जीव घात मत को करौ।
दया विहूणां जाय दोजग, प्रीत पापां परहरौ।।

भावार्थ–रूचिपूर्वक पाप करने की प्रवृत्ति का परित्याग करो और धर्मविहित कर्म का आधान करो। मृत्योपरांत जब यम की त्रास उपस्थित होगी तब विष्णु सहायता करेंगें। विष्णु जिसकी रक्षा करते हैं वह विकट संकटों से भी पार उतर जाता है। जीव के हितार्थ दान देना चाहिए अंत समय में यह काम आएगा। जीवों को कभी दु:ख मत दो, जो धर्म के नाम पर जीवहत्या को प्रोत्साहित करते हैं उस धर्म की उपासना नहीं करनी चाहिए। दयाहीन मनुष्य अवश्य ही नरक में जाएंगे। पापों से प्रीति मत करो।

जंभ गुरु जगदीस ईस नारायंण स्वामी।
निरपेषक निरलेप सकल घट अंतरजांमी।।
पेट पूठ नह ताहि, सकल कूं सनमुख दरसै।
पाप ताप तन जरै जाहि पद पंकज परसै।।
अखै अडोळ अनादि अज अवगत अलख अभेव।
स्वंसरूपी आप है जंभ गुरु जग देव।।

भावार्थ–गुरु जाम्भोजी जगदीश, ईश्वर, नारायण, स्वामी, निष्पक्ष, अनासक्त, सकल घटवासी, अंतर्यामी है। वे निराहारी है। उनकी पीठ किसी को नहीं दिखती, सबको उनके श्रीमुख का ही दर्शन होता है। उनके चरणाश्रित होने पर शरीर के ताप और जीव के पाप सब जल जाते हैं। वे अक्षय, अचल, अनादि, स्वंयभू, अद्भुत, अलक्षित, अभेद है। हे जम्भेश्वर जगत के स्वामी, आप जैसे आप ही हो, दूसरा कोई नहीं है।

जंभ गुरु जग देव भेव कोई विरळा पावै।
रहै सरण जो जीव बहुर भव जळ नहीं आवै।।
विष्णु सरूप अवतार परगट पोहमी में आए।
सतजुग विछरे जीव उनकूं आंन चिताए।।
विष्णु धर्म परगट कियौ आंन धर्म विटप विहंडनं।
संभरथळ परगट सही जोत रुप जग मंडनं।।

भावार्थ–जगत के स्वामी गुरु जाम्भोजी की महिमा को सम्यक प्रकार से कोई विरला ही समझ पाता है। जो इनके शरण में आते उनका पुनर्जन्म

नहीं होता, वे मुक्त हो जाते हैं। विष्णु के अवतार के रूप में धरती पर प्रकट हुए हैं। सतयुग में प्रहलाद के समय बिछुड़े हुए जीवों ले जाने के लिए वे आए हैं। इनके द्वारा विष्णु(विष्णोई) धर्म को प्रकट करने के कारण पाखंड धर्म के वृक्ष उखड़ गए हैं। संसार का रचयिता ज्योति स्वरूप समराथल पर प्रकट है।

कोरा चरु चहोड़ूं जी, जळ मंगाऊ गंग को।
झीनव का चावळ जी, दाळि हरी हरी मूंग की।
गावो घिरत मंगाऊं जी, दही मंगाऊं भैंस्य को।।
कासमीरी थाळी जी, लोटो मंगाऊं मुहंम को।
साध मोमिण जीमैं जी, अंचळ झोळी वीझणो।।
पाड़ोसंणि बूझै जी, पांहैणड़ा के ल्याइया।
म्हांनै सुरग वतांवैं जी रतन कया हीरे जड़ी।।

भावार्थ–कोरा घड़ा गंगाजल का भरकर मंगवाऊं। परिष्कृत किए हुए मीठे-मीठे चावल, हरे मूंगों की दाल, गाय के घी से बने हुए पकवान और भैंस का दही काश्मीरी थाली में परोसूं। महम (रोहतक) के पीतल के लोटे में जल भरकर दूं। मेरे मुमुक्षु साधु उस भोजन को प्रेमपूर्वक ग्रहण करेंगे और मैं अपने आंचल से उन्हें पंखा झलूंगी। मेरी पड़ोसन पूछती है कि तुम्हारे मेहमान क्या उपहार लाए? उन्होंने मुझे अमूल्य आत्मतत्व का दुर्लभ ज्ञान करवाते हुए मुक्ति प्राप्ति का मार्ग बताया है।

मेरी अंखिया फरुकै जी काग करुकै आंगणै।
पाड़ोसंणि बूझै जी, पांहैणड़ा कोई आयसी।
घोड़् यलां खुर वाजै जी, वळूं क वाजै घूंघरु।
साध मोमिण आए जी, धन्य दिहाड़ौ धंन्य घड़ी।

भावार्थ– मेरी आँख आज फड़क कर शुभ सगुण प्रकट कर रही है। आँगण में बोलता हुआ कौवा भी किसी मेहमान के आगमन की सूचना दे रहा है। मेरी पड़ोसन मुझे पूछ रही है कि क्या आज तुम्हारे कोई मेहमान आने वाला है ? घोड़ों के खुर बजने की आवाज आती है और रंगीन डोरी में बंधे हुए घुंघरू बज रहे हैं। आज मेरे घर मुमुक्षु साधु आए हैं, यह दिन और घड़ी धन्य है।

साध सुखी हो राजा भरथरी महा दुखी संसार।
पर उपगारी हरि क साधवा, भव दुख मेटणहार।।

भावार्थ–अक्षय सुख प्राप्त करने के लिए भर्तृहरि राजा से साधु बन गए क्योंकि संसार की आसक्ति में महान दु:ख और बंधन है। हरि के साधक परोपकारी होते हैं, वे स्वयं भी मुक्त हो जाते हैं और दूसरों का भी भवरोग मिटा देते हैं।

आसनोजी

इंव गुंणवंती कांमणी, निगणो मोरो नाह।
एकणि वास वसंतड़ां, अब क्यौं मेल्ह्यौ जाय।
धंण पुरांणी पीव नुवों, निति उठि झगड़ौ होय।
धंण पिछांणै पीव नै, आवागुवंण न होय।

भावार्थ–जीवात्मा परमात्मा का सनातन अंश है, यह निर्दोष, निर्विकार है परन्तु देह के साथ संबंध मानकर दोषी होती है। अन्तकरण में आत्मा और परमात्मा एक ही स्थान में निवास करते हैं फिर यह दूरी क्यों है? जीवात्मा रूपी स्त्री शरीर बदलने पर नये शरीर के साथ अपना स्थाई संबंध मान लेती है, यही बंधन का मूल कारण है, अगर वह पति परमात्मा के साथ अपने नित्य संबंध को पहचान ले तो उसका आवागमन मिट जाएगा।

पाळ पुरांणी जळ नुंवौं, हंसा केळ करांय।,
बाळापंण री प्रीतड़ी, चुंण चुंण हरि चुगांय।।
गिगंन मंडळ मां कोठड़ी, घुरै दमांमां घोर।
मंन मधकर सूं मिल रह्यौ, छेदया क्रम कठोर।।

भावार्थ– हंस रूपी जीव कर्मानुसार विभिन्न योनियों में जन्म लेता रहता है, जिस बार वह परमात्मा के साथ पुरातन प्रीत को पहचान लेता है, वह आनंदित होकर अहर्निस नामरूपी मोती चुगता है। साधना की परिपक्वता में देह के गगन मंडल में अनहद नाद बजने लगता है, तब जैसे बंदी भंवरा कठोर काष्ठ को छेदकर स्वतंत्र हो जाता है वैसे इस जीव के कर्मफल का क्षय हो जाता है और वह मुक्त हो जाता है।

गंग जमनां सुरसती, त्रवंणी तटि असनांन।
चंद सूरिज अभ अंतरै, अठसठि तीरथ थांन।
कणि ओ झूंबखो गावियौ, किण अह किया बखांण।
जा घटि अंणभै उपजै, जाका अह इहनांण।

भावार्थ–साधक के हृदयाकाश में चंद्र और सुर्य उदित हो जाते हैं, वह अपने अंदर ही प्रवाहित होती गंगा, यमुना, सरस्वती में स्नान करता है। उसे अड़सठ तीर्थों में स्नान के लिए कहीं बाहर नहीं जाना पड़ता। इसका बखान करने में वही समर्थ है जिसने अनुभव सिद्ध ज्ञान प्राप्त कर लिया हो।

अरध उरध वसेर हो, भुंवर गुफा एक ठांव।
पांच पचीसूं वसि करै, संभू जाको नांव।
अगंम निगंम जहां गंम नहीं, वरंन विवरजत दीठ।
आसानंद असी कहै, पीयो अंमी रस मीठ।

भावार्थ–साधक की वृत्ति अधोगति, उर्ध्वगति के बाद भंवर गुफा में स्थिर हो जाती है। वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पंच विकार तथा पंच तत्वों की पच्चीस प्रकृतियों को वश में करके ईश्वरानुभूति करके ईश्वररूप ही हो जाता है। वह अरूपी तत्व आगम ग्रंथों और वेदादि की पहुंच से दूर है। आसनोजी कहते हैं की यह वर्णन का विषय नहीं है, उसे तो वही जानता है जो तत्व रूपी अमृत का पान करता है।

कोल्हजी

गोप नार वित हरण, प्रेम लछणा समपण।
कुंज बिहारी किसन, लाल वनरा वण चण।।
गोवरधन उधरण, प्यंड पालण निसरण।
जुरा सिंध सिसपाल, भीड़ि भय भार उतारण।।
जमलोक दरसण पर हरण, भंजण जांमण मरण।
औ मंतर भलौ कोल्ह दूहे, सिंवर नाथ असरण सरण।।

भावार्थ– गोपीयों के प्रेम के आगे भगवान सर्मपण कर देते हैं।

कुंजबिहारी, वृंदावन, गोवर्धनधारी, पालनहार, जरासंध शिशुपाल संहारण, भक्त भार उतारण, यमलोक के दर्शन न कराने वाले, जन्ममरण और भवभय के भंजणहार। कोल्हजी कहते हैं कि ऐसे अशरणशरण दीनानाथ का स्मरण ही सबसे बड़ा मंत्र है मैं इसको अहर्निश जपता हूँ।

अर्थचारी उपिज निगम साखी, अध नासै हरि मंतर संग हुवै।
पांच वैरी न प्रकासै, परस जास सरबे रचे।
सेस संकर मन भावै ध्रुव पहलाद बलिराज सुहावै।
नर नरपति निध्य विजो नको, अंतर ता सब छेद कर।
उर वंद चरण अहनिस कौल, धाय नाथ सांरग धर।।

भावार्थ– वेदों के स्वाध्याय, स्वानुभूति अथवा साक्षीभाव से प्राप्त हुई हरिनाम मंत्र की संगति पापों का नाश करती है। उसको भजने से पंचेन्द्रियों के विकारों का शमन होता है। इससे ही सबकी उत्पत्ति होती है। यह शेष और शंकर के मन को भाता है। ध्रुव, नारद, प्रहलाद और राजा बलि को अच्छा लगता है। समस्त मनुष्यों और राजाओं में उसके जैसा सामर्थ्य किसी दूसरे में नहीं है, यह अंतर्मन के समस्त संशयों को छेदन कर देता है। कोल्हजी कहते हैं की मैं उन विष्णु के चरणों के वंदना करते हुए अहर्निश उनका ध्यान करता हूँ।

कह करता गति कूंण लहै, कूंण सुरपति परखै।
अलख कूंण ओलखै, दह कूंण परगट देखै।।
घटि-घटि अवघट जाय, नेक नहीं होय नियारो।
फलै ही पाली हेत, प्रणमता प्रेम पियारो।।
पेखंता पार पायो नहीं पार ब्रिह्म पिंजर रहै।
पवण पराक्रम परहंस, कहि करता कूंण लहै।।

भावार्थ– भगवान की परीक्षा कौन ले सकता है, उसकी पहचान और प्रकटीकरण कौन देख सकता है? वह घट–घट में वास करता है, वह एक पल के लिए भी किसी जीव से दूर नहीं होता। प्रेम उसको बहुत प्रिय है, जो जीव उससे प्रेम करता है वह उसे वश में हो जाता है। बाहर देखने पर उसका पार नहीं पाया जा सकता है, वह तो जीव के अंदर रहता है। उस सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान की थाह कौन ले सकता है?

कुण कमल कर ग्रहे, कुण मस्तक अंक बालै।
कुण प्राण पैदा करे, कुंण पोखै देव कुण मारै।।
आरंभ तोरा ईश्वर, नर द्यौ सलथ न्यारो रहै।
कोल्ह कहै करसै करता, आप हर सगलै रहै।।

भावार्थ– कौन कलम हाथ में लेकर मस्तक पर भाग्य लिखता है? कौन उत्पत्ति, पालन और संहार कर रहा है? हे ईश्वर! आप ही इस सृष्टि के सूत्रधार हो, आपका आदि कोई नहीं जानता, आप मनुष्य को कर्म की स्वतंत्रतता देकर स्वयं साक्षीभाव में रहते हैं। कोल्हजी कहते हैं कि कर्ता भगवान सब समय, देश और परिस्थिति में सबके साथ रहते हैं।

रजपुताने विदड़ राव कहां महाराजा।
महराजा नूं विड़दपातस्या कहा सवाजा।।
पातशाह नूं विड़द, खुदाय दूसरों जु होई।
खुदाय सिरै साराह, खुदाय सिरज्या सह कोई।।
खुदाय खालक अलाह अलेख, नारायण मीढ़ बीजो नहीं।
वीनती कोल बल बल विसन, तांहरा विड़द औपे तोही।।

भावार्थ– ग्रामपति से लेकर राजा, महाराजा, बादशाह और इस धरती के एकछत्र शासक के ऊपर भगवान है जिसने इस सृष्टि का सृजन किया है, उसे खुदा, खालक, अलाह, अलेख, नारायण आदि अनेक नामों से जाना जाता है, वह एक ही है उसके जैसा दूसरा नहीं है। कोल्हजी कहते हैं कि मैं आपको विष्णु नाम से जानता हूँ और आपकी बार–बार वंदना करता हूँ। आपकी कीर्ति और शक्ति आपको ही शोभा देती है।

अगनि कोट आतस, कोट हेम जल शीतल।
कोट कोट ब्रिह्मण्ड, रोम-रोम आरबल।।
कोट सूर आदत, स्यसीहर सुधाकर।
कोट पवन अति चंपल, कोट बरसे धाराहर।।
कंद्रफ कोटि लावण में, छीमा कोटि धारत वैई।
गंभीर कोट समंद है, हरियर आरती हवै।।

भावार्थ– अग्नि दाहिका, जल शीतलता, करोड़ों ब्रह्मांड, रोम-रोम से शक्ति, सुर्य प्रकाशिका, चंद्रमा अपने सुधारस, पवन अति चपलता बादल अजस्र धारा, गंधर्व गायण विद्या, धरती क्षमा और समुद्र अपनी गंभीर गर्जना से कोटिश: उस हरि की आरती कर रहे हैं।

जेण कंसासुर मारियो, मध कीचक समंदर मथे।
मुर हिरणाकुस हिरणाख, अगज गंज उनथ नथे।।
छले बलि जिण छले, भुज सेहंसर भाजेवा।
करे रावण निरवेस, लंक भीभीषण देवा।।
एतला परवाड़ा तोरा अंछे, काज भगतां कारणै।
वीनती बल बल विसन, विक्रम बाहरा तारणै।।

भावार्थ– जिसने कंस, मधु, कैटभ, मुर, हिरणाक्ष, हिरण्यकशिपु, असुरों को मारा, समुद्र का मंथन किया, न दबने वालों को दबाया, उद्दंडों को संमार्ग दिखाया, बलि को छला, सहस्रबाहु का भंजन किया, रावण को निरवंश करके लंका विभिषण को दी। इतने पराक्रम आपको ही शोभा देते हैं, यह सब आपने भक्तों के लिए ही किया है। उन विष्णु की मैं बार-बार विनय करता हूँ, इस बार वे बारह करोड़ को तारने के लिए आए हैं।

उढोजी नैण

जागो मोमणों ना सोवो, न करो नींद पियार।
जैसा सुपना रैण का, ऐसा ओ संसार।।

भावार्थ– स्वपन और जाग्रत का संसार मूलत: एक जैसा ही है क्योंकि दोनों ही में वह अस्थिर और नाशवान है, इस सत्य को स्वीकार करके साधक को सावधान हो जाना चाहिए।

काज पराया ना सरै, जांह दुखे तांह पीड़।

भावार्थ– दूसरों के भरोसे कोई सांसारिक कार्य भी सम्यक् प्रकार से सफल नहीं होता फिर भगवद्प्राप्ति जैसा स्वयंसिद्ध कार्य तो पराई आशा से पूर्ण होना असंभव ही है। अपनी चोट के दर्द का ना दूसरों को अहसास हो सकता है और ना ही वे दर्द बाँट सकते हैं। अच्छी प्रकार से कार्य की सफलता के लिए

वह व्यक्ति स्वयं उपक्रम करे जिसे आवश्यकता है।

हम परदेशियां हो जी, यो देशड़लो बिगाणो।
म्हे तो बहोड़ि ना आयस्यां जी, इण खोटे संसारा।।

भावार्थ– यह संसार अपना स्थाई निवास स्थान नहीं है। यहाँ सब पराया है और हम केवल परदेशी यात्री के समान है और जीवन भर धोखा खाती यह जिन्दगी आखिर में स्वयं धोखा दे जाती है। हमें ऐसे मिथ्या संसार में दोबारा नहीं आना है।

द्रब खंण्य मांहे हेम उतिम, चंदण उतिम सुबास।
सांयण मा घीरत उतिम, खेती उतिम कपास।
पंख जात मा गुरड़ उतिम, माणस उतिम करणी।।

भावार्थ– जैस धातुओं में सोना, सुगन्ध में चंदन, रसायन में घी, खेती में कपास, पक्षियों में गरुड़ अपने गुणों के कारण उत्तम माने जाते हैं, वैसे ही उत्तम मनुष्य की पहचान उसके अच्छे कार्यों से होती है।

मन्यसा वाचा करम, जे तिहुवां सचि होई।
हरजी सदा हजूरी, दूर मति जाणौ कोई।।

भावार्थ– जिस मनुष्य के मन, वचन और कर्म तीनों शुद्ध है, परमात्मा उससे दूर नहीं है, वह सदा उसके साथ है।

एक चंद उगवै रैण, सरब तारायण छाव।
एक दंणियर तपै नवखंडि, चौहचक जोति दिखाव।।
एक इंदज वरसै भाय, पोहम्य नीवाण्य पुराव।
एक धरम तार तरै, सहल्य पातैगां चुराव।।
एक विसन सेवीया सार, औरां की सेवा किसी।
सरबा सरबी के धणी उदा, मोख मुगति सो देसी।।

भावार्थ– असंख्य तारों के रहते भी रात्रि का अंधकार अकेला चन्द्रमा ही दूर करता है। एक सूर्य उदय होता है तो सब जगह प्रकाश फैल जाता है। एक इन्द्र के बादल जब बरसते हैं तो सम्पूर्ण धरती लबालब हो जाती है। एक

धर्म का पालन करने से सकल पापों का क्षय हो जाता है। एक विष्णु की भक्ति करने से सकल की उपासना हो जाती है। विष्णु ही सबके मालिक हैं और वे ही मुक्ति प्रदान करते हैं।

म्हे जप तां इधक संतोष, दुरति दाळद दुष नासै।
मन चित दिढ थीर, कुंवळ ज्यौं हियौ विगसै।
अनंत बधाई होय, जांणौ चौक चांदिणै पूरौ।
हिरदै नाचौ पात, सरस मंनि सदा सधीरो।

भावार्थ–मैं उस (विष्णु) नाम का जप करता हूँ जिसके जपने से अत्यधिक संतोष होता है। पाप, दरिद्रता और दु:ख दूर भाग जाते हैं। मन, चित्त दृढ़ और स्थिर तथा हृदय कमल की तरह प्रफुल्लित हो जाता है। अनंत मंगल कामनाएं प्राप्त होती है। चारों ओर प्रकाश फैल जाता है। हृदय तो नृत्य करता है परन्तु मन सदा सरस और धैर्यवान रहता है।

विसंन भगत कुंण किया, जीव दया किणि पाळी।
क्रत जुगां की बात, किणि क जुग्य सिंभाळी।
छह दरसंण जिंह नै नुंवै, ग्यांन षड़ग जोगेसुरो।
पुंन सत सील संतोष, जति झंभ परतकि पुरो।

भावार्थ–मनुष्यों को विष्णु भगत बनाया, जीवों के प्रति दया पालन का उपदेश दिया, सतयुग में किया वादा कलियुग में आकर पूरा किया, छ: दर्शन जिसे नमन कर रहे हैं, जिस योगेश्वर ने ज्ञान खड्ग धारण कर रखी है, पुण्यकर्म, सत्य, शील, संतोष जिसकी कृपा से सहज ही प्राप्त हो जाते हैं, वह कौन है ? वह पूर्ण यतिश्वर जम्भेश्वर आपके समक्ष प्रत्यक्ष है।

मंन्सया वाचा क्रंम, जे तिहुवां सचि होई।
हरजी सदा हजूरी, दूरि मत जांणौ कोई।
राह गरु की मानंते, विसन सगाई वास।
राषंण हारा राजि छो, अवगति ऊदोदास।

भावार्थ–जिनके मन, कर्म और वचन में सदैव सत्य निवास करता है भगवान सदा उनके पास रहते हैं, कोई उसे उनसे दूर मत जानो। जो गुरु के बताए मार्ग पर चलते हैं और अनन्य निष्ठा के साथ भगवान को अपना मानते हैं,

उदोदास की धारणा है की पालनहार भगवान उनपर प्रसन्न होते हैं।

विसंन अजप्यां जोय, नीचां ग्रह जाया।
विसंन अजप्यां जोय, सुणहां सूकर होय आया।
विसंन अजप्यां जोय, ढीग कहवा अक सोहा।
विसंन अजप्यां जोय, रीण चकवां विछोहा।
साप परड़ क्रड़ कांटिया, जोय परताप पापां तणौ।
नहीं विसंन नै दोस रे जीव, भोगविसी कियौ आपणौ।

भावार्थ–जिसने विष्णु का जप नहीं किया उसे बुरे कुल –परिवार में जन्म मिलता है, उसे कुत्ते, सूअर, खटमल, कौए आदि निकृष्ट योनियों में जाना पड़ता है। जिसने विष्णु का जप नहीं किया है वह जैसे रात्रि में चकवा विकल होता है ऐसे ही संसार के वियोग से दु:खी होता है। सर्प, परड़, घास, कांटे जैसे बिना जूते पहने पांवों को कष्ट देते हैं वैसे ही विष्णु विहीन जीवन को पाप नोचते हैं। इसमें विष्णु का कोई दोष नहीं है, जीव अपने कर्मों का ही फल भोगता है।

जीवत हुवा षाक गुर वचने जरणां जरी।
अमर हुवा संसार मां उदा गोपीचन्द अर भरथरी।

भावार्थ–जीते–जी जिन्होंने अपने अहं को जलाकर राख कर दिया, उस राख पर फिर मान–अपमान, हानि–लाभ, सुख–दु:ख का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। गुरु के वचन मानकर जिन्होंने काम–क्रोधादि विकारों को वश में कर लिया है, उदोजी कहते हैं उनकी कीर्ति संसार में चिरस्थायी हो गई है जैसी की गोपीचंद और भृतहरि की हुई है।

गया चौतीस बादेसाहुं, और केता भुंवाळूं।
विक्रमांजीत अर भोजराज, गयो सो मुंज बलाळूं।
सांतिल सूजा बीका गया, षांन गया पीरोजूं।
लूंणकरण सा होय गया, तांह का माघ न षोजूं।
मंडळीक अर चक्रवत, किता हुवा धरती धंणी।
गोपीचन्द अर भरथरी उदा गुर भेंट्यौ लाधी घंणी।

भावार्थ–चौतीस बादशाह और कितने भी बड़े–बड़े महाराजा, राजा विक्रमादित्य, राजा भोज, राजा वाक्पति मुंज परमार जैसे दातार, राव सांतल, राव सूजा, राव बीका, फिरोजशाह तुगलक, राव लूणकरण किस मार्ग चले गए वह पता नहीं चला। कितने मंडलीक और चक्रवर्ती सम्राट इस धरती के मालिक हो चुके हैं परन्तु उदोजी कहते हैं की गुरु आज्ञा में चलकर जैसी गति राजपाट त्यागकर योग–साधना से गोपीचंद और भृतहरि ने पाई वह दूसरों के लिए दुर्लभ है।

गयौ सो रांवंण राव लंक गढ राज करंतो।
गयौ तिमर गढि पातिसाह कुंत षाग बळिवंतो।
किता गया भोपित नर चकवैं वषांणौं।
गुर पिंडत कितना गया, देवता अंत न जांणौं।
गुर विण भेट्यां अषै षीणां, महि मंडळ को कोथ कित।
घीण षळ संसार सोह नारांयंण नांव निहंचळ नित।

भावार्थ–लंका जैसी सर्वसुविधायुक्त और अभेद्य नगरी में राज करने वाला रावण चला गया। तैमूरलंग जैसा शक्तिशाली बादशाह, बड़े–बड़े योद्धा, वीर, बलवान, कितने ही चक्रवर्ती सम्राट चले गए उनका वर्णन कौन करे। अनंत गुरु, पंडित, देवता चले गए। अक्षय बल के भंडार जिनकी धरती के अंतिम सिरे तक कीर्ति थी, ऐसे अनेक निगुरे बलहीन हो गए। यह संसार अनित्य और नाशवान है, एक भगवान का नाम ही नित्य, अचल और शाश्वत है।

भूषां भोजंन सार, सोहड़ ज्यौं सापुरिसाई।
धोरी कंधै सार महळि ज्यौं जीभ मिठाई।
तुरियां तेज ज सार पुरुष बोल परवांणै।
कायथ लेषै सार विपर ज्यौं वेद पुरांणै।
पहमी पांणी सार अंन धंन जिंह निपजै धरंणि।
ऊं नांव विसंन को सार उदा, हळति पळति जीवण मरंणि।

भावार्थ–भूखे का भोजन, शूरवीर की उदारता, बैल का मजबूत

कंधे, जीभ की मिठाई, घोड़े की गति, पुरुष का वचन पालन, कायस्थ का हिसाब–किताब और विप्र का बल वेद–पुराण है। पृथ्वी का बल पानी है, जिसके कारण वह अन्न पैदा करती है। उदोजी कहते हैं की ऐसे ही जीव का बल विष्णु का नाम है जिसको जपने से उसके लोक–परलोक दोनों संवर जाते हैं।

अरिक सूर उजळो पहम उजळो दावानळ।
रैंण चंद उजळो सा पुरिसां षाग भुजाबळ।
जल कंवळ उजळो सील उजळ नर काया।
कथन साच उजळो स्रब उजळ श्री राया।
हरि रंग रूप राता रहै षत्रवट षेत उजगळो।
जोगी जुगति त्रभुवंण सहट उधौ इणि परि उजळो।

भावार्थ– ग्रहण रूपी शत्रु से निपटकर सुर्य अपनी आभा में आता है, दावानल के बाद नवांकुर के साथ धरती कांतिमय होती है। रात्रि चंद्रमा से और तलवार बलवान भुजाओं से, जल कमल से, मनुष्य शील से और वचन सत्य से उज्ज्वल होता है। भगवान तो सदैव ही उज्ज्वल है, भगवान के ऐसे उज्ज्वल रूप–रंग में मगन रहीये। वीरता का निखार तो युद्धक्षेत्र में ही आता है। उदोजी कहते हैं की योगी की उज्ज्वल कीर्ति युक्तिपूर्वक की गई योग साधना से त्रिभुवन में फैल जाती है।

करौ ठगाई पिंड काचौ, साच सिदक नैं जोव हो।
हीय भीतरि घड़ो घाटी, कांय बाहरि धोव हो।
कपट करि करि पिंड पोषौ, अंति धरती मां रहै।
दुष दुकरत जीव सहिसी, सीष दियां सतगुरु कहै

भावार्थ–इस नश्वर शरीर के लिए ठगी करते हो, सत्य और निश्छलता को क्यों छोड़ दिया। बाहर की सफाई क्या काम आएगी जब हृदय के भीतर कल्मष भरा है। जिस शरीर की सुखसुविधा के लिए कपटतापूर्ण और भ्रष्ट तरीके से धन कमाते हो, वह धन और यह शरीर यहीं धरती में गड़ा रह जाएगा, इनका भोग तो तुम नहीं कर पाओगे परन्तु सतगुरु कहते हैं की उस पाप की कमाई के फलस्वरूप आगे तुम्हें दु:ख और कष्ट अवश्य भोगने पड़ेंगे।

रहे सील संतोष धरे निज ध्यांन निरमळ।
पंच पुलंता पाले, ग्रह सुग्रहे चित चंचळ।
अभेनासी ओळगे, सींवरि निज नांव विसंन।
अंमरापुरी अंबरा, पहरिस्यां काया रतंन।
संभळे हंस उजळ सुवस, जळ मोताहळ चुगियै।
कळि जुग जंण जंण ठगीयै, ऊदोदास न ठगियै।

भावार्थ–शील, संतोष से युक्त होकर मैं निर्मल अंत:करण से प्रभु का ध्यान करता हूँ। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पंच विकार को भगाकर मैंने अपने चंचल चित को स्थिर कर लिया है। मैं उस अविनाशी की वंदना करता हूँ और उसके विष्णु नाम का स्मरण करता हूँ। यह आत्मतत्त्व की प्राप्ति करवाकर अमरलोक में वास प्रदान करेगा। सावचेत हुए हंस रूपी जीव ही उज्व्वल यश प्राप्त करते हैं क्योंकि वे तत्त्व रूपी मोती चुगते हैं। यह कलियुग चाहे सारे संसार को ठग ले परन्तु उदोदासजी कहते हैं यह मुझे नहीं ठग सकता।

म्हारै तोह विणि अवर न कोय, तूं र दियावै तू दिवै।
कुटंब पिता परवार हळति पळति सांमी सरंणि त्यैंह।
सरंणि सांमी सिसट करता सहल दुतर तारियै।
विषम भुंय जळ भुंवंण चवदा, मुकति षेत उतारियै।
आस गरीबां करौ पूरी, मांग मत घातो षता।
भंणै ऊदो सरंणि थारी, तूं म्हारै दाता तूं पिता।

भावार्थ–आपके बिना हमारा और कोई नहीं है, आप ही सबकुछ देने वाले हो। कुटुंब, पिता, परिवार, लोक, परलोक सब शरणागत वत्सल प्रभु आप ही हो। मैं सृष्टिकर्ता स्वामी के शरण हूँ, जो बड़े-बड़े संकटों से सहज में तार देता है। विषम भवजल से और चौदह भुवन में चक्कर काटते जीव को यह कृपा करके पार उतार देता है। आप मेरे अपराधों की तरफ मत देखिए, मैं दीन बनकर कृपा की आशा लेकर आपके पास आया हूँ। उदोजी कहते हैं की मैं आपकी शरण हूँ आप ही मेरे दाता हो और आप ही पिता हो।

मुकति मंन मंडियौ, मुकति गति पुहंचौ हंसा।
मुकति जपीजे जाप, मुकति ब्रमल मिल सो वंसा।
मुकताहल जे चवै, तां नरां मुकति ही दीजै।
अलष जोति भेंटियै, गोठि सुगर सीधां कीजै।
प्रापति मुकति जोगी मुकति, अमर देव ओलषियौ।
वैराग तिलक संनमुषि विसंन, रतनां रूप परषियौ।

भावार्थ–मुक्ति आत्मा की नैसर्गिक मांग है। मन का परिष्कार, भगवन्नाम जप, उत्तम कुल में जन्म, किसी जीवनमुक्त महापुरुष की कृपा, सद्गुरु व तत्त्वज्ञ साधकों का सांनिध्य और युक्तियुक्त योगसाधना मुक्ति प्राप्ति के साधन है। उदोजी कहते हैं की मैनें तो एक ऐसे अमूल्य रतन और मुक्तिदाता देव को पहचान लिया है, उस विष्णु को मैं एक वैरागी के भेष में सन्मुख देख रहा हूँ, वह मुमुक्षुओं को मुक्तहस्त से मुक्ति बांट रहा है।

तांह का धन्य नसीब, नांय विसंन कै रीधा।
लिया महारस तंत, कंवळ छा जांह का सीधा।
ग्यांन ध्यांन नाद वेद, झंभ की वाचा पूरी।
द्यो अमरापुरी वास, द्यो पूजती मजूरी।
सांभळियो नरो ऐसो गुर, को और सांभळियो कांने।
आवागुंवंण चुकाय कै, रतंन कया द्यो दांने।

भावार्थ–उनका परम सौभाग्य है जिन्हें विष्णु नाम जप का अवसर प्राप्त होता है। जिनका हृदय कमल विशुद्ध होता है वे इस नाम रूपी महारस का पान करते हैं। ज्ञान, ध्यान, नाद, वेदोक्त गुरु जाम्भोजी की आज्ञा में जो चलता है उसे उसका पूरा फल मिलता है वह परमधाम का अधिकार बनता है। ऐसे गुरु की महिमा सुनकर मैं आया हूँ, ऐसी महिमा मैंने किसी की नहीं सुनी। ये आत्मतत्व की प्राप्ति करवाकर आवागमन से मुक्त कराने वाले हैं।

लेषा मांग्या जदि कांपण लागा, लगी चटपटी अंगा।
माता पिता भाई सुत बंधु, कोइय न साथी संगा।
जम का दूत दसूंदिस दीसै, दुष पावै जीव अपारा।
सतगुर सीष यादि जदि आई, जुगति मुगति दातारा।

भावार्थ–आगे जब कर्मों का हिसाब किताब होगा तो शुभ कर्म न करने वाला भय से कांपने लगेगा, सभी अंगों में व्याकुलता छा जाएगी। माता, पिता, भाई, पुत्र, मित्र वहाँ कोई भी साथ में नहीं होगा। चारों तरफ यमदूत ही होंगे जो जीव को अपार कष्ट देंगे, तब सतगुरु देव जाम्भोजी की सीख याद आएगी की उन मुक्तिदाता की बताई युक्तियुक्त जीवनचर्या को मैं मानता तो आज मेरी यह दुर्गति न होती।

तांह का धन्य नसीब, नांय विसंन कै रीधा।
लिया महारस तंत, कंवळ छा जांह का सीधा।
ग्यांन ध्यांन नाद वेद, झंभ की वाचा पूरी।
द्यो अमरापुरी वास, द्यो पूजती मजूरी।
सांभळियो नरो ऐसो गुर, को और सांभळियो कांने।
आवागुंवंण चुकाय कै, रतंन कया द्यो दांने।

भावार्थ–उनका परम सौभाग्य है जिन्हें विष्णु नाम जप का अवसर प्राप्त होता है। जिनका हृदय कमल विशुद्ध होता है वे इस नाम रूपी महारस का पान करते हैं। ज्ञान, ध्यान, नाद, वेदोक्त गुरु जाम्भोजी की आज्ञा में जो चलता है उसे उसका पूरा फल मिलता है और वह परमधाम का अधिकार बनता है। ऐसे गुरु की महिमा सुनकर मैं आया हूँ, ऐसी महिमा मैंने किसी और की नहीं सुनी। ये आत्मतत्व की प्राप्ति करवाकर आवागमन से मुक्त कराने वाले हैं।

देषि विरांणां द्रब मंन न चलाइयै।
जो हरि करै स होय, कहा पछताइयै।
कहा पछतावै दियौ सो पावै ओछो इधको न होई।
राजा रांणा रंकां सुरताणां, ग्रब करो मत कोई।

भावार्थ–पराई संपत्ति देखकर उसे पाने की कुचेष्टा नहीं करनी चाहिए। जो होता है भगवद् इच्छा से ही होता है फिर पछतावा किस बात का, पछताने से क्या होगा हमारे कर्मो के अनुसार ही हमें फल मिलेगा, न कम न ज्यादा। राजा, राणा, रंक, सुल्तान सब अपने कर्मों का ही भोग कर रहे हैं, अच्छे कर्मो के फलस्वरूप मिली पद-प्रतिष्ठा, धन-दौलत को पाकर अभिमान नहीं करना चाहिए।

जीव दियौ सो रिजक हू दियौ, पूरंण अभिणासी पेषी।
मेरी मेरी कहै सब कोई, द्रब विरांणां देषी।
सोचि विचारि कछू नहीं तेरो, विसंन विसंन जपि प्यारा।
ऊदोदास आस सतगुर की, नर नायक अवतारा।

भावार्थ–जिसने जीवन दिया है वह भरणपोषण भी करेगा (चूंच दी है वह चूण भी देगा), वह पूर्ण ब्रह्म अविनाशी सबका ध्यान रखता है। अपने धन का भी अभिमान नहीं करना, उससे भी पराये धन की तरह अनासक्त रहना, यह बहुत गहरी बात है, क्योंकि वास्तव में तो अपना यहाँ कुछ नहीं है। अपना तो विष्णु का नाम है उसे प्रेमपूर्वक जपो। उदोजी कहते हैं की एक आशा सदगुरुदेव जाम्भोजी की ही रखो, जीवाधणी ने आपके लिए अवतार लिया है।

अल्लूजी

आणंद हुवौ घट मांहरै, जीव तणौं पायो जतन।
नारायण नांव मेल्हिसी नहीं, रंक हाथ चड़ियो रतन।।

भावार्थ– किसी दरिद्र को रत्न मिलने से जितनी प्रसन्नता होती है ऐसे ही जब से मुझे भगवद् नाम स्मरण का अवसर मिला है मेरे हृदय में आनंद छा गया है। अब मैं किसी भी हालत इसे छोड़ूंगा नहीं।

पांणी पाक किम पुंणा, मांहि मींडक मछ ब्यावै।
भोजन पाक किम पुंना, उडै माखी ओठावै।।
सुरभि गोबर पाक, करै ओखर चहुं ओरां।
काया पाक किम कहां, भोत मल भरी विकारां।।
उपजै खपै खण में अलू, खण धरती यो ही विसन।
अजोणी नाथ तोनै नमो, किसी भांति पूजां किसन।।

भावार्थ– पानी में मछली और मेंढक अपने बच्चे पैदा करते हैं, भोजन पर अशुद्ध जगह बैठने वाली मक्खियाँ बैठ जाती है, हवनादि के लिए उपले लूं तो गाय का पवित्र गोबर भी चारों ओर पैरों में बिखरा पड़ा रहता है, यह मेरा शरीर भी मलादि विकारों से भरा पड़ा है फिर इसका क्षणभंगुर होना भी एक विकार है। हे परमपावन परमात्मा! ऐसे में कैसे इन पदार्थों और इस शरीर से आपकी पूजा करूं।

विभिषण को लंका का राज मिला गया, इस प्रकार अनेक भक्त भगवान का जप-तप करने से तिर गए। रावण का कुल नष्ट हो गया, लंका और रानी मंदोदरी भी चली गई, अगर वह भगवान का नाम जपता तो उसकी ऐसी दुर्गति नहीं होती।

जिण वासग नाथियो, जिण कंसासुर मारे।
जिण गोवल राखियो, अनड़ अगाली उधारे।।
जेण पूतना प्रहारी, लिया थण खीर उपाड़ै।
जिणी कागासुर छेदीयो, चंदगिर नावै चाड़ै।।
एतला परवाड़ा पूरीया, अवर परवाड़ा प्रभु सहै।
अवतार वेद जंभ तंणौ, कान्ह तंणै अवतार कहै।।

भावार्थ– जिसने बलशाली नाग को नाथा, कंस को मारा, गोकुल की रक्षा की, बड़े-बड़े सिरमौर उद्दंडों को सुधारा, स्तनपान करके पूतना का उद्धार किया, कागासुर का वध किया, गोवर्धन धारणा किया, इतने तथा और भी पराक्रम जिस प्रभु ने किये थो, कान्होजी कहते हैं की उसी वेदवंदित परामत्मा ने जम्भेश्वर के रूप में अवतार लिया है।

जिंम राखसि तिंम रहसि, जहां भेजसी तहां जायसी।
जिंम जोतसि तिंम वहिसि, जिमं पोखसि तिंम पायसि।।
च्यारि दूण छडस्य, पांच जण कर भेलां।
अबनासी तो दिसा, तूझ सारी ही वेलां।।
वायस हंस उस बांणीं वसै, संकर सिसिहर भुंवरि घरि।
ओ वाच आप मांगै अलू, परम हंस जंभेस हरि।।

भावार्थ– जैसे तूं रखेगा वैसे ही रहूँगा, जहाँ तूं भेजेगा वहीं जाऊँगा, जैसे तूं कहेगा वैसे ही चलूँगा, जैसा तूं खाने को देगा उसी को पाऊँगा। उस अविनाशी ईश्वर की प्राप्ति के लिए दो, चार, पांच, छः जन इक्कठे होकर सत्चर्चा करते हैं यह अति उत्तम है। कौआ हंसो की कतार मे ंऔर अर्धचंद्र शंकर की जटाओं में विराजने के बाद अपनी हीनता को छिपाकार शोभा पाते हैं। अलूजी कहते हैं ऐसे ही हे परमहंस जम्भेश्वर हरि मैं आपके पावन सांनिध्य में सुशोभित होऊँ ऐसा वचन मैं आपसे मांगता हूँ।

वैद जोग वैराग खोज, दीठा नर निगंम।
सन्यासी दरवेस सेख, सोफी नर जंगंम।।
विथा वियापी मोहि आज, आसा धरि आयो।
पांणीं अंन अहार पेटि, सुख परचौ पायौ।।
पांचवों वेद सांभळि सबद, च्यारि वेद हूंता चलू।
कोवली झंभ सांवळ कवळ, आज साच पायौ अलू।।

भावार्थ– वैद्यक, योगी, वैरागी, ऋषि, वैदिक, संन्यासी, दरवेश, शेख सूफी और परिव्राजकों के पास गया परन्तु मेरी व्यथा नहीं मिट्टी, व्यथित होकर मैं आपके पास आशा लेकर आया हूँ। आप अन्न, पानी और किसी प्रकार का आहार नहीं करते तथा अपने पास आने वालों को संतुष्ट और सुखी करते हो। चार वेद पूर्व में प्रचलित थे आपके सबद पांचवा वेद है। अलूजी कहते हैं कि कैवल्य ज्ञान प्रदान करने वाले गुरु जाम्भोजी कृपा प्राप्ति के लिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, आपके पास आकर आज मैंने सत्य को पा लिया है।

कलम जका ताहरी अवर कुंण कलम ज वालै।
प्रांण मां प्रांण पैदा करे, नमो पोखै प्रतिपाळै।।
तूं ही दाता तूं ही देव, तूं ही आतमां अधारे।
तूं ही जोख्यों तूं ही जीव, तूं ही मारै तूं ही तारै।।
त्रिगुंण पंच तत अनादि सहित, कीया मनसा धारि करि।
भाग भलो अल्हू भणैं, सतगुर प्रगट मिलियौ संभरि।।

भावार्थ– जीव के लेख लिखने वाले विधाता आप ही है, आपके सिवाय दूसरा कौन है। आप ही जीव को पैदा करते हैं, उसका पालन-पोषण तथा रक्षण करते हैं। आप ही दाता, देव और आत्मा के आधार हैं। आपका सनातन अंश होने के कारण जीव बनकर आप ही आए हैं और दृष्टा बनकर देखने वाले ईश्वर आप ही हैं। पापकर्म करने वाले जीव को मारने वाले और पुण्यकर्म करने वाले जीव को तारने वाले आप ही हैं। अल्लूजी कहते हैं कि हम बड़े भाग्यशाली हैं की सत, रज, तम त्रिगुण और पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश प्रकृति के पांचों तत्त्वों को अनादिकाल से मनसा रूप से धारण करने वाले भगवान इस बार सतुगुरु के रूप में संभराथल पर प्रकट हुए हैं।

लाख जिझ अस्वमेध, लाख जिझ राजस कीयै।
लाख भार मण सुवरण, लाख मण मोती दीयै।।
लाख सुवछी धेन, लाख महखी दूझती।
लाख संबंधी पाज, लाख वापी खोदंती।।
इतनी लाख एकण धड़ै, और धरम कीजै सही।
अर्धले नाम आधै अलू, सत नाम संतूल नहीं।।

भावार्थ– लाख अश्वमेध, लाख राजसूय यज्ञ करने, लाख मण सोना, लाख मण मोती, लाख नवप्रसुता गाय, लाख दुधारू भैंस दान करने, लाख अभ्यागतों का सम्मान करने, लाख तालाब खुदवाने और ऐसे ही लाखों अन्य पुण्यकर्मों से सच्चे हृदय से लिया गया भगवान का आधा नाम भी बढ़कर है।

तुंही सांम सधीर, धर अंबर जण धरियो।
तरे नाम गजराज, ध्रुव पहळाद उधरियो।।
परीखत अमरीख पर, भगतां पर पाळे।
संसार संघार, वेद तैं ब्रह्मा वाळे।।
सुर परमोधण तारण संतां, वरण तूझ अवरण वरूं।
उबारियो अलू आयो सरण, जै ओं देव झांभेसरूं।।

भावार्थ– धरती और आकाश को धारण करने वाले हे भगवन्! आपके नाम के प्रताप से गजेन्द्र, ध्रुव, प्रहलाद, परिक्षित, अंबरीश तर गए। असुरों का संहार करने, ब्रह्माजी को वेद प्रदान करने, देवताओं को आल्हादित करने एवं संतों का उद्धार करने वाले भगवन् इस बार आप जम्भेश्वर अवतार के रूप में आए हैं, मैं आपकी शरण हूँ, मेरी पुकार सुनो। हे देव! कृपा करके मुझे उबार लो।

आठारै भार वनासपति, पात पात पेख्यो छई।
घटि घटि रूप अरूप, रूप सोई पुरिष अल्हु दरस्यौ दई।।

भावार्थ– भगवान इस संसार के पत्ते-पत्ते में विद्यमान है। प्रत्यक्ष अदृश्य हाते हुए भी घट-घट में मूलत: वही चेतन सत्ता है। ऐसे भाव से जो संसार को भगवद् स्वरूप देखते है, वह भगवद्प्राप्ति का अधिकारी होता है।

राव करीजै रंक, रंकांसिर छत्र धरीजै।
अल्हू सास वे सार आस कीजै सिंवरीजै।।
चख लहै अंध पंगां चलण, मोनी सिधायक वयण।
तो करतां कहा न होय, नारांयण पंगज नयण।।

भावार्थ– राज को रंक तथा रंक को राजा करने वाला, अंधे को आंख देने वाला, पंगू को चलाने वाला, गूंगे को वाणी प्रदान करने वाला कमलनयन नारायण हरि सर्वशक्तिमान है। वे ही मूल है, उन्हीं की आशा करनी चाहिए और उन्हीं का स्मरण करना चाहिए।

पाट चीर पहरिये, मास छठे में लहीजै।
किसु कूड़ कथियै, लेइ घट नेड़ो कीजै।।
जे सोवन पहरई, तो इन है सरसो आवै।
जे चंदण चरचियौ, तो किसो पुन्य फल पावै।।
उजाळ चित ऊजळ कियौ, सास पोई डोरी सधर।
नारायण नाम नीको रतन, कंठ बांध सिणगार कियो।।

भावार्थ– बढ़िया रेशमी वस्त्र पहनकर उन्हें छठे महीने बदल रहा है। किससे झूठ बोलकर कार्यसिद्धि कर रहा है, घट-घट में एक ही परमात्मा विराजमान है। नश्वर शरीर को कीमती वस्त्र पहनाने से क्या लाभ होगा, चंदण का लेप करने से क्या पुण्य प्राप्त होगा? चित्त को उज्ज्वल करो, सांसों की डोरी में नारायण नाम का रत्न पिरोकर कंठ में धारण करो, यही वास्तविक शृंगार है।

कहयौ सुदामै किसन, ताहि दालद गमायौ।
ध्रुवै ज जपियौ विसन, सीस गिरि मेर थपायो।।
जप्यो बलराज सिन, ताहि अब लग चोमासौ।
जंप्यो विभिषण विसन, ताहि लंक दियो वासौ।।
केइ भगत तिरिया जप तप, विसन मंदोवरि रावण रहत।
कुल लंक ली पत रावण कंनो, किसन विसन रावण कहंत।।

भावार्थ– भगवन्नाम जप करने से सुदामा की दरिद्रता दूर हो गई, ध्रुव को अचल स्थान मिला, राजा बलि के यहाँ भगवान प्रति वर्ष चौमासा करते हैं,

कहां मको कहां सेष सूर सिसिहर कहां संकर।
एक रोम अंतरो वसै ब्रहमंड नीरंतिर।।
चरण पांण निज बांण, भांति अवधूत दिखांवत।
सुख चक्र सूं जुगति, गदा वारंत विरंचत।।
पचास कोस सायर पवड़, सरंणि चंद रसण्य धरंणि।
एक अलख जंप अलू, श्री बारह तो पाए सरंणि।।

भावार्थ– मैं कहता हूं की शेष, सुर्य, चन्द्र और शंकर कहाँ, भगवान के एक रोम में एक ब्रह्माण्ड बसता है। वह स्वयं अवधूत की तरह निर्विकार रहता है परन्तु उसकी पहूँच सर्वत्र है, उसका सुदर्शन चक्र और गदा हर क्षण सजगतापूर्वक सक्रिय रहते हैं। पचास कोस (सांकेतिक) समुद्र, पर्वत, चंद्र, सुर्य, धरती जिसके शरणागत है, अल्लूजी कहते हैं कि मै उस अलख का जप करता हूँ, वह बाहर करोड़ को अपनी शरण में लेने के लिए आया है।

कहां घट टामक कहां मादळ दमकारो।
कहां नाद गड़गड़ै कहां तंत्री झंणकारो।।
कहां ताळ कंसाळ कहां ऊससो अंबर।
कहां गहर गंभर कहां भणंकै मधुकर।।
विण कंठ ग्रीव ठाढो वयण, विण मूरति कांसू जुवौ।
अचंभो एक दीठो अलू, हद मांह बेहद हुवौ।।

भावार्थ– चित्त की वृत्ति अंतर्मुखी होने पर सहज स्वभाविक ध्यान लगता है और ध्यानावस्था में घट के अंदर कहीं नगाड़े, मृदंग, कहीं नाद की गड़गड़ाहट, कहीं वाद्य तंत्रों की झंणकार होती सुनाई देती है। ऐसा लगता है की कहीं कांस्य बर्तन बज रहा है, कहीं जोर से अंबर गर्ज रहा है, कहीं गहर गंभीर ध्वनि हो रही है तो कहीं भंवरे गुंजार कर रहे हैं। बिना कंठ और ग्रीवा के शब्द हो रहे हैं, शब्द करने वाला कोई दिखाई नहीं देता। अल्लूजी कहते हैं की मैंने एक बड़ा अंचभा देखा है की सीमा के अंदर असीम समा रहा है।

भंवर भ्रमै ऊजळो, हंस मैं काळो दीठो।
पाणी मरै पियास पवन तप करै पयट्ठो।।

अन्न छुआ दूबळो, जुड्ड है कपड़ कप्पै।
तिरिया रोवत देख, थान दे बाळक थप्पै।।
लूंण अलूंणो घ्रत लुखो, सील तेज पावक सरस।
नव नाथ सिद्ध पूछै अलू, जोग स्रंग्रार क वीर रस।।

भावार्थ– (उलटबांसी कवियों की एक बहुत विलक्षण शैली रही है, उसकी एक सुंदर बानगी) – भंवरा सफेद, हंस काला, पानी प्यास, वायु स्थिर, अन्न भूखग्रस्त, सर्दी वस्त्रविहीन, रोती स्त्री को चुप कराता बालक, नमक फीका, घृत रूखा–सूखा, शीलवान चपल और अग्नि शीतल। अल्लूजी नव नाथ सिद्धों से पूछ रहे हैं कि जोग श्रृंगार रस है या वीर रस।

अहो जत अहो सत, अहो सन्यास उजाणै।
अहो अंनळ असटंग, जोग मारग ओ जांणै।।
प्रेम भगत गुर ग्यांन, सार हरि नांव संभरे।
कुंजविहारी किसंन, चरंण दासे का चेतारे।।
एक करै स दूतर तरै, एकोतरि कुळ उधरै।
उरि कंठ जीह हूंता अलू, विसन नावं जिन वीसरै।।

भावार्थ– ब्रह्मचर्य, सत्य, सिद्ध संन्यास, अग्निहोत्र, अष्टांग योग, प्रेमाभक्ति, गुरुज्ञान इन सबका एक ही सार है की भगवान के नाम में लौ लग जाए। हरिचरणों के दास के हृदय में भगवद्स्मृति सदैव बनी रहती है, ऐसा करके वह स्वयं तो दुर्लभ पद प्राप्त करता ही है उसकी इकोत्तर पीढियां भी तर जाती है। अल्लूजी कहते हैं उस हृदय का होना ही व्यर्थ जो विष्णु का नाम भूल जाए।

जिम मोरां ददरां, सघंण घंण पावस वूठो।
जल ता मंछ वीछोड़ि, के जळ मांहि पयठो।।
वहै अपूठी नाड़ि जांण बाएड़िया लधो।
मांड घेरत गुफमे जांणै खुधियारथ लधो।।
आणंद हुवौ घट मांहरै, जीव तंणो पायो जतंन।
नारियण नांव मेल्हिस नंही, रंक हाथ चड़ियो रतंन।।

भावार्थ– जैसे मोर और मेढ़क घने बादलों तथा बरसात को देखकर, जल से निकाली हुई मछली को पुन: जल में छोड़ने पर, मरे हुए मनुष्य की नाड़ी पुन: चलने लगे और प्राण लौटने पर, भूखे को घृतमिश्रित भोजन मिलने पर जो प्रसन्नता प्राप्त होती है ऐसा ही आनन्द मेरे भीतर भी उमड़ रहा है, मेरे जीव को परमलाभ प्राप्त हो गया है, अब मैं इस नारायण नामको ऐसे ही नहीं छोडूंगा जेसे कंगाल को रत्न मिलने पर वह उसे नहीं छोड़ता।

जठै नदी जल विमल तठै थल मेर उलटै।
तिमर घोर अंधार, जहां रवि किरण प्रगटै।।
राव करीजै रंक, रंकां सिर छत्र धरीजै।
अल्हू सास वे सार आस कीजै सिंवरीजै।।
चख लहै अंध पंगां चलण, मोनी सिधायक वयण।
तो करतां कहा न होय, नारांयण पंगज नयण।।

भावार्थ– जहाँ कभी नदी बहती थी वहाँ उलटकर थल और पर्वत बन जाए, जहाँ घोर अंधेरा हो वहाँ सहस्र किरण लेकर सूर्य प्रकट हो जाए, राजा को कंगाल और कंगाल को राजा बना दे, अंधे को आँखें, लंगडे को पैर, गूंगे को वाणी प्रदा कर दे। कमलनयन नारायण भगवान करना चाहे तो क्या नहीं कर सकते। अल्लूजी कहते हैं कि वे सांसें ही सार्थक है जो भगवद्प्राप्ति की आश करते हुए उसका स्मरण करती है।

कुंण हींदू कुंण तुरक, कुंण काजी व्रंभचारी।
कुंण मुलां दरवेस, जती जोगी जटधारी।।
कुंण बाळक कुंण व्रध, कुंण राजा कुंण परजा।
सूर धीर का काम और का नहीं अंनजा।।
कांय जटा तिलक छापा करो, कूड़ो कंमंडळ काठ को।
उंण ग्रहे साच पाइयै अलू, ओ जाप श्री आठ को।।

भावार्थ– हिन्दू, मुसलमान, काजी, ब्रह्मचारी, मुल्ला, दरवेश, यति, योगी, जटाधारी, बालक, वृद्ध, राजा, प्रजा इनके हृदय में अगर भगवान के प्रति भक्ति नही है तो इनके जटा, तिलक, छाप, काष्ठ कमण्डल आदि

बाहरी चिह्न व्यर्थ है। भक्ति करना हरेक के वश की बात नहीं है यह शूरवीर का काम है। अल्लूजी कहते हैं कि जब तक भगवान के नाम का जप नहीं करोग तबतक सत्य को नहीं पा सकोगे।

भगति हेत गोविन्द, नाथ तै कहा न कीन्हौ।
जोनी संकट आय, देव दावनल चीन्हौ।
समै बीच आवीयौ, अन्त मन्यौ न आसा।
पाक औदर पूरबे, जाय नाठो दुरवासा।
वीनती अलू री बलि बलि, विसन सामी श्रवणे निजसुणी।
करतार अनेक राखी कला, त्रीकंम सहनामी तणी।

भावार्थ– अपने भक्त की रक्षा के लिए भगवान क्या-क्या नहीं करते, पांडवों पर संकट आया तो उन्होंने भयानक अग्नि से उनकी रक्षा की, हजारों शिष्यों साथ दुर्वासा ऋषि ने असमय आकर भोजन मांगा तो आपने मनसा से उनकी उदरपूर्ति करके पांडवों को ऋषि के कोप से बचा लिया। अल्लूजी कहते है की मेरे मालिक अनंत कला संपन्न भगवान विष्णु अंतस की पुकार को अवश्य सुनते हैं।

दस दूसरस ओलख्यौ, पुरस पावक पुरस पाणी।
पुरस दूरस अध कंप, पुरस धर अंबर जांणी।
परसे पुरस रवि चन्द, पुरस अंजण पुरष अंतरि।
आठारै भार वनासपति, पात पात पेख्यो छई।
घटि-घटि रूप अरूप, रूप सोई पुरस अल्हु दरस्यौ दई।।

भावार्थ– वास्तव में भगवान का दर्शन करना चाहते हो तो उसे अग्नि, पानी, पाताल, रज, धरती, आकाश सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, फूल, सुगंध, माया हृदय, अठारह भार वनस्पति, पात-पात, घट-घट में सर्वत्र अनुभव करो। अल्लूजी कहते हैं कि वह निराकार परमपुरुष परमात्मा ही तुम्हें प्रकृति के इन विभिन्न रूपों में साकार रूप धारण किये दिखाई देगा।

सिव सेष सूखम सहित, जुगत अली मंदिर जाणै।
सबद अनाहद सुणै, प्रीत सूं हंस पिछाणै।।

जिसी मनसा जपै, पोहमि तिसा फल पावै।
साच सील संतोष, सहज साजोज्य समावै।।
नव दूण वयण ब्राह्मण सहित, साख वेद समृती तही।
इह निज विनवै अल्हू, प्रभु आरती निरखत तई।।

भावार्थ– तीनों प्रमुख नाड़ियों (ईड़ा पिंगला सुषुम्ना–सिव सेष सूखम) के अनुसंधान के बाद अंतर जगत में प्रवेश होता है जहाँ अनाहद नाद सुनाई देता है और आत्मा तथा परमात्मा के अनादि संबंध से परिचय व प्रेम होता है। हमारे मानस के भाव ही हमारे कर्मों की भूमिका तैयार करते हैं। सत्य, शील और संतोष रखने वाले को सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है। अठारह पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, वेद, स्मृति ग्रंथ जिसकी साक्षी देते हैं, अल्लूजी कहते हैं कि मैं उस प्रभु को प्रत्यक्ष निहारते हुए विनयपूर्वक आरती करता हूँ।

ब्रिहमा वेद औचरे, वीण तुंब्र बजावै।
रंभा औसर रचौ, गीत सुरसती गावै।
व्यास चित्र वीनवै, पांव गंगा पखालै।
शिव अवलोकन करै, इन्द्र सिर चंवर ढुलावै।
ससि सोलै कला इमृत श्रवै, सुरियै जोत सम सत धरै।
अवगत नाथ उपरै, अल्हू कंवलापति आरति करै।

भावार्थ– ब्रह्माजी वेदों का उच्चारण कर रहे हैं, वीणा आदि वाद्य यंत्र बज रहे हैं, इस अवसर पर रंभा अप्सरा नृत्य कर रही है, सरस्वती गीत गा रही है, व्यास भगवद चरित्रों का सृजन कर रहे हैं, गंगा पद प्रक्षालन कर रही है, शिव एकटक निहार रहे हैं, इंद्र सिर पर चंवर ढुला रहे हैं, चंद्रमा अपनी सोलह कलाओं से अमृत वर्षा कर रहे हैं और सुर्य ज्योति जला रहे हैं। अल्लूजी कहते हैं की इस प्रकार लक्ष्मीपति भगवान विष्णु की आरती हो रही है।

उतर दिस धण गयौ, गई दिखण दिस बाहर।
वैतरणी जमपुरी, घोर डरै कन जाहर।
उभी कोड़ अनन्त, कुंभ छलिया पणिहारी।
सेवै दियो सेव लीयौ, अवर कुंण लहे विचारी।

मम रहंस रखसी नहीं, रखियौ सौ चखियौ कही।
हंसणी बही प्यासी गई, अल्हू नीर नाम पायौ नहीं।

भावार्थ–मरणोपरांत शरीर को उत्तराभिमुख करके अन्तिम संस्कार कर दिया, जीव दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान करते हुए रास्ते में वैतरणी नदी को पार करके यमपुरी पहुँचता है, वहाँ पापी को भयंकर डर लगता है परन्तु पुण्यात्मा का मंगल कलशों के साथ स्वागत किया जाता है, हम जैसा कर्म करते हैं वैसा ही फल मिलता, इसमें दूसरा कोई कारण नहीं है। जिसे अपना मानकर संग्रह किया था वह भी छूट गया, संग्रह का सदूपयोग नहीं किया तो वह व्यर्थ है। अल्लूजी कहते हैं की केवल भगवद्प्राप्ति के लिए मिले इस शरीर में बैठी जीवात्मा ने भगवन्नाम नहीं लिया तो वह हंसनी के समान है जो सरोवर में रहते हुए भी प्यासी रह गई।

दावानल वन दहै, मेघ आवै रूनै आवै।
अरी उभारे खग, कुंण सहनाण पहरावै।
अंतकाल अन्तर उबरै, वसै किण वासल छिवर।
जिण काज अल्हू जिहवा जपै, सास फुरंतै सारंगधर।

भावार्थ–दावानल में वन की रक्षा मेघ करते हैं, शत्रु जब तलवार से वार करता है तो कवच रक्षा करता है। हम जिसे प्रेम करते हैं अन्तकाल में उसकी छवि हमारे अन्त:करण में उभरती है। अल्लूजी कहते हैं की जिस कामना को लेकर मेरी जीभ जिसका जप करती है वे भगवान विष्णु क्षणभर में मेरी इच्छा पूर्ण कर देते हैं।

दीनमहमंदजी

आडा डूंगर वन घणां, संबलौ लीज्यौ साथ।
आगै हाट न बांणियां, लेखो सांई रे हाथ।
नदिया गैरी कठण लांधणौ, पंथ खाण्डा री धार।
काजी महमद वीनवै, हरि भज उतरो पार।।

भावार्थ– दुर्गभ रास्तों में यात्रा करते समय ऊँची पहाड़ी, घना जंगल, गहरी नदियां आती है, जिन्हें पार करना बहुत मुश्किल होता है। रास्ते में

खरीदारी करने के लिए कोई दुकान भी नहीं मिलती उसे जरूरत का सामान अपने साथ ही लेना होता है। ऐसे ही जो जीव भजन नहीं करता उसकी परलोक की यात्रा बड़ी कष्टदायक होती है, आगे पहुंचने पर परमात्मा उसमें कर्मों का हिसाब लेता है। भगवान का भजन करने वाले को कोई कठिनाई नहीं होती, वह आनंदपूर्वक पार उतर जाता है।

सुवटा रे मीनकी डर करणां, बाळक गिणै न बूढ़ा तरणां।
ऊँचा ऊँचा महल साळ रसोई, जहां सुवटा तेरो रहंण न होई।
सुवटो आय सुषम करि सोवै, या सुवटा को मीनकी जोवै।
या मीनकी कूं ऐसी छाजै, छत्रपति कूं मीनकी ले ले भाजै।

भावार्थ– जीव रूपी तोते को बिल्ली रुपी मौत का डर हमेशा सताता रहता है, यह जब आती है तो बालक, युवा, बूढ़े का विचार नहीं करती। ऊँचे–ऊँचे महल, गहन कोठरी, रसोई आदि में कहीं भी छुपने पर यह नहीं छोड़ती है। जीव कितना भी अपने को सुरक्षित कर ले परन्तु हर समय मौत की नजर में रहता है। यह इतनी समर्थ है की बड़–बड़े राजाओं का भी यह शिकार कर लेती है।

कुंभ काचो काया कारबी, जिण री करतो सार।
जतन करंता जावसी, विणसत नाहीं वार।
हस्ती गैंवर घूमते, लाषां चड़ते लार।
गरब करंता गोषे बैसता, से जळ बळ होयगा छार।

भावार्थ– यह शरीर कच्चे घड़े के समान है, इसका इतना मोह करता है परन्तु एकपल में ही बहुविध यत्न करने पर भी यह चला जाएगा। हाथी की सवारी करनेवाला, लाखों लोग जिसके पीछे चलते थे, अभिमानपूर्वक जो उंचे झरोखे में बैठता था वह जलबल कर राख हो गया। आडा डूंगर वन घणां, संबळो लीज्यौ साथ।

दीन सुदरदीजी

माय कहै मेरा पुत है, बहंण कहै मेरा वीर जी।
इस अंधियारी घोर मां, कोण बंधावै धीर जी।
गोवळ आया गोवळी, गोवळ छा दिन च्यारि।
सुरग हंमारै झुंपड़ा, हां है आधोचारि।
नदी कराड़ै रूंषड़ो, जदि तदि होय विणास।
बौलै दीन सुदरदी, अळप जीवण संसारि।

भावार्थ–माता कहती है मेरा पुत्र है, बहन कहती है की मेरा भाई है परन्तु मृत्युकाल रूपी घोर अंधेरी रात में कौन होगा जो धैर्य प्रदान करेगा। यह संसार गोवलवास है, यहाँ आना आधोचार है, यहाँ तेरा नित्य का रहना नहीं होगा, यहाँ तो कुछ समय के लिए ही आया है, तेरा नित्य निवास तो भगवान के पास है। यह शरीर नदी के तट पर खड़े वृक्ष के समान है, जब कभी मृत्यु रूपी पानी की तेज धार आएगी और तुझे जड़ों सहित उखाड़कर ले जाएगी। दीन सुदरदीजी कहते हैं की यह जीवन बहुत अल्पकाल का है।

रायचन्दजी

थे जमाति देव रहम करो, जोति न खींचो आपणी।
नफर बिगाड़े स्वामी लाजै, बात धणी देव तुम तणी।।

भावार्थ– कवि रायचन्दजी समाज की दुर्दशा देखकर दु:खी हो जाते हैं और श्री जाम्भोजी से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि– हे देव! आप पंथ पर कृपा करो, अज्ञानतावश जीव तो भूल सकता है पर आप भूलें नहीं। आप थोड़ा विचार करके सोचें कि सेवक अगर बिगड़ता है बदनामी स्वामी की भी होती है।

कलिकाल के प्रचंड वेग ने संसार के सभी पंथों की परम्पराओं पर आघात किया, इससे हमारा पंथ भी अछूता नहीं रहा। पंथ की कुशलता चाहने वाले प्रबुद्ध सज्जनों को इन पंक्तियों की साखी को करुणा से गाकर करुणासागर श्री जाम्भोजी से करुणा करने की प्रार्थना करनी चाहिए।

भक्त मुक्त दातार, जंभ जगदीसुर कहियै।
थल सिर रह्यौ जु आय, भाग वडै सूं लहियै।
ओलखियै आचार, पार कहो कूंण ज पावै।
सारां सनमुख रहै, दई नहीं पूठ दिखावै।
ज्ञांन ककृौ गुर गम दई, म्हां सूं सनमुख देव।
लूणकरण कर जोड़ कहै, किणिं हूं न पायौ भेव।

भावार्थ–भक्ति और मुक्ति देने वाले दाता गुरु जाम्भोजी स्वयं भगवान है। वे समराथल पर विराजमान है और कोई बड़भागी उन्हें पाता है। उनकी लीला का पार कौन पा सकता है। वे सबसे सन्मुख है, कोई उनकी पीठ नहीं देख रहा है। ज्ञान देकर गुरु ने मार्ग दिखा दिया है, वह हमारे ऊपर कृपा दृष्टि बरसा रहा है। राव लूणकरण कह रहे हैं की उनका पार कोई नहीं पा सकता।

जंभ गुर सो देव न कोउ सुण्यौं न देख्यौ।
घ्रत धूप मिस्टान होम क्रत नित प्रति पेख्यौ।
करै विष्णुं उपदेस लेस जिव पाप न राखै।
सब दुंनियां सूं हेत, खेत मुक्ति मुख भाखै।
आंन देव किए दूर सब, कहै मुखां हरि सेव।
लूंणकरण राजा कहै, नमो नमो गुर देव।

भावार्थ–जम्भगुरु जैसा देव कोई और सुना और देखा नहीं। नित्य प्रति ये घृत, धूप, मिष्ठानादिसे होम करते हुए दिखाई देते हैं। ये विष्णु स्मरण का उपदेश करते हैं और जीव का लेशमात्र भी पाप शेष नहीं रहने देते। संपूर्ण विश्व से ये प्रेम करते हैं और मोक्ष को मुख्य रखकर कर्म करने की बात कहते हैं। इन्होंने सब आनदेवों की पूजा छुड़ाकर अपने श्रीमुख से एक हरि की उपासना की ही आज्ञा दी है। राजा लूणकरण कहते हैं की मैं ऐसे गुरुदेव को बार–बार नमन करता हूँ।

दाता भी सोई पोह पूरो, सूरे सभा पहुँचाइये।
मिनख रूपी फिरे कलि मा, भेद बिरला पाइये।।

भावार्थ– मनुष्य रूप में विचरते बैकुंठ प्राप्ति का सुगम मार्ग बताने वाले परम दयालु श्री जाम्भोजी को सम्यक् प्रकार से किसी तत्वज्ञ ने ही समझा है।

सो गुर पहराजा मिल्यौ, सो गुर हरिचंद राय।
सो गुर मीलीयो पांच पांडवे, झंभ मिल्यौ सत जाय।

भावार्थ– जो गुरु प्रहलाद, राजा हरिश्चंद्र और पांचों पांडवों को मिले थे वे ही गुरु जाम्भोजी के रुप में हमें मिले हैं, इसे सत्य मानकर स्वीकार करो।

दिल भगतां दीपग ठयौ, करि गुर भगवो भेख।
मान्यख रुपी महमहांण, मिलियो आप अलेख।।

भावार्थ– जिसे भक्त अपने हृदय में सदा ज्योति स्वरुप विराजमान देखते हैं, वही अलेख परमतत्व भगवा वेश धारण करके मनुष्याकृति में गुरु जाम्भोजी के रूप मे आए हैं।

नफर झांभाणा हंस गति, आंह वांह एक पारेख।
असरां ही तै सुर किया, लाधी गुर पारेख।

भावार्थ– जाम्भाणी पंथ पर चलने वाले और परमहंस महापुरुष की एक ही गति होती है। जो महान पापीयों को देवताओं के समान बना दे यही सच्चे गुरु की पहचान है, जाम्भोजी के रुप में ऐसा गुरु मुझे मिला है।

किया कमावौ ता खरी, करणी न घातौ हेल।
साम्य संबोहो आपणां, करि तेतीसां मेल।।

भावार्थ– सोच–विचार कर विवेकपूर्वक सात्विक कर्मों का संग्रह चाहिए। भगवान को अपना मानकर उन्हें प्रेम करने से पूर्व में तैतीस करोड़ बैकुण्ठ प्राप्त लोगों से मेल हो जाएगा।

मेरे बाबल बताइ वाटड़ी, तांह वाटड़ीयां बल्यहार।
भगत्य परापत्य हुय पुलौ, मिला साहिब क दीदार।

भावार्थ– मेरे बापजी गुरु जाम्भोजी ने जो मार्ग मुझे बताया है मैं उस माग्र पर बलिहारी जाता हूँ। सर्वप्रथम भक्त पूल्होजी ने इस मार्ग को अपनाकर अमरपद प्राप्त किया है।

खर नीमन न करै, ते आकी संसार।
अहरण्य लोह सीघांण ज्यौ, घणी सहेस्यै मार।।

भावार्थ– जिस मूढमति के जीवन में विनम्रता नहीं है और जो संसार में जीवमात्र से द्वेषभाव रखता है वह आगे के अनंत जन्मों में उसी प्रकार भयंकर मार सहता है जैसे लौहार के अहरण को पीटा जाता है।

प्रदेसी प्रदेस मां, कूड़ा करे ढ़िमाल।
तुं मांड वढ़ाहीयौ, थारै संग्य रह जम काल।

भावार्थ– यह संसार अपना देश नहीं है, यह हमारे लिए परदेश है और हम यहाँ परदेशी हैं। यहाँ आकर हम अपने देश को भूल जाते हैं और यहाँ घर बनाकर इसे स्थायी निवास मान लेते हैं परन्तु मृत्यु हमें नहीं भूलती और अवसर मिलते ही झपट्टा मारकर हमारे इस झूठे विस्तार का अंत कर देती है।

जंवर कुंण न गंजीया, इह खोटै संसार।
चाल सुवा व देस नौ, तुंह सा पंख संवार।।

भावार्थ– इस नाशवान संसार में मृत्यु ने किस ग्रसित नहीं किया है? आलमजी अपने आत्मस्वरूप से कहते हैं की चलो अपने देश चलते हैं इस पराए देश में नहीं रहना, यहां के विषय–विकारों के लगे कीचड़ को साफ करके पंखों को संवार ले।

हंसौ दोराई छो फिर, इण्य सरि ढुकि न पीवत।
ज्यौ सर देख भणहंणा, सो सर मने न वसत।।

भावार्थ– मानसरोवर (ब्रह्मलोक) का हंस (जीवात्मा) इस सांर रूपी सरोवर को देखकर उदास है, वह यहाँ कुछ भी पान नहीं कर रहा है। इस सरोवर के धोखे में वह भ्रमित–सा हो गया हे उसका मन यहाँ लगता नहीं है।

आडो भुंय जल अथग अधावणौ, पहलौ पूरी वहंत।
भेदी भुंय जल उतरै, मूरखा मांही रहंत।

भावार्थ– भगवद्प्राप्ति के रास्ते में अथाह, प्रचंड वेग से बहता, बहुत विस्तृत भवजल है, परन्तु जो तैराक (तत्वज्ञानी) हैं वे इसे निर्विध्न पार कर लेते हैं ओर जो मुर्ख (अज्ञानी) हैं वे डूब जाते हैं।

घरि घघल अवरे घणां, विखमी वाट वहंत।
सूरा होय सस बह, कायर किर पडंत।।

भावार्थ– कुमार्ग पर चलने वाली मूढ़मति तो बहुतायत में मिल जाएंगे। सुमार्ग पर तो कोई शूरवीर ही चलता है कायर तो इस पर फिसलकर गिर जाते हैं।

जंम पासी पग पगि ठवी, धरणो न जाइ पाव।
सतगुर गति छ उबरंण, तुं सहजे सहज्य संमाय।

भावार्थ– मृत्यु ने पग–पग पर जाल फैला रखा है, कोई ऐसी सुरक्षित जगह नहीं है जहाँ पर पैर रखकर चला जा सके। सतगुरु की शरण के अलावा ऐसा कोई उपाय नहीं है जो इससे जीव की रक्षा कर सके। सतगुरु की कृपा होने पर जीव अपने सहज स्वरुप को प्राप्त कर लेता है जहाँ जरा–मरण का कोई भय नहीं है।

सौदागर सौदौ करी, औगण हंज नीवारि।
करि सुकरत गुंण गंठड़ी, ए मेलै घै सजंण पारि।

भावार्थ– जीव इस संसार रूपी अनजाने नगर में एक सौदागर बनकर आया है, वह यहाँ पर अवगणु रुपी घाटे को बटोरने नहीं अपितु गुणों की गठरी का लाभ लेने आया है, ये गुण ही एक सज्जन मित्र की तरह उसे पार उतारेंगे।

खिमा दया सुचि सांच तु, सतव्रत सील संतोष सुभाव।
नांव विसन क विलंबणा, हसा तुं पहरि संनाह।।

भावार्थ– क्षमा, दया, पवित्रता, सत्य, धर्मदृढ़ता, शील, संतोष ओर उदारचित्त इन गुणों का कवच धारण करके विष्णु नाम का आश्रय लेने से पार उतरा जा सकता है।

सत सबद जे मांनीय, धारा तीरथ न्हांण।
धर विवंग जे पसीया, विसन कर आसान्य।।

भावार्थ– सबद को सत्य मानकर जप करने से वह सबद ही तीर्थ बनकर कष्मल खो देता है। नामजप करते हुए जाप पर कोई मुसिबत आती है तो विष्णु उसक आसान कर देते हैं।

मोमिण जीवता मरे, रूधां आगल्य जेह।
जांह नै अडीका नहीं, चालै गुरु वचनेह।।

भावार्थ– मुमुक्ष साधक जीवनमुक्ति को प्राप्त करता है उसे कोई अवरोध रोक नहीं सकता। जो गुरु वचनों के अनुसार चलता है उसकी सब विघ्न बाधाएं दूर हो जाती है।

साजंनीया अगन्य न दाझइ, न उंडै डूबाय।
खड्ग धारा नहिं तुटही, जोते जोति मीलाय।।

भावार्थ– आत्मा तो परमात्मा की अभिन्न, प्रिय और अविनाशी अंशा है, यह अग्नि में जलती नहीं, गहरे पानी में भी डूबती नहीं, तीखी तलवार की धार से भी कटती नहीं, यह ज्योति स्परूप आत्मा धरती पर अपने कर्मभोग करके परमज्योति परमात्मा में मिल जाती है।

जीह खंडि सूर न उगवै, मुवौ न सुणीयै कोय।
चाल सुवा व देस नै, नीत अजरां वर होय।।

भावार्थ– जहाँ कभी सुर्य का उदय–अस्त नहीं होता, जहाँ किसी की मृत्यु हो गई ऐसा नहीं सुना जाता, जहाँ नित्य नवीन अक्षय आनंदवर्धन होता है, आलमजी जीव रूपी सुवा से कहते हैं कि उस देश में चलते हैं।

छोड़ि क्रम नीहक्रम हुवा, चाल्या सु संग्य साथ्य।
सांभल्य जीवड़ा गुर कही, मुकति खेत की बात।।

भावार्थ– हे जीव, तूं अपना कल्याण चाहता है तो गुरु ने जो मुक्ति की बात बताई है उसे ध्यानपूर्वक सुन और तदनुसार साधना कर, निष्काम भाव से कर्म करते हुए सत्पुरुषों की संगति में रह।

जीतब थोड़ो वित घैणौ, सतगुरु दीयो बताय।
रतन काया बुंटै उपरै, सुगरा मोमीण लीयै उचाय।

भावार्थ– इस छोटे–से जीवन में असंभव–सी प्रतीत होने वाली मुक्ति की प्राप्ति का बहुत ही सुगम उपाय सतगुरु ने बता दिया है, इससे आत्मस्वरूप सन्मुख प्रतयक्ष हो जाता है, सुगरे मुमुक्ष इसे प्राप्त करते हैं।

गोमिदो गूगळ षेवंतो, रंमतो यां थळियां।
साधां नै संमझावतो, हूं बळि तांह दिनां।

भावार्थ–स्वयं भगवान के द्वारा हवन के बाद गूगल धूप की महकार होती थी। आनंदपूर्वक समराथल पर निवास करते हुए वे साधकों को ज्ञानोपदेश करते थे। मुझे वे दिन याद आते हैं, मैं उन दिनों पर बलिहारी जाता हूँ।

संभरथळ रळि आंवणौ, तुंही मुकांम तळाव।
भगतां सरसौ भाव करि, देवजी दया करि आव।
तीरथ मोटो ताळवो, जे करि जांणै कोय।
जिणि पहराजा उधरयौ, साचो सतगुर सोय।

भावार्थ–समराथल पर लीला करनेवाले का नित्य निवास अब तालवा मुकाम में है। भक्त श्रद्धा और प्रेमभाव से यहाँ आते हैं और देवजी दया करके उनके भावानुसार फल प्रदान करते हैं। मुक्तिधाम मुकाम बहुत बड़ा तीर्थ है परन्तु इसकी महिमा को कोई भलिभाँति जाने तब ही बात बनती है। जिन्होंने प्रहलादजी का उद्धार किया था वे सच्चे सतगुरु यहाँ विराजमान है।

होय करि मगंन गगंन जाय वसिया, जोते जोति संमांणी।
आलम कूं दांन अतौ प्रभु दीजै, वीचि सभा वैसांणी।

भावार्थ–भगवान के नामस्मरण और उसके ध्यान से एकाग्र चित्त गगनमंडल में स्थिर हो जाता है, फिर वह नीचे नहीं उतरता और मुक्ति प्राप्त कर लेता है। आलमजी कहते हैं की प्रभु ऐसी कृपा करो की मुझे भी यह स्थिति प्राप्त हो जाए और मैं भी आपके धाम में नित्य निवास पा सकूँ।

चिळत देवां रा कुंण लहै, कुंण लहै किसंन रा माघ।
अपरंपर वीणि कुंण लहै, सोवंन मंडळ री थाग।।

भावार्थ–देवताओं जैसे चरित्र करना, भगवान श्रीकृष्ण जैसा मुक्ति मार्ग दिखाना और परमधाम की प्राप्ति का भेद बताने वाला कोई और नहीं वह (गुरु जाम्भोजी) स्वयं परमात्मा ही है।

कूड़ै भरोसै कुटंब कै, काची काची निकच कुंमाय।
जब जंम की पासी पड़ै, काहु ता सरै न काय।
जर जुंवरौ पहरा दियै, मुरिषौ रय करि वसाय।
कुवै उसारे कुंभ ज्यौं, तल्य बंध्यौ आवै जाय।

भावार्थ–कुटुम्ब के झूठे भरोसे सारी उम्र नश्वर पदार्थों का संग्रह करता है, परन्तु जब यमफांस गले में पड़ता है तो कोई सहायता नहीं करता। बुढ़ापा आ गया यमराज दरवाजे पर खड़ा है, मुर्ख अगर संसार के विषयों से विरक्त नहीं हुआ तो कुएँ से पानी निकालने के बर्तन की तरह जन्म-मरण में आता जाता रहेगा।

इणि कुमलांणै पोहप सिरि, बैठो जोषै मांह।
सत सुकरत पर प्रांण करि, केवळ वास वसांय।
मधकर अब ज सुंवारे तूं, सुकरत पांषड़ियां।
सोई दरसंण म्हारै सांम्य को, देषूं आंषड़ियां।

भावार्थ–ऊँचे झरोखे में बैठा क्या निरख रहा है, आज जो ऐश्वर्य का पुष्प खिला है वह मुरझा जाएगा। प्राणपण से परहित के लिए सुकृत्य करने पर मुक्ति मिलेगी। हे जीव रूपी भंवरे अब तूं जो सत्कर्म करेगा, वही एक दिन तेरे पँख बनकर तुझे वहाँ ले जाएंगे जहाँ पहुँचने पर भगवान के दर्शन होंगे।

अब ज चलौ रे न रहौ, काटि चलौ जंम फंध।
अपणौ प्यारै पीव सूं, रळि मिळि करां आणंद।
अचि इम्रत हरि नांव रस, मंन मधकर होय होय सुरंग।
उडि अलमां मधकर भुंवर, मिलि गुर झंभ अचंभ।

भावार्थ–अब इस नश्वर संसार में नहीं रहना है, यमफंद को काटकर अपने प्यारे प्रीतम को मिलने जाना है। आलमजी अपने मन रूपी भंवरे से कहते हैं की हरि नाम का रस अमृत है तूं इसका पान करके अमर हो जा और मृत्युलोक से उड़कर वहां चला जा जहां गुरु जाम्भोजी विराज रहे हैं।

पंथी दोय सुलषणां, सकळ कळा चंद सूर।
एह पटंतर देह नै, हरि नेड़ा बसै क दूरि।

भावार्थ–अति दूर दिखने वाले सर्वकला संपन्न दो गुणवान यात्री चंद्रमा और सूर्य सुक्ष्म रूप से हमारे शरीर में भी स्वर बनकर सदैव गति कर रहे हैं। इस प्रकार इनकी तरह दूर प्रतीत वाला भगवान भी हमारे अंदर ही रमण कर रहा है, परन्तु इस भेद को जानने वाला चाहिए।

कोई बतावै हरि आंवतो, सांई म्हांरो पांथलियां।
आरति वूठा मेह ज्यौं, पूजैं मन रळियां।
निरधनियां धनिवाळ हो, आरती आरतियांह।
यौं हरि हमकूं वालहो, ज्यौं चंद कमोदनियांह।

भावार्थ–कोई मुझे हरि के आने का समाचार दे की मेरा स्वामी पहुंच गया है। वर्षा के अभिलाषी को बरसात होने पर, निर्धन को धन मिलने पर, दु:खी का दु:ख मिटने पर, कुमुदिनी को चंद्रमा मिलने पर जो आल्हाद होता है, ऐसे ही भगवान मुझे प्रिय लगे।

दूरगदासजी

नीवाई मां राखिया, मुंजारी सुत दोय।
ऊपरि पावक प्रजल्यौ, सांम्य उबारया सोय।
लाख मंडप क्यौं जलै, सांम्य करै जां सार।
लज्या राखी द्रोपती, दुसासण री वार।
भगवंत भगतां तारणौ, गुर धारयो भगवों वेख।
कंमधज राजा कारणौ, वरस अठारा देख।

भावार्थ–जिस भगवान ने कुम्हार के आंवा में जलती अग्नि के बीच बिल्ली के बच्चों की, लाक्षागृह में पांडवों की और भरी सभा में दु:शासन के द्वारा चीरहरण करते समय द्रौपदी की रक्षा की थी वही इस बार अपने भक्तों को तारने के लिए भगवा वेश धारण करके गुरु रूप में आए हैं, जिन्होंने अठारह वर्ष की आयु में राव जोधा को आशिर्वाद प्रदान किया।

हिरण कूं जब भीर परी, बधक आंन्य घेरयौ।
बानैं हूं की लाज राषी, बल व्रन फेरयौ।
द्रोपता की लाज काजे, चीर हूं बढायो।
मोतियै की मदति कीनी, दूंणपुरे आयौ।
नांमदे भल भगति कीनी, नांव ले ले तेरौ।
भगत बछळ भगति कारंणि, देहरै वळ फेरयौ।
असे संत अनेक तारे, कूंण सोभा गांऊं।
दुरगदास की अरदासि है, विसंन दरस पांऊं।

भावार्थ–जड़भरत ने पूर्व जन्म में एक हिरण की रक्षा के लिए अपनी तपस्या को दांव पर लगा दिया परंतु आपने अगले जन्म में उनका उद्धार कर दिया, चीर बढ़ाकर द्रौपदी की लाज रखी, द्रोणपुर जाकर मोती मेघवाल की रक्षा की, नामदेव ने आपके नाम के बल पर अपनी भक्ति को पुष्ट किया, आपने अपनी भक्तवत्सलता के कारण देवताओं को बल प्रदान किया, आपने अनेक संतों का परित्राण किया, आपकी महिमा का बखान मैं कैसे करूं। दुरगदासजी कहते हैं की मेरी यह अरदास है की मुझे विष्णु के दर्शन हो जाएं।

मेहोजी गोदारा

जां नहीं नासिका, तां किसौ सोड।
जां नहीं पीहरौ, तां किसौ कोड।।
जां नहीं मात, जां नहीं तात।
कैने कहूं सखी, गूझ री बात।।

भावार्थ– जिस प्रकार किसी के नाक नहीं है अथवा किसी रोगवश नाक बंद है तो उसे गंध का अहसास नहीं होता उसी प्रकार किसी स्त्री के पीहर नहीं है तो वह पीहर की याद में उदास रहती है, वह अपनी सखी से कहती है कि– माँ–बाप के बिना मैं अपने दिल की बात किस से कहूँ?

क्यौं वीसरै दांन क्यौं वीसरे मान।
क्यौं वीसरे जुगति सूं जीमियौ धांन।।
क्यौं वीसरै सांप नै सीस रो घाव।
क्यौ वीसरै वैरियां जदि पड़ै दाव।।

भावार्थ– दाता द्वारा उदार मन से दिया हुआ दान याचक नहीं भूलता। प्रीतिपूर्वक किया हुआ सम्मान और करवाया हुआ भोजन मेहमान नहीं भूलता। सर्प और दुश्मन को दिया हुआ घाव वे नहीं भूलते और अवसर मिलते ही बदला ले लेते हैं।

सत सीतां जत लखमंणां, सबळाई हंणवंत।
जे आ सीत न जावही, अै गुंण मांहि गळंत।।

भावार्थ– सीता का हरण होने पर ही उनके सतीत्व, लक्ष्मण के जतीपने और हनुमान के बल–पराक्रम का संसार को पता चला अन्यथा तो ये गुण छुपे ही रह जाते। आपत्तिकाल में ही मनुष्य के सुषुप्त गुण प्रकट होते हैं।

रहमतजी

निगम नेह जस गावही रे हेली, सेस सहस फण सार।
सिव ब्रह्मादिक खोजता, विसन तणौ नहीं पार।
इंद्र सहत सर्ब देवता, आए करण जुझार रे हेली।।
चरण प्रस्याजी स्याम का, गावै मंगलाचार।
पहराजा कै कारणै रे हेली, संभराथल अवतार।।
जन रहमत की वीनती जंभ गुरु अवतार।

भावार्थ– वेद जिसका यशोगान करते हैं, हजार फणों से शेषनाग जिसका गुण गाता है। शिव–ब्रह्मादिक जिसकी खोज करते हैं परन्तु उसका पार

नहीं पाते। इन्द्र सहित सभी देवता जिसके चरणों में आकर नमस्कार करते हुए स्तुति गान करते है। वही विष्णु, प्रहलाद को दिए वचन के कारण समराथल अवतार धारण करके धरती पर आये हैं। रहमतजी कहते हैं की मैं उन जम्भगुरु को विनय सुनाता हूँ।

घर घर ही सों नीसरी रे हेली मुष देषण सुंवार।
सोरंभ अत ही सुहावणी झरै न दसों द्वार।
निगम नेत जस गावही रे हेली सेस सहंस फण सार।
सिव ब्रह्मादि षोजतां विसन तणौं पार।

भावार्थ–वेदादि जिसका यशोगान गाते हुए नेति नेति कह उठते हैं, अपने हजार फणों के साथ शेषनाग तथा शिव, ब्रह्मादि भी जिस विष्णु का पार नहीं पाते, उन(गुरु जाम्भोजी) के दसों द्वारों से सामान्य भौतिक शरीर की तरह दुर्गन्धित अपशिष्ट पदार्थ नहीं निकलते, उनका शरीर दिव्य है और वह हरसमय दिव्य सुंगध से सुवासित रहता है। उसका दर्शन बहुत ही मनोहारी है, उन्हें देखने के लिए घर–घर से टोली की टोली (समराथल की ओर) जा रही है।

वील्होजी

पाखंड कर परमन हड़ै, तहां मेरो मन न पतियाय।।

भावार्थ– जो दूसरों का विश्वास अर्जित करने के लिए पाखंड का सहारा लेते हैं, वे विश्वास करने के योग्य नहीं है।

गुरु फुरमाई खांडा धार, अवसर आपो सारीये।
आपण जीवड़ो कबूल कर, परजीव उबारिये।।

भावार्थ– अवसर आने पर परहित के लिए अपने प्राणों की आहुति दे देनी चाहिए। इस मुक्ति मार्ग की यात्रा तो तलवार की धार पर चलने के समान है।

रूंखा ऊपर मरण धारयो, कीजै ज्यों करमणी कियो।

भावार्थ– कर्मा और गौरां ने वृक्षों की रक्षार्थ बलिदान दे दिया, आवश्यकता पड़ने पर हमें भी इनका अनुसरण करते हुए प्राण देकर भी वृक्ष बचाने चाहिए।

खोखर नै मोटो कहे, निश्चल राखो चित।
तज काया जित जाइये, जहां सुख बण्या है नित।

भावार्थ– अब हम अटल निश्चय के साथ देहत्याग करते हुए नित्य सुख के धाम (बैकुंठ) जाएंगे। वृक्षों की रक्षार्थ जाते हुए इन बिश्नोईयों के भाव कितने अलौकिक है। इनमें अपने कर्तव्य पालन का चाव और अपार संतुरिट है। भयंकर पर्यावरण प्रदूषण से मरन्नासन हुए विश्व के लिए ये भाव किसी संजीवनी से कम नहीं है।

कलियुग कलह घणी, कहि संभलांऊ साध।
जासुं कहिजै हेत सूं, सोई चलावे वाद।।

भावार्थ– कलियुग कलह का युग है, सहनशीलता की कमी के कारण लोग छोटी–छोटी बातों के लिए परस्पर झगड़ते है। प्रेमपूर्वक हितकारक वचन कहने वाले को अपना शत्रु मान लेते हैं और उसे दुर्वचन कहते हैं।

बैसि सभा मा ग्यांन विचारै, भीतरि लखण बिल्ली का धारै।
धरम ठगां का एही इहनांणा, वील्ह कहै मैं देखि डराणा।।

भावार्थ– आंखें मूंदकर चुपचाप शान्तभाव से बैठी बिल्ली तपस्वी की तरह प्रतीत होती है परन्तु भीतर योजना चूहे की प्राप्ति की ही बनती है तथा चूहा सामने आते ही वह उस पर टूट पड़ती है। ऊंचे आसन पर बैठकर सभा में ज्ञान की बातें तो बहुत करते हैं परन्तु अन्त:करण में चिन्तन विषयों की प्राप्ति का ही चलता है, विषयों के उपस्थित होते ही स्वयं को उनके उपभोग से रोक नहीं पाते। वील्होजी कहते हैं कि यह बिल्ली वृत्ति वाले धर्मठग गुरुओं की निशानी है, इन्हें देखकर मुझे डर लगता है।

परहरियै सो गांव, नांव विसंन को न भंणीजै।
नहीं साधु सूं गोठ, ग्यांन सरवंणे न सुंणीजै।।
घंणो वाद अहंकार, घंणी पर निंदा किजै।
नहीं घरम सूं सीर, मुखे अभखळ बोलीजै।।
मेट्यौ सतगुर को कहयौ, राह सैतांनी पाकड़ी।
वील्हा विलंब न कीजियै, जिंह नगरी एका घड़ी।।

भावार्थ– जहां लोग भगवद् भक्त नहीं है, साधु की संगति में बैठकर ज्ञान प्राप्ति नहीं करते, वाद-विवाद, अहंकार, परनिंदा तो खूब करते हैं परन्तु धर्म के रास्ते पर नहीं चलते और मुंह से अमर्यादित भाषा बोलते हैं। सद्गुरुदेव की शिक्षा न मानकर, दुष्टकर्म करते हैं। वील्होजी महाराज कहते हैं की अपना कल्याण चाहने वाले साधक को उस गांव-नगर में एक घड़ी (24 मिनट) भी न रूकते हुए उस जगह का अविलंब परित्याग कर देना चाहिए।

तहां न राची मन, झूठ अभखळ बोलीजै।
तहां न राची मन, जीव पर दया न कीजै।।
जहां न राची मन, पिंड स्वारथ सैंणाई।
तहां न राची मन, ग्रब जहां कूड़ बड़ाई।।
साबण लाख मजीठ मन, मोमिण तां मन खंचियौ।
तहां कपट को हेत वील्हा, तांह नरां न रचियौ।।

भावार्थ– जहां झूठ और अशिष्ट भाषा बोली जाती है, जीवों पर दया नहीं की जाती है, स्वार्थ के लिए सम्बन्ध रखे जाते है, लोग अहंकार और झूठी प्रशंसा में मुग्ध रहते हैं, बाहरी सुंदरता और चमक-दमक का दिखावा हो, ऊपर से स्नेह का प्रदर्शन हो परन्तु दिल में कपट हो। इन जगहों पर हे मन! आकर्षित मत होना।

कूड़ी मंडो आस, वास थिर मिनख न कोई।
कूड़ै माया जाळ, भरंम मत भूलो लोई।
ऊपर गंजै काळ, ताह सिरि सदा उबांगी।
विसन जपो संसारि, विच घंघळ घर आगी।

भावार्थ– इस संसार से आशा करनी व्यर्थ है, यहां स्थाई रूप से रहने के लिए कोई नहीं आया। यहां का मायाजाल सब झूठा है, अपना कल्याण चाहने वाले को भ्रमित नहीं होना चाहिए। सिर ऊपर काल गर्जना करते हुए सदा ताल ठोक रहा है। वास्तविक घर तो आगे है परन्तु सकुशल वहाँ पहुंचने में अनेक विघ्न-बाधाएं हैं, इसलिए कुशलता के लिए हरपल भगवान विष्णु का स्मरण करो।

भूखै नै भोजन दिया, जाणि भगवंत जिमायौ।
तिसीये जण नै जळ दियो, जाणै आप नै पायो।।
उघाड़ै नै पांगरण दियो, जाणिं पारब्रह्म उढ़ाईयौ।
निरधन नै धन दियो, जाणि आप मनि भायो।।

भावार्थ– भूखे की क्षुधा निवृत्ति के लिए दिया हुआ भोजन, प्यासे को पिलाया जल, वस्त्रहीन को पहनाया गया वस्त्र और किसी जरूरतमंद गरीब की गई आर्थिक सहायता के द्वारा आप अप्रत्यक्ष रूप में भगवान की ही सेवा कर रहे हैं।

कळा नूर वरत झांभाणौं, देव सभा देवलोक मंडाणौ।
जे जण औलखि पाय किग्गा, जां जीवां रा सांसा भग्गा।

भावार्थ– अनंत कलावतार भगवान श्री जाम्भोजी सभा में ऐसे शोभायमान हो रहे हैं जैसे कोई देवलोक की देवसभा हो। जिन्होंने इन पूर्णब्रह्म को पहचान कर इनकी शरण ली है उनके सब संशयों की निवृत्ति हो गई है।

अमियां गरुड़ दवार थी, ज्यौं विख निर्विख होय।
विसन जपंता पाप ख्यौ, बोहड़ि न करियौ कोय।

भावार्थ– गरुड़ के मुख में अमृत समान कोई शक्ति रहती जिसके कारण सर्प भक्षण करने पर भी उस पर विष का प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसे ही जिसके मुख में विष्णु नाम की अमृत संजीवनी बूटी विद्यमान रहती उसके सब पाप, ताप, संतापों का जहर नष्ट हो जाता है। पाप का सबसे बड़ा प्रायश्चित है उसे पुन: न करने का संकल्प। नाम जप से पाप कट जाएँगे, यह सोचकर अगर कोई पाप करता है तो उसके पाप अक्षम्य हो जाते हैं।

अड़वो चुगै न चुगण दयै, माणस की उणियार।
वील्ह कहै रे भाइया, सूम बड़ो संसार।।

भावार्थ– आवारा पशुओं से सुरक्षा करने के लिए खेतों में खड़ा, मनुष्य जैसा दिखने वाला पुतला (अड़वा) स्वयं भी खेती का उपभोग नहीं करता तथा दूसरों को भी भय दिखाकर ऐसा करने से रोक देता है। उसी प्रकार उस अड़वे जैसे मनुष्य भी स्वयं तो सत्कर्म करते ही नहीं दूसरों के मार्ग में भी रोड़े अटकाते हैं।

वसुधा सब कागज करूं, सारदा लेख बनाय।
उदध घोरि मिस कीजिये, हरि गुण लिख्यो न जाय।।

भावार्थ– सम्पूर्ण धरती को कागज तथा सभी समुद्रों की स्याही बनाकर स्वयं सरस्वती भगवान के गुण लिख दे तो भी उन गुणों का पार नहीं पाया जा सकता।

न कोई मांगै दूध घी, न कोई चौपड़ चाहि।
वील्ह कहै वीखै समै, चौपड़ अंन ही मांहि।।

भावार्थ– मनुष्य को प्रतिकूल परिस्थितियों को देखते हुए अपने आपको उसके अनुरूप ढाल लेना चाहिए। जब कहीं रोटियों के ही लाले पड़ रहे हो तो वहाँ दूध, घी मांगना बेमानी है।

डांग ठहूको कड़ि हथो, नैणां ऊपर हथ्थ।
वील्ह बुढ़ापो आवियौ, गयो ज धींगड़ सथ्थ।।

भावार्थ– जब बुढ़ापा आता है एक हाथ में लाठी और दूसरा हाथ कमर पर रखकर चलना पड़ता है, देखते समय भी आँखों पर हाथ का छज्जा बनाकर दृष्टि जमाने का प्रयत्न किया जाता है, तब वो जवानी के उल्लास भरे दिन याद तो बहुत आते हैं पर लौटकर नहीं आते।

अपनां किया उबारल्यौ, मेटो अगला पाप।
दरगे सूं दागल हुवा, मसतगि दीन्ही छाप।। **भावार्थ–** जब आपने मुझे अपना लिया है तो निश्चय ही मेरे पूर्व के पाप क्षय हो गए है और भविरुय में पाप होने की संभावना समाप्त हो गई है। शरणागति की स्वीकृति के रूप में आपने मेरे माथे पर अपनी छाप लगा दी है, अब मुझे आपका धाम प्राप्त करने में कोई बाधा नहीं है।

वैर विरोध काहे कूं कीजै, जीवण नहीं अंति मरीये।
और अगन्य का बांण लीयावै, तो आपे जन होय ठरीये।
विष हुंता इम्रत करि लीजै, अजर सबद जे जरीये।।

भावार्थ– जीवन की क्षणभंगुरता और मृत्यु रूपी अटल सत्य को स्वीकार कर लेने पर किसी से वैर भाव रखने का विचार ही नहीं आता। कोई

अत्यंत क्रोधित होकर आए तो जल के समान ठंडे रहीये, उसकी क्रोधाग्नि स्वत: ही शांत हो जाएगी। किसी के जहर के जैसे बोले गए कटु वचनों के प्रति उत्तर में अगर हम अमृत के समान मधुर और हितकारी वचन बोलेंगे तो परस्पर विरोध और शुत्रुता के पैदा होने की संभावना ही समाप्त हो जाएगी।

डरणा है तो अबके डरि लीजौ, बोहड़ि उधारे न करीये।
वील्हा जाण्य सींवरि मदसुदन, साध संगति उबरीये।।

भावार्थ– अनन्त जनमों से आवागमन में भटकता जीव जरा-मरण के भय से इस जीवन में अंतिम बार भयभीत हो ले, इसे आगे के लिए उधार नहीं रखना है अर्थात् सत्पुरुषों का सान्निध्य प्राप्त करके भगवद् भजन के द्वारा मुक्ति प्राप्ति का उपाय कर लेना चाहिए।

सकल छाडि अकळ सू राचौ, संक वीडारि मगन होय नाचौ।
वील्ह कहै मुखि कूड़ न कहणां, तज्य अभेमांन खाक होय रहणां।।

भावार्थ– संसार की आशा छोड़कर केवल एक भगवान की ही आशा रखनी चाहिए। भगवान के शरण होने के बाद जीव निर्भय और निसंक होकर अपार आनन्द की अनुभूति करता है। कभी असत्य भाषण ना करें। जीवन की क्षणभंगुरता को स्वीकार करते हुए अपने को अभिमान शून्य, सरल एवं सहज रखना चाहिए।

जाता सूं राता मन्य मेरा, फिरि फिरि दुख सहया बोहतेरा।
रहता सूं रहियौ लिवलाई, जातै ओ तंन विण्यस्स न जाई।।

भावार्थ– नाशवान (संसार) में आसक्ति रखने से आवागमन के चक्र में पड़े रहकर दु:ख उठाना पड़ेगा। अविनाशी (परमात्मा) में आसक्ति होने से अमरत्व की प्राप्ति होगी।

सुरपति श्रीपति तीन्य लोकपति, अवगति जांकौ नांव।
भगतां के काज्य भेख धरि आयौ, दीण अमर पद दांन।।
सील साच सत जीव दया तप, जरणां केक न्यांन।
वील्ह को सामी तरण तारण सोई, जांका एक उपख्यान।।

भावार्थ– देवताओं के स्वामी, लक्ष्मीपति, तीनों लोकों के मालिक, जिनकी थाह कोई नहीं पा सकता वे भक्तों का कार्य सिद्ध करने के लिए भगवां वेश धारण करके आए हैं और वे शरण आए हुए को मुक्ति प्रदान करते हैं। शील, सत्य, जीवदया, क्रोधादि विकारों का शमन और कैवल्य ज्ञान की शिक्षा देने वाले श्री जाम्भोजी की महिमा का मैं बखान करता हूँ।

परहरे ओर आंन के व्रणां, औह चित राख्य अनंत की चरणां।
इण्यसी सारि कछु थे तिन पाई, ओर नै खाटी थित्य गुमांई।।

भावार्थ– दूसरे किसी सहारे की आसा का परित्याग करके भगवान के श्रीचरणों में ही अपने चित्त को स्थिर रखना चाहिए। इन चरणों में विश्वास करने से सब कुछ ठीक होगा, दूसरी जगह तो धोखा ही मिलेगा।

दसुंधीदासजी

जैसे मथि सायर मां चवदै रतंन काढे,
तैसे तिहुं लोक ही मां पंथ ही चलाया है।
जैसे काळी नाग नाथी जळ उरध घाट कियौ,
भगत कै तारिबै कूं देह धरि धाया है।

भावार्थ–समुद्र मंथन से जैसे चौदह रत्न निकले थे, ऐसे ही तीनों लोकों में पूर्व प्रचलित सभी साधना पद्धतियों का मंथन करके गुरु जाम्भोजी ने उत्तम पंथ चलाया है। जिसने कालिय नाग को नाथ कर उसके द्वारा विषाक्त किए गए जल को शुद्ध किया था वही अब धर्ममार्ग में आई अशुद्धियों को शुद्ध करने के लिए आया है।

आनन्दजी

सील संतोष सुबुध सुलखण, धीर गंभीर मिलैं जुग च्यारे।
धरम दया निरलोभ निरासिक, निरभै भक्ति अराधन हारे।
करम करै सु करै प्रभु अरपंण ही फल चाह न बुध विचारे।
स्वात की ग्यांन अनंद भनैं, सोई भक्त सदा भगवंतहि प्यारे।

भावार्थ–जो शील, संतोष, सुबुद्धि, सुलक्षण, धीरता, गंभीरता,

धर्मपाल, दया, निर्लोभता, निरासक्ति, निर्भयता और भक्ति इन गुणों से युक्त होकर अपने इष्ट का आराधन करता है, अपने कर्मो को भगवदार्पण और उनके फल को भगवद् इच्छा पर छोड़ देता है और अपने अंत:करण में स्वानुभूत ज्ञान के आनंद में निमग्न रहता है वह भक्त भगवान को बहुत प्यारा है।

नागिनजी

धिन है चेरी सतगुर मेरी मेटण दुष सैंसारे दा।
यो तन षासा मलमल पहरता च्यार टांक चौतारे दा।
अब तो बोझ उठांवण लागा गूदड़ सेर अठारे दा।
पहला जीमता चीज निवाला ताता तुरत तुहारे दा।
अब तो टूका पांवण लागा वासी सांझ सवारे दा।

भावार्थ–हे प्रभु, आपकी शरणागति धन्य है, यह संसार के सभी दु:खों को मिटा देती है। जिस शरीर पर पहले खासा मलमल चौतारा पहनता था, अब वह अठारह सेर का गूदड़ उठा रहा है। पहले जो गर्मागर्म स्वादिष्ट भरपेट भोजन करता था, अब सवेरे वाले शाम और शाम वाले सवेरे को बासी टुकड़े पा रहा है। इस फकीरी में जो आनंद है वह उस अमीरी में कहां था।

पहलुं चढता गढ दल बादल नव लष तुरी नगारे दा।
इतनां तज करि लई फकीरी धिन आकींद विचारे दा।
पीर पकंबर अमर अबलीया सिध पुरष दी रैंणी दा।
नानिगदास जपै वैरागी साचा फकर अषारे दा।

भावार्थ–नवलख घोड़ों से सजी–धजी बड़ी भारी फौज के साथ शत्रु पर आक्रमण करने वाले मैंने इस सबका परित्याग करके फकीरी ले ली है, यह मेरा निर्णय आनंद और विश्वास से भरा है, अब मेरा कोई शत्रु नहीं है। पीर, पैगंबर, देव, अवलिया, सिद्ध पुरुषों की रहनी ऐसी ही होती है। नानिगदासजी कहते हैं की मैं दुनियां के भोगों से वैराग्यवान होकर भगवान को जपता हूँ, यही सच्ची फकीरी है।

बंदा ता साहिब कुं यादि करि, जिणी मेदनी उपाई।
जिण सिरजी हित परीति, दूंनी जिणी धंधै लाई।।
अधर धरयौ असमांण, अचल करि धरती राखी।
सिरज्या पांणी पुंवण, चंद सुरज दोय साखी।।
सिरज्या परबत मेर, वणी अठारै भार।
नवसै नदिया नीर, सिरज्या जिणी सागर पार।।

भावार्थ– जिसने इस पृथ्वी का निर्माण करके इस पर परस्पर प्रेम के साथ रहते हुए अपने स्वधर्म पालन का निर्देश दिया है। जिसने ऊपर आसमान और नीचे धरती को थाम रखा है। जिसने पवन, पानी, सूर्य, चन्द्रमा, सुमेरु पर्वत, अठारह भार वनस्पति, नौ सौ नदियाँ, समुद्र और उससे भी आगे का सृजन किया है। हे प्राणी! तू उस परमात्मा को याद कर।

सा सुंदरी गोपाल, आप ता उठे सवारी।
करि दांतण दांन सिनांन, दे आंगण बुहारी।।
सझ सगला सिणगार, जुगति सूं साम्य धियावै।
बोले मधरी बांणि, बोलती सभा सुहावै।।
कहि न मेटे कंत को, न झंपै आल जंजाल।
आं लखणां जांणियै, सा सुंदरि गोपाल।।

भावार्थ– जो प्रात:काल जल्दी उठकर घर की सफाई, दांतुन, स्नान, शृंगार करके विधिवत भगवान का पूजन करती है। जो मधुर वाणी बोलती हुई दूसरे लोगों मध्य आदर प्राप्त करती है। जो पति के प्रतिकूल नहीं चलती और न ही कभी अमर्यादित भाषा का प्रयोग करती है, जिसमें ये लक्षण परिलक्षित हो वही स्त्री वास्तविक सुन्दरी है।

गोपाल कहै प्रतिपाल सुंणो, मो खूनी के खून विसारियो जी।
मैं आप अलेख की ओट गही, अरि हूंकरि आदे उबारियो जी।
सिरज्या री लाज संवारियो काज, अपणों जण जांणि उधारियो जी।

भेख की लाज निवाजि निरंजण, मारि कै बहोड़ि न मारियो जी।
वांनै की पत करो गति गोम्यंद, क्रतब सार न जाण्यो जी।
मो कपटी के काज सरे हरे, ठीक असी गोपाल म्हाराइयो जी।

भावार्थ– हे भगवन्! मेरे अपराधों को क्षमा करो, मैंने आपकी शरण ली है। मैंने मनुष्य का जन्म प्राप्त करके आत्मकल्याण न करके पाप किए हैं, मैं आत्महत्यारा हूँ। मेरे कर्म तो शत्रु के समान है परन्त बच्चा तो मैं आपका ही हूँ, अपना समझकर मुझे उबारो। मेरे भेष की लाज रखो, मैं पाप करके अपनी पत खो चुका हूँ ऐसे मुझ मरे हुए का आप परित्याग करके दोबारा मत मारो। हे नाथ! मेरे कर्मों की तरफ मत देखो अपने स्वभाव की तरफ देखो। आपका स्वभाव तो शरण पड़े हुए को स्वीकार करके उसके समस्त अपराध भूलकर उसे पवित्र करने का है। मैंने गर्भवास में आपसे भजन करने का वादा किया था परन्तु यहाँ आकर सब भूल गया, मैंने आपसे कपट किया है नाथ, ऐसे कपटी का भी आपको कल्याण करना पड़ेगा। भगवन्! एक बार कह दीजिए की तू मेरा है, मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा।

नारी ठिठकारी, जास मन घंणा मुकेरा।
हांढ़ै घर-घर वारि, करै गांव मां फैरा।।
हांढ़ि हूंढ़ि घरि आय, धणी हरि कदे न ध्यावै।
बड़के बोले बड़कती, बोलती कहीं न सुहावै।।
कांणि न करई कही की, भली छाड़ि साही बुरी।
गोपाल कहै सुणियो नरां, सुवर कहूं क सुंदरी।।

भावार्थ– जो नारी मनमुखी होकर स्वच्छंद विचरण करती हुई पूरे गांव में अकारण घर-घर घूमती है। अपने घर पर न तो देवपूजन करती है और न ही पतिदेव का आदर करती है, वह कर्कश बोली बोलती है जिस कारण किसी को भी प्रिय नहीं लगती। वह किसी लोकलाज की परवाह भी नहीं करती। उसने भलाई छोड़ दी है, उसे बुराई अच्छी लगती हैं। कवि कहता है हे लोगों सुनो, ऐसी स्त्री को सुंदरी कहा जाए या सुवरी।

गयो नाक को नूर, गया बदन बिगसंता।
अहर गया कुमलाय, देह ते नूर पलटया।।

गयो महाबल तेज, गयो जोबन वोह हटया।
थरहरि काया चलण डोल्या, जोर जबरदस्ती लिए जुरा।
कहि गुणीयन गोपाल, जोवन जांतै अह जुरा।।

भावार्थ– आँखों से दिखाई देना बंद हो गया, सुन्दर चमकीले दांत भी गिर गए, चेहरे पर तेज की जगह झुर्रिया पड़ गई। शरीर रूपी पौधा कुम्हला गया है। जवानी में जो शरीर बलवान था वो बुढ़ापे में चलते समय कांपने लगता है। न चाहते हुए भी जबरदस्ती बुढ़ापे ने अधिकार कर लिया है।

चींतामण दे कोडी लीजै, पांहण बदल पारस दीजै।
कांमधेनु तज अज्या बसावे, अमृत छाड़िक विषै सुख चावै।।
कलप वृक्ष सांमल सेवा, सुवा ज्यूं पछतावै देवा।
हूँ जूं जान बालक मत असो, तुम सरबग्य देहा किन संसो।।

भावार्थ– चिंतामणि के बदले में कोड़ी और पारस के बदले पत्थर लेना, कामधेनु गाय को निकालकर बकरी को घर पर लाना, अमृत को छोड़कर विष की चाहना करना, जिसके फल को चखकर तोता भी पछताता है ऐसे सेमल के वृक्ष की सेवा कल्पवृक्ष का त्याग करके करना, मैं ऐसा कर सकता हूँ क्योंकि मेरी बालक बुद्धि है परन्तु भगवान आप सर्वज्ञ हैं आप तो सब जानते हैं, आपकी कृपा से मेरा अहित नहीं हो सकता।

छांहि ओस को पांणी, रेत की भींत अस्यो जुग जांणी।
गुर बिन ग्यान धूम ग्रह जसो, सुपना की सांपत भ्रम जसो।

भावार्थ– यह संसार बादल की छाया, ओस के पानी, रेत की दीवार की तरह अस्थिर है। योग्य गुरु के बिना प्राप्त ज्ञान धूमकेतु की तरह एक बार चमककर तुरंत मिटने वाला और स्वप्न में प्राप्त संपत्ति से धनवान बनने के भ्रम के समान है।

सुत अपनों कौ नहीं, ऐक बिना जगदीश।
जन गोपाल जप लीजिए, सब तज बिसवा बीस।।

भावार्थ– एक भगवान के सिवाय अपना कोई नहीं है। अपना कल्याण चाहने वाले को पूर्णतया अन्य की आशा छोड़कर भगवान का भजन करना चाहिए।

न चहिये दास कै, मुकत तै रहत उदास।
जन गोपाल ता दास कै, हरदे हर को बास।।

भावार्थ– जिन्हें इस संसार से कुछ भी आवश्यकता नहीं है, वे इसके आकर्षण के प्रति उदासीन रहते हैं, वे जीवन-मुक्त है, उनके हृदय में भगवान प्रत्यक्ष प्रकट है।

किसोरजी

नीर सूं झिकोरि षोरि हीर चीर पहरैं कहा, मोतियो जराव रे।
कामंणी कुरंगन की भांवनी के मुंह देषि कहा भूलो वावरे।
धुंवे के से धोल हर ढ्हत न लावैं वार ओस क्र सा मोती ऐसी तेरी आव रे।

भावार्थ–पानी से भी महीन हीरे-मोती जड़े हुए मूल्यवान वस्त्र पहनकर तथा मृगनयनी पत्नी का मुख देखकर तुम संसार में इतने रम गए की भगवान को ही भूल गए, पर सावधान यह सारा वैभव धुंध के बादल जैसा क्षणभंगुर है, जिसके बिखरते देर नहीं लगती, तेरी आयु ओस के बिंदु जैसी है, जो दूर से चमकते मोती जैसी लगती है परंतु वास्तव होती नकली और नश्वर है।

सांम्य कूं नवाऊं सीस, विसंन विसोवा वीस।
तेतीसां के तारबे कूं, आयो सुर राय रे।
षळक की आळ जाळ छोडिया सभै जंजाल,
आळ तजि गुर भजि धंणी पूरो ध्याव रे।
कहत किसोर और जरब न कीजै जोर,
जिनि गुंन ऊबरे, सोई गुंन गाव रे।

भावार्थ–मैं भगवान को वंदन करता हूँ, ये पूर्ण विष्णु है। तेतीस करोड़ को तारने के लिए ही देवताओं का प्रतिपाल आया है। संसार के सभी संशय, भ्रम, विषय विकारों का त्याग करके गुरु जाम्भोजी को भजो, ये सर्वशक्तिमान स्वामी हैं। किसोरजी कहते हैं की किसी को दुःख मत दो। भगवान का गुणगान करने से कल्याण हो जाता है इसलिये उनकी महिमा का गान करो।

कालूजी

इण परि बोलै राजा भरथरी, हरि का नांव पियारा रे।
नं हूं काहु का बंधवा, नं को वीर हंमारा रे।
जळणी जळंम न वीसरै, अछ धार चुंघाई रे।
भीड़ पड़ै जदि बाहड़ै, जामंणि जाया भाई रे।

भावार्थ–राजा भर्तृहरि कहते हैं की हमने जोग धारण कर लिया है और भगवान के नाम से प्रेम हो गया है, अब हमारा भाई बांधवों से कोई संबंध नहीं है परंतु जिस मां ने अपने स्तनों का दूध पिलाया है और संकट पड़ने पर जो सहोदर भ्राता काम आता है इन दोनों को भूलाना बहुत मुश्किल है।

केसोदासजी गोदारा

ज्योति स्वरूपी जगत में, सर्वमय रह्यो समाय।
अटल इडक एक ज्योति है, ना कोई आवै जाय।।

भावार्थ– परमात्मा ज्योति स्वरूप में सभी जीवों में विद्यमान है। वह शाश्वत है, उसकी उत्पत्ति और विनाश नहीं होता।

आशा तृष्णा पापणी, ऐ तजिये कारण जोय।
ओगणगारो आदमी, गुण कू लखे न कोय।।

भावार्थ– प्राप्त से सुख की आशा तथा अप्राप्त की तृष्णा ही दु:ख का मूल है, विवेक बुद्धि से इनका परित्याग करना चाहिए। दुष्ट मनुष्य में गुण ग्रहण करने की प्रवृत्ति नहीं होती।

इमृत वाणी बोलिये, दोष न लागे कोय।
काम क्रोध को मेल है, ज्ञान नीर से धोय।।

भावार्थ– सुसंस्कारित वाणी का प्रयोग करने से वाणी के दोष से बचा जा सकता है। काम–क्रोधादि विकार अन्त:करण के मेल है, ज्ञान रूपी जल द्वारा धोने से अन्त:करण निर्मल हो जाता है।

अवसर ढील न कीजिए, भले न लाभे वार।

भावार्थ– शुभ कर्म करने के लिए समय का इंतजार नहीं करना चाहिए, शायद फिर ऐसा अवसर प्राप्त ही ना हो।

रहो एकांयत अंतर खोजो, भरम चुकाओ भाइये।

भावार्थ– एकान्त में स्थित होकर (स्व) की खोज करनी चाहिए। स्वानुभूति से समस्त संशयों का निवारण हो जाता है।

बुध हीणा बामण बाणियां, पति बारो परधान।
सिरधन आवै सिर साटे, सिर साटे सनमान।।

भावार्थ– मुर्ख ब्राह्मण की जीविका, बिना विचारे किया गया व्यापार और निरकुंश शासक का शासन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। विजय और विभूति उसी पुरुष का वरण करती है जो अपने सिर को हथेली पर रख लेता है।

पाप न करि रे प्राणियां, देखि अंधियारी रात।
सूर सवारी उगिसी, पत पड़िसी प्रभात।।

भावार्थ– मनुष्य अपने पापकर्मों को छिपाने का भरसक प्रयास करता है परन्तु वे प्रकट हो ही जाते हैं और संसार में अपयश का कारण बनते हैं।

दिन थके पंथ देख ले, आय मिले अंधियार।
कहि केसो काया थकी, करि कोई उपकार।।

भावार्थ– जैसे सावधान पथिक दिन के उजाले में अंधेरा होने से पहले–पहले अपना रास्ता तय कर लेता है, वैसे ही मनुष्य को इस शरीर में बल रहते–रहते परोपकार कर लेना चाहिए।

परहरियै सो संग, साध की संगति नांहि।
परहिरयै सो मीत, गुझी राखै मन मांही।।

भावार्थ– दुर्जन की संगति ओर मन में भेद रखने वाले मित्र का परित्याग कर देना चाहिए।

पाणी बिनि पियास मिटै को कैसो, धान बिना कैसे धपना।
उरि अंतरि भीतरि आंच जरै, भगवंत बिना भीतरि तपना।
हरजी हरजी हरि वेर हजार, कहौ एक बार केसवां अपना।।

भावार्थ– जैसे पानी के बिना प्यास और अन्न के बिना भूख नहीं मिटती वैसे ही भगवद् विरह की जो आगे अन्दर लगती है तो वह भगवान के मिले बिना शान्त नहीं होती। हजार बार भगवान का नाम लेने से भगवान को अपना मानकर लिया गया उनका एक नाम श्रेष्ठ है। भगवान से अपनापन सर्वोत्तम भक्ति है। मैं भगवान का हूँ और भगवान मेरे हैं।

सुणीयो संत सुजाण, जुगति आ जीव की।
पापी नै प्रतीत, न आवै पीव की।।

भावार्थ– पापी मनुष्य की पहचान है की उसे भगवान की याद ही नहीं आती।

भुवंग पताल्यौ नीसरै, सांभळि राग अलाप।
घरि घरि हंढायो गोड़ियौ, पड़यौ पिटारै साप।।
कंवळ कली अर केतकी, वास सुगंधौ सीर।
भूल भंवर रस वासना, अळियळ तजै सरीर।।
तन मन सूंपै तेज करि, देखे रंग सुरंग।
नेह नजरि के कारणै, पावक पड़ै पतंग।।

भावार्थ– शब्द से आकर्षित होकर सांप बिल से बाहर निकलता है सपेरे की पिटारी में कैद हो जाता है, रस के लोभ में भंवरा कमल की पंखुड़ियों में बंद होकर अपनी जान गँवा बैठता है, रूप के आकर्षण में पतंगा अग्नि में जलकर भस्म हो जाता है। इसी प्रकार इन्द्रियों के वशीभूत हुए जीव को पता ही नहीं चलता की कब इन विषयों ने उसे पतन की ओर धकेल दिया।

माया काजि दुनि परचावै, आप परचौ नाहीं।
औरां नै बैकुंठ बतावै, आप अगति कूं जाही।।
हीरद अवर जाय करि, मुखे सुणाव और।
साध नहीं संसार मा, चैकस कीयै चोर।।

भावार्थ– दूसरों को उपदेश देने वाला उस ज्ञान को अपने जीवन में नहीं उतारकर केवल पैसों के लिए यह नाटक करता है वह नरक में जाता है। जिसके हृदय में तो कपट छिपा है परन्तु मुख से ज्ञान की बातें कर रहा है, सावधान रहियो पक्का चोर है वह।

कहा भयौ जे टोडर पहरयो, कहा हुवौ कुंडल छमकायै।
कहा भयौ झूंपरि मा बैठयौ, कहा भयौ बड़ महल चिनायै।
कहा भयौ मिसटान क भोजन, कहा भयौ वन के फल पायै।
कहा भयौ एकल दिन काटया, कहा हुवौ परवार बढायै।
सोचि विचारि कहै जन केसो, छूटै नांहि बिनां हरि ध्यायै।।

भावार्थ– कीमती गहने, आलिशान महल, मिष्ठान का भोजन और बहुत बड़ा परिवार छोड़कर एकान्त में झोंपड़ी में रहकर वनफल खाते हुए जीवन बिताने मात्र से ही परमात्मा नहीं मिलता, उसे प्राप्त करने के लिए बाहरी देश, वेश, काल, परिस्थिति महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि अन्दर से उससे जुड़ना पड़ता है।

परमेश्वर माता पिता, परमेश्वर परिवार।
करता जी नै छाड़ि कै, लुकूं कहो कीण लार।।

भावार्थ– भगवान ही मेरे माता, पिता और परिवार है। संसार के दु:खों तथा आवागमन का निवारण करने वाला भगवान के सिवाय दूसरा कोई नहीं हैं।

ओट जीसी कायर की रह, सबल सेय सुवो फल लह।
रीझ नांह करकसा नारी, पाथर नाव पोहंचिया पारि।

भावार्थ– कायर की शरण लेना व्यर्थ है क्योंकि वह आपकी रक्षा नहीं कर सकता। सेमल के सुंदर फल को चौंच मारने पर तोते को निराश ही होना पड़ता है क्योंकि उसके अंदर से रूई निकलती है। कठोर वचन बोलने वाली स्त्री को कितना ही रिझा लो वह मधुर नहीं बोलेगी। पत्थर की नाव पर बैठकर नदी पार नहीं की जा सकती।

घरि वाछो रन्य रह उदास, हुरकै हीय गउ मुखि घास।
असी कर प्रभु सुं प्रीति, हरि सुं मीले जगत सुं जीति।।

भावार्थ– जंगल में घास चरते समय गाय बार-बार आवाज करके (हुरकते हुए) घर पर छोड़े गए बछड़े को याद करती है। उसी प्रकार संसार में अपने कर्तव्यों का निर्वहन तो करें पर ध्यान भगवान में ही रहे।

चोर साध एक करि जांणां, ल्हसण चंदण कस्तूरी।
कुड़ी बात कह एक झूठी, पंच कहै सो पूरी।।

भावार्थ– जहां बहुमत ही सर्वोपरि हाता है चाहे वह अयोग्य ही क्यों न हो, जहां आदमी तोले नहीं जाते, गिने जाते हैं। चन्दन और कस्तूरी जैसे मूल्यावान सुगन्धित पदार्थ और दुर्गन्ध देने वाला लहसुन जहां एक ही भाव बिकते हैं, एक आदमी की सच्ची बात भी झूठी और पांच आदमियों की झूठी बात भी सच्ची मान ली जाती है। उन लोगों में आदमी की परख करने वाली क्षमता खत्म हो जाती हैं वे चोर को साधु तथा साधु को चोर मान बैठते हैं।

साध कहै कांनै सुंणौ, अन्तर की अरदास।
महे मंडल्य मारै कंवण, परमेसर मो पास।।

भावार्थ– सच्चा साधक जब अनन्य भाव से आर्त होकर प्रार्थना करता है तो परमात्मा उसकी पुकार को सुनकर उसे अपना संरक्षण प्रदान करता है। जगत में कोई उसे कष्ट देने का साहस नहीं कर सकता क्योंकि उसके पास परमात्मा है।

पारब्रह्म से सुं हुई पिछाण्य, निरभै होय भेंट निरवाण।
पाठ पढ़ूं परसण होय पीव, आवागवण न आवै जीव।

भावार्थ– साधक को जब परमतत्त्व की पहचान हो जाती है तो वह मुक्ति प्राप्ति का अधिकारी हो जाता है। उसे परमात्मा के अलावा किसी दूसरे तत्त्व को जानने की इच्छा नहीं रहती, उसका प्रत्येक कर्म अत्यंत पवित्र होता जिससे परमात्मा प्रसन्न होकर कृपा करते हैं और जीव का आवागमन मिट जाता है।

लाय बुझावण नै मन हुवो, तदे घर जल खैणावै कुवो।
उत में लोग हंसै जग जोय, घर जलता कुवो कदि होय।।

भावार्थ– समय बीतने पर किया गया कार्य उसी प्रकार व्यर्थ है जैसे कोई घर में लगी आग बुझाने के लिए कुआं खोदने का उपक्रम करे, यह स्वयं की हानि ओर जगत में उपहास का कारण बनता है।

पहलाद कह सुणियो सखा, दिल मां तजणौ दोय।
हीरणाकस नै हरि कह, हरि ता वेमुख होय।।

भावार्थ– भगवद्प्राप्ति और जगतप्राप्ति ये दो रास्ते हैं, इन पर एक साथ नहीं चला जा सकता, एक की प्राप्ति के लिए दूसरे से विमुख होना पड़ेगा। प्रहलादजी दुविधा वृत्ति त्यागने को कह रहे हैं। कल्याण के इच्छुक को जगत में रहते हुए जगत का परित्याग असम्भव लगे तो कर्तव्य निवर्हन के लिए असंगभाव से जगत कार्य तो करे पर हृदय में केवल भगवद्प्राप्ति का उद्देश्य ही रखें।

निवणी खिंवणी बीनती, सबसूं आदर भाव।
कह केसो सोई बड़ा, जां में घणा समाव।।

भावार्थ– नम्र, क्षमावान और विनयशील जो दूसरों को आदर की दृष्टि से देखता है। वास्तव में बड़ा तो वही है जो अत्यन्त सहनशील है।

कउवो चुगै कपूर, हंस हाल्यो दिन कटै।
क्या मन की मरजाद, बात बेहमाता थटै।।
स्वांनि चढ़ै सुखपाल, गऊसुत गुणि उठावै।
करि केहरि कूं कैदि, पिंडत पर भोमि हंढ़ावै।।

भावार्थ– कौवे को पवित्र-पौष्टिक खाना मिलता है, हंस बड़े अभाव में दिन काटता है। कुत्ता सुखदायक सवारी पर चढ़कर चलता है, गोमाता के कोख से जन्मा भारी बोझा उठाता है। शेर कैदी बन जाता है, विद्वान ब्राह्मण रोजी-रोटी कमाने के लिए परदेश में भटकता है। इसमें किसी का दोष नहीं है यह जीव के कर्मों का विधान है।

देह थकी कुछ लेह भया रे, देह मिटी तूं भी मरि है।
देह की खेह भई क भई, परि क परि पल मां परि है।।

भावार्थ– जब तक शरीर है तब तक इस जीवन में कुछ सुकृत कर लेना चाहिए। कब देह और प्राण का वियोग जो जाए और कब इस देही की मिट्टी बन जाए कुछ पता नहीं चलेगा।

विसन भगति रो भंति, उरि अवगण आंणै नहीं।
कुवचन ही कहियंत, सुवचन बोलै साम्यजी।।

भावार्थ– भगवदभक्त के हृदय में भूल से भी अवगुणों का आगमन नहीं होता। कोई उसे अपशब्द कहे तो वह सामने से सुवचन ही बोलता है।

रंग मां मांडै राड़ि, कुबधि सदा काया बसै।
अंतरि सदा उजाड़, सरम नहीं जां साम्यजी।।

भावार्थ– किसी अच्छे कार्य में विघ्न-बाधा उपस्थित करना जिनका स्वभाव है। ऐसे लोगों का हृदय निरस होता है अन्तर में सदा कुबुद्धि ही उपजति है। ऐसे लोगों को अपने कृत्यों पर ग्लानि भी नहीं होती।

जिण सार जामण मरण, जग जीवण जग नाथ।
कंवर कहै मारै कंवण, हरि आडा दे हाथ।
बह नामी बल दखियो, बलती टल बलाय।
छाड़ि भरम भजिया विसन, आप लिया उर लाय।

भावार्थ– जीवों का जन्म, मरण और ससांर का भरण-पोषण जिसके हाथ में है वह परमात्मा जिसकी रक्षा करे उसे कौन मार सकता है? जो दृढ़ विश्वास के साथ भगवान को पुकारते हैं उन्हें भगवान भीषण संकटों से उबार कर अपने हृदय से चिपका लेते हैं।

जळ थळ काठ पखांण मां, अणगत्य जीव अनंत।
सास्य फुरै तै सार वा, चुगै दीय करि चिंत।

भवार्थ– जल, थल, लकड़ी, पत्थर में जीवों का निवास है, जिनकी गिनत सम्भव नहीं है। भगवान क्षणभर में सभी की सार-संभाल कर लेते हैं सभी जीवों की उदरपूर्ति की भी उन्हें चिंता रहती है।

ओ निज तीरथ तालवो, जोति सही जित श्याम की।
देव बराबर कोई नहीं, महिमा घणी मुकाम की।
होम यज्ञ जप जहां किजै, ध्याइये पूरो धणी।
जिसो ध्यावै तिसो पावै, तालवो तीर्थ सही।

जाणिये जित श्याम सतगुरु, पात हरिजन पेखना।
इण्डो तो मुकुट मुकाम सोहै, देव दरगै देखणा।

भावार्थ– इस मुक्तिधाम मुकाम तालवा तीर्थ में भगवान ज्योति स्वरूप विरोजित है। श्री गुरु जाम्भोजी के समान दूसरा कोई नहीं है, उनके विराजने के कारण ही मुकाम की अपार महिमा है। यहां हवन-यज्ञ, जप करते हुए उन सर्वशक्तिमान भगवान का स्मरण करना चाहिए। जैसा भाव लेकर कोई इस तालवा तीर्थ में आएगा वैसा ही फल उसे प्राप्त होगा। मुकाम का मन्दिर साक्षात् बैकुंठ के समान है और यहां भगवान प्रत्यक्ष प्रकट है, परन्तु ऐसा अनुभव करने का पात्र कोई विरला भक्त ही होता है।

सिरजनहारो साध कै, सदा रह हरि संग।
तदि तुठो पहलाद नै, नेह करे नरसिंघ।।

भावार्थ– इस सृष्टि के रचियता भगवान सदा भक्तों के साथ रहते हैं। वे प्रहलादजी पर कृपा करने के लिए नरसिंह के रूप में अवतार लेकर उन्हें प्रेम पूर्वक हृदय से लगाते हैं।

हक ऊपर हिरदा आंणी, विष वसत पराई जांणी।

भावार्थ– अपने हक की वस्तु को हृदय में स्वीकार करना चाहिए, नाहक की पराई वस्तु को विष के समान त्याग देना चाहिए।

नहु आहु नहु जाहि, सदा रहु साधा घट मांहि।
सनंक सनंदण सनंत कुवार, संकर सेस न पावै पार।

भावार्थ– सनकादि ऋषि, शंकर और शेषनाग जिसका पार नहीं पा सकते वह भगवान सुक्ष्म रूप से सर्वत्र व्याप्त है और सज्जनों के हृदय में प्रत्यक्ष प्रकट है।

पातेशाह मुला सुं कही, पढ़ गुण्या थे खाली रही।
हींदु वेद करै बोह आस, करणी पखो रह नीरास।।

भावार्थ– धार्मिक पुस्तकें पढ़ने मात्र से कोई पार नहीं उतर सकता। कल्याण की प्राप्ति के लिए उनके अनुसार जीवन बनाना पड़ता है।

पतीसाह कह मुलां सुणै, गल काटो कुण आस।
नीज मारग गण्यौ नीही, नहच रहयो नीरास।

भावार्थ– कल्याण प्राप्ति के लिए तुम दूसरे जीवों की हत्या करते हो, यह सन्मार्ग नहीं है, निश्चय ही अंत में तुम्हें निराश होना पड़ेगा।

अलख पुरेष जां ओलख्यो, से अपरंपर अंस।
उजल झूल सुहावणां, बौह हरजी बै हंस।।

भावार्थ– परमात्मा अंशी है और हम उस परमात्मा के अंश हैं जिन्हें यह अनुभव सिद्ध हो जाता है, उनका जीवन आनंद से भर जाता है। वे परमात्मा रूपी मानसरोवर के हंस बनकर मोती रूपी सारतत्व को चुग लेते हैं।

प्रथम देव बताइ दया, मदसुदन मीलीयो करि मया।
निरहारी कहीय निरमलौ, दया धरम विवरो सांभलौ।।

भावार्थ– गुरु जाम्भोजी ने दया को सबसे अधिक महत्व दिया है, वे कहते हैं कि दया करने वाले पर भगवान कृपा करते हैं। वास्तव में दया ही धर्म है।

पसु पैखेरु मानवी, जै जै उत्तम जीव।
वितर विसनोई किया, तिण्य सांम्य नैवाउ सीव।

भावार्थ– मैं उस परमात्मा को नमन करता हूँ जिन्होंने समराथल पर विराजमान होकर केवल मनुष्य ही नहीं अपितु उत्तम भाव वाले पशु-पक्षियों को भी विश्नोई यानि मुक्ति का अधिकारी बना दिया।

नोट– शायद तभी बिश्नोई लोग पशु-पक्षियों को भी गुरुभाई समझकर उनकी रक्षा में तत्पर रहते हैं।

कल्यजुग वरज्या केवली, कावल कुड़ कुबाण्य।
जिभ्या बोली जाण्यक, सावल साच सुबाण्य।।

भावार्थ– गुरु जाम्भोजी ने अशिष्ट, झूठी और कटु वाणी का परित्याग करके शिष्ट, सत्य और मधुर वाणी बोलने का ही उपदेश दिया है।

चित पापां सूं परहर, मन मां राखी मील।
अंग्य अछोप न आभड़ो, नीरखि परहरी नील।
नील पहरि धन खरच भाय, दीन्हौ दान इक्यारथ जाय।
भैग भजै न कीय मां पड़, लीयो नांव नै लेख चड़।

भावार्थ– पाप मुक्त निर्मल चित्त में धर्म की मर्यादा स्थापित होती है। अंग में अत्यंत अस्पृश्य नील के स्पृश्य होने से अशौच लगता है यानि अपवित्रता हो जाती है, इसलिए नील को देखकर उसका दूर से ही परित्याग कर देना चाहिए। नील पहनकर किया गया दान, साधन, भजन और नामजप व्यर्थ चला जाता है।

निंद्या कर नीखर नर नीच, अंत्र सदा कपट को कीच।
और नींदै आप सराह, किसन चीलत विन्य सुरग्य नै जाय।

भावार्थ– निंदा नीच वृत्ति है, निंदक का चित्त सदा कपट के कीचड़ से भरा रहता है। आत्ममुग्ध परनिंदक का पार उतरना भगवान की विशेष कृपा के बिना संभव नहीं है।

हुव सिनानी काया कुवंग, कांम कुबध्य करि कुसंग।
नर नारी राह बाहरि रवै, भूत हुवै भूमंडल भुवै।।

भावार्थ– केवल सिनानी नाम धारण करने से कुछ नहीं होगा। अगर कुसंग से कुबुद्धि हो गई और कुमार्ग पकड़ लिया तो यह जीवन तो भूतों जैसा हो ही जाएगा और मरने के बाद भी भूत बनकर भूमंडल में भ्रमण करना पड़ेगा।

पर पड़दौ पाड़ै मत, कैहीयन घाती घात।
चौरी ता दोरै गया, वड तीरथ की बात।।

भावार्थ– किसी का भेद उजागर करके उसे संकट में डालना, विश्वासघात करना और चोरी करना यो तीन कर्म नर्को में ले जाने वाले हैं।

आठ पहर चितवता फीरै, खवारा आय खवारा करै।
पर परचावै अपरचा आप, सुरग्य नै जांही सहे संताप।।

भावार्थ– यह कैसा आश्चर्य है कि स्वयं तत्त्व की प्राप्ति न करने

वाला तत्त्व का उपदेश करता है। आध्यात्मिक चिंतन छोड़कर रात-दिन दुनियाँ के आकर्षण में मग्न रहने वाला स्वयं और अपने संपर्क में आने वालों की दुर्दशा का कारण बनता है। ऐसा व्यक्ति मुक्ति का अधिकारी नहीं हो सकता, उसे संताप सहन करना पड़ेगा।

नैवण्य करे साधां नहीं नैव, वांनु देख्व्य बुरी चितेव।
गुरु नींदै वींदै उरी आंन, दोरै दुख सहिस्यै हरांन।।

भावार्थ- जो साधु पुरुषों का आदर नहीं करते और उन्हें देखकर अपने मन में बुरी भावना उत्पन्न करते हैं, जो अपने गुरु की निंदा और आण की वंदना करते हैं। मृत्योपरांत वे हैरान होंगे जब उन्हें नरकों में डाला जाएगा।

नीद बड़ाइ आलस अग्य, करै कुलखंण तांही कौ संग।
थीर नांहि मन्य राता थुल्य, से नर मुक्ति नै जंही मुल्य।।

भावार्थ- दूसरों की निंदा, अपनी बड़ाई, परमार्थ में आलस्य, अज्ञानता, बुरे का संग, चंचल मन, नाशवान में रुचि ये लक्षण जिसमें है वह मुक्ति का अधिकारी नहीं है।

सुख करता जुग जाहि अनंत, तोउ सुखां न आव अंत।
से सुख तो सेइ जन लह, जीवत ही म्रतग होय रह।।

भावार्थ- इस संसार में अनंत सुख है परन्तु उन सुखों को भोगने का तरीका अद्‌भुत है, सुख चाहने वाले को भी दुःख मिलता है परन्तु जिसे इस संसार में कुछ नहीं चाहिए, जिसने अपनी इच्छाएँ समाप्त कर ली हैं, जो जीवन-मुक्त है उसे वास्तविक सुख मिलता है।

न करत ताति पराइ तंणौ, सुतर मीतरे सारीखौ गीणौ।
इण्य करणी जे हरे जण हुव, सुख भुगत सुरगां मां रह।।

भावार्थ- दूसरों के भरोसे न रहकर जो स्वयं पुरुषार्थ करता है। जिसे शत्रु भी मित्रवत लगता है यानि जो अजातशत्रु है, ऐसी करनी वाला हरिजन ही स्वर्गप्राप्ति का अधिकारी है।

सतगुरु सतपंथ चलावियौ, उदबुध धर्मैं अनूप।
पोह दाखवि तिराणवै, हुवौ आप अलोप।।

भावार्थ- सद्‌गुरु देव भगवान जाम्भोजी ने जो सतपंथ चलाया है वह अद्‌भुत और अनुपम है। संवत् 1593 में यह मुक्तिमार्ग दिखाकर भगवान अंतर्ध्यान हो गए।

खासा पहरि खुसी हुवौ, कीनक घतायो कान्य।
गहला ग्रब न कीजिये, मरणौ निश्चय निदान्य।।

भावार्थ- तन पर मलमल का कपड़ा औ कानों में सोने के गहने पहनकर मुर्ख को अभिमान हो जाता है, जबकि यह शरीर तो नश्वर है, विशेष जतन से सजाकर रखने पर भी यह बेचगा नहीं, एक दिन मृत्यु को प्राप्त हो ही जाएगा।

कवल कली अर केतकी, वास सुगंधो सीर।
भूल भंवर रस वासना, अलियल तजै सरीर।।

भावार्थ- कहते हैं की भंवरा केतकी के फूल का स्पर्श नहीं करता परन्तु वही भंवरा रस वासना के वशीभूत होकर कमल के फूल में बंद होकर मारा जाता है। इसी प्रकार अधकचरा वैराग साधक को एक दिन विनष्ट कर देता है।

घर छाड़ै पर घर सुं प्रीत, रुलियारां मांडी आ रीत।
धरम तैणी न जाण रेख, ल्य वराग विगोव भेख।।

भावार्थ- भगवद्‌प्राप्ति के लिए अपना एक घर छोड़ते हैं परन्तु अज्ञानतावश बाद में अनेक घरों से मोह कर लेते हैं, यह भेख की शोभा नहीं बल्कि स्वेच्छाचार (रुळीयारपना) है। इन्होंने धर्म के तत्त्व को नहीं जाना है और वैराग्य के लिए गये भेख की मर्यादा को नष्ट किया है।

केसो भणे करतार सूं, प्रभु राखौ पाए।
नित सरणाई ऊबरै, सबला की आए।।

भावार्थ- केसोजी भगवान से प्रार्थना करते हैं की मुझे अपनी शरण में रखो। सर्वसमर्थ की शरण में आने पर शरणागत का उद्धार निश्चित है।

सांग पहरि तन सोहरौ कर, छाड़य धर्म धंधौ पर हर।
पर धन मांग पौखै पिंड, पंथ मांही मांडयौ पाखंड।।

भावार्थ– बहरूपिए की तरह भेख का स्वांग रचकर शरीर को सुख देने वाली सुविधाएँ जुटा ली, धर्म के तत्त्व को छोड़कर धर्म को परधन प्राप्ति का धंधा बना लिया। परधन प्राप्त करते हैं और इसे अपनी तन की पुष्टि में ही लगा देते हैं। ऐसे लोगों ने उत्तम पंथ को पाखंड का अखाड़ा बना दिया है।

मरो न जरो न तेजरो, नित नवला वेस।
करि करणी केसो कहै, जाविजै उणि देस।।

भावार्थ– जहाँ मृत्यु और बुढ़ापे का भय नहीं है, जहाँ दिव्य देह नित्य नवीन रहती है, इस जीवन में ऐसे उत्तम कर्म करें की मृत्योपरांत ऐसे अलौकिक धाम में निवास मिले।

नीवी विणी चाल्यौ नगरि, केसौ क्या मोलाय।
हारि हारि अवणंति हुई, रीतो ही उठि जाय।।

भावार्थ– बिना पैसे बाजार जाकर क्या खरीदागे, ऐसे ही इस संसार की नाशवान वस्तुओं की प्राप्ति के लिए अमूल्य श्वासों को खोकर खाली हो गए, अब बिना सत्कर्मों की पूंजी के परमधाम कैसे प्राप्त करोगे?

नुंय नित प्रति ल्यौ, नांव निरंजन को जपो।
हुय खरतर तजि खोट, पालक सूं खपो।।

भावार्थ– भगवान के प्रति नित्य नवीन प्रेम से भावित होकर नामजप करें। दोष रहित शुद्ध अन्तःकरण वाला ही भगवद्प्राप्ति का अधिकारी है।

क्रीया क्रतब हीण, बोहत नर झूर रे।
हरि हां कैसो पिसण घंणा, पंथ मांहि क पेंडो दूर रे।।

भावार्थ– शास्त्रविहित नित्य नैमित्तिक कर्त्तव्य कर्मों के परित्याग करने वाले को अंत में बहुत पछताना पड़ेगा। भगवद्प्राप्ति की मंजिल अति दूर है और मार्ग में रास्ता रोकने वाले विषय-विकारादि शत्रु बहुत हैं।

सुद्यौ थके संभालि, निरंजन नांव रे।
निस पंहुचौ ली आय, न सूझै गांव रे।।

भावार्थ– जब तक शरीर में चेतनता है भगवान का भजन कर ले,

बाद में तूं वैसे ही असहाय हो जाएगा जैसे अंधेरा पड़ने पर राहगीर गांव का मार्ग खोजने में असमर्थ हो जाता है।

लाय बुझावण नै मन हुवौ, तदे घर जल खैणाव कुवो।
उत्तमै लोग हंसै जग्य जोय, घर जलता कुवो कदि होय।।

भावार्थ– घर में लगी आग को बुझाने के लिए कोई कुआं खोदना शुरु करें तो यह देखकर उसकी बेवकूफी पर बुद्धिमान लोग हंसते हैं। सही समय पर आवश्यक कार्य नहीं करने वालों की यही गति होती है।

असरां यैण अति उफाण्यां, काल्हा करे कलाप।
पहलाद मार कंवण, जां रखवालो आप।
अंधीयारों असरां मनै, रूल्या करै कुल रीति।
त्रीकम सुं ताली लगी, पहलाद की प्रीति।

भावार्थ– असुरों के मन में अति रोष है, क्रोधवश उन्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा है और वे कलाप करते हुए अपने कुल के अनुसार उल्टे आचरण कर रहे हैं, परन्तु जिसने तीन कदमों से त्रिलोक नापने वाले से हाथ मिलाया हो, उससे प्रेम किया हो, जिसकी रखवाली भगवान स्वयं कर रहे हों, उस प्रहलाद को भला कौन मार सकता है?

परख पड़ै खोटै अर खरै, धीज दीया मन धीरी धरै।

भावार्थ– आपत्तिकाल में ही असली और नकली की परीक्षा होती है। विपत्ति में जो धैर्य प्रदान करता है वही सच्चा साथी है। अपनों द्वारा दिया जाने वाला धीरज दुःख से प्राप्त घाव की सबसे बड़ी मलहम है।

जुग दवापुर वरत्यौ जै जैकार, आयो कलिजुग धार अंधार।
विचि करै मन मांहे वाद, धरम तणी मिटी सी मरजाद।।

भावार्थ– अपनी जय-जयकार करवाता हुआ द्वापर युग बीत गया। अब अंधेरगर्दी को लकर कलियुग आ गया है। व्यर्थ का क्रोध और वाद-विवाद करने वाले बहुतायत में हैं। धर्म की सब मर्यादाएँ मिट गई हैं।

हठ कीयो हारया तके, नरां न जीती नारि।
नर अबला कुही कहै, ते संबली संसारि।।

भावार्थ– अगर नारी दृढ़ संकल्प कर ले तो उसे हराना असंभव है। नर उसे अबला क्यों कहते हो वह तो सांर में सबसे सबल है।

बहु मते अपणौ पग धरै, जासु तणौ न कहीयो करै।
आप सवारथ करै अकाज, पुत पिता की लोपै लाज।।

भावार्थ– कलियुग में सभी अपने मतोमति चलते हैं, दूसरे की समझावणी कोई नहीं मानता। अपने स्वार्थ के लिए कैसा भी बुरा कर्म हो निसंकोच कर देते हैं। पुत्र अपने पिता की इज्जत नहीं करता।

कलि जुगी सत घटि सी संसारी, असती लोक हुवै आचारी।
गुरवट गेणौ न मांनै ग्यान, दुरबल देखि न देही दान।

भावार्थ– कलियुग आने पर संसार में सत्य घट जाता है। आचारवान लोग भी असत्य धारण कर लेते हैं। गुरु के बताए मार्ग और ज्ञान की बात को नहीं मानते। सामर्थ्यवान होकर भी जरूरतमंद की सहायता नहीं करते।

दुनि तणां दिखौ ऐ दाव, नर निरधन को नहीं नियाव।
कावल बात हुवै कलि मांय, सौक लीयै साचौ ओह राय।।

भावार्थ– लोग अपने स्वार्थ को ध्यान में रखकर मित्र बनाते हैं। गरीब आदमी को न्याय प्राप्त में बहुत जद्दोजहद करनी पड़ती है। कोई भी निंदित कर्म कलियुग में संभव है। जनता की धन पर ऐश करने वाले विलासी शासकों को ही उत्तम समझा जाता है।

सील संतोष घटै सुचि साच, विरला वायक मांनै साच।
बोल साचा साधा न सहै, कलियुग कूड़ौ आदर लहै।।

भावार्थ– शील, संतोष, पवित्रता और सत्य कलियुग में घट जाते हैं। कोई विरला ही गुरु प्रदत्त सत्य के मार्ग पर चलता है। अपने आप को साधु कहलवाने वाले भी सत्य वचन को सहन नहीं करते। कलियुग में झूठा आदमी आदर पाता है।

दु:ख काहै दीजै नैही, जीभीया कीजै जाप।
सुरता होयै सै सांभली, अंतैरायैण रौ पाप।।

भावार्थ– किसी भी जीव को हमारी तरफ से दु:ख प्राप्त न हो, ऐसे निर्वैर होकर अहर्निश भगवन्नाम जप करें। भगवान में सुरति लगाने से अंत:करण में पाप की स्फुरणा ही नहीं होती।

परजा करसण निपजै नालि, राजा बाड़ै हुवै रखवाली।
राजा करै प्रजा सौ राड़ि, कलियुग करषण चरिसी बाड़ी।

भावार्थ– प्रजा सम्यक् प्रकार से अपने कर्तव्य कर्मों की खेती करे और राजा एक रखवाले की तरह सब प्रकार से उनकी रक्षा करे, परन्तु कलियुग में ऐसा नहीं होता, यहाँ राजा और प्रजा में सहयोग और सद्भाव न होकर परस्पर संघर्ष ही अधिक होता है। किसान स्वयं ही अपने हाथों से खेती को उजाड़ देता है यानि रक्षक ही भक्षक बन जाता है।

ब्रह्म ग्यांन को कर बमेक, हींदू तुरक दहु का एक।

भावार्थ– ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति का फल है की उसे यह विवेक हो जाता की हिन्दू-मुसलमान आदि विभिन्न मत पंथों में विभिन्न नामों से पुकारा जाने वाला ईश्वर वास्तव में एक ही है।

माता पिता तजै मती हीण, केता जप तप करे सब खीण।

भावार्थ– जो कोई बुद्धिहीन व्यक्ति मां-बाप का त्याग करता है, उसका जप-तप सब व्यर्थ है।

पाखण्ड केता कल्य परवाण, दुजो जलम धराव आंण।

भावार्थ– कलियुग में जितना पाखंड व्याप्त है यह इसका प्रमाण है कि यह निश्चय ही आवागमन के चक्र में ले जाएगा।

अंतर तणां न लहयो अचार, सतगुर तणी न जाणै सार।
लौहा पारस साथे होय, बिन भेटै कंचण किम जोय।।

भावार्थ– जिसका अंत:करण पवित्र नहीं है और जो सद्गुरु के बताए मार्ग पर नहीं चलता वह उसे लोहे के समान है जो पारस के पास पहुँचकर भी उसके स्पर्श से वंचित रह गया।

चाकर ठाकर आगे मरै, तो चाकर का कारज सरै।

भावार्थ– जो सर्वतोभावेन अपने इष्ट के शरणापन्न हो जाता है, उसके सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं।

लेण देण उपजै संसार, विसन जपंता मोखी दवार।

भावार्थ– लेना-देना शेष रहने पर इस संसार में पुन: जनम लेना पड़ता है। विष्णु नाम जापक के सब बंधन कट जाते हैं और वह मुक्ति को प्राप्त करता है।

सुरजनदासजी पूनिया

जुगत विहूणा मुक्ति न होई, करतब न कर काचो।

भावार्थ– युक्तिपूर्वक जीवन जीये बिना मरणोपरांत मुक्ति की आशा करना व्यर्थ है। मुक्ति चाहने वाला निन्दित कर्मों के नजदीक भी नहीं जाता।

साध संगत हरि भगती बिना, संसार सागर है फना।
जगदीश सहाई होय भाई, भीड़ पड़सी जा दिना।।

भावार्थ– भगवद् प्रेमी संतों के संग और भगवन्नाम स्मरण बिना यह जीवन व्यर्थ है। घोर संकट से उबारने वाले केवल एक भगवान ही है।

एक रहीम पुकारिया, एक राम सुणाये।
अंतरजामी एक सही, क्यूँ दोय लखाये।।

भावार्थ– परमात्मा को कोई रहीम तो कोई राम नाम से पुकारता है। वास्तव में तो वह एक ही है फिर अलग-अलग क्यों देखे जाते है?

जंतर ताल स तंत मंत, स रल कंठि गाये।
राग छत्तीसूं अलापिया, सुर सात सुणाये।।
गीत कवत घणा कह्या, कवि पात कहाये।
एक विसन के भगति बिना, सोह बकि गुमाये।।

भवार्थ– तंत्र, मंत्र जंतर का गहन ज्ञाता, सात सुरों और छत्तीस रागों का गायक, सहस्त्रों कविताओं की रचना करने वाला सुविख्यात कवि बन जाना व्यर्थ है अगर ये योग्यताएँ भगवान की भक्ति का करण नहीं बनती।

सुरिजन एक सरीर मा, तन मन का गुणं जोय।
तन मुंडया तै भेख है, मन मुंडया गति होय।।

भावार्थ– सिर का मुंडन करके साधु का स्वरूप तो बनाया जा सकता है परन्तु मुक्ति तो मन को वश में करने पर ही मिलेगी। किसी के तन का भेष देखकर अंधश्रद्धा करने से पूर्व अच्छा है की उसके मनोस्थिति को भी जान लें।

जां कारण्य जुग ढुढ़ीय, सोइ गुरु पाया।
चंरण कंवल छाडुं नहीं, रहिस्यौ लिपटाया।।

भावार्थ– जिस सद्‌गुरुदेव को प्राप्त करने के लिए संसार में ढूंढ रहा था उसे मैंने गुरु भगवान श्री जाम्भोजी के रूप में पा लिया है, अब इन चरणकमलों को छोडूंगा नहीं, इन्हीं से लिपटा रहूंगा।

आया सीव सबल की छांही, जंम की त्रास मेट मेरा सांई।
ओ चित राख्य सबल के चरणां, इबक मारि बोहड़ि नहीं मरणां।।

भावार्थ– सर्वशक्तिमान ईश्वर की शरण में आने के बाद जीव को मृत्यु का भय नहीं रहता। शरणागत का आवागमन मिट जाता है।

हीरणाकस रांवण मध कीचक, उठि गया छिन मांहि।
कंस केस संखा मुरदांणो, धरम विनां कुछय नांहि।
नरघंण मन्य सास बल दीसा, तैन हारय चल्या सभ कांहि।
जां कुछ हुतां नी कुछ होयस्सै, वल्य कुछय होयसी तांहि।

भावार्थ– हिरण्यकश्यप, रावण, मधु, कीचक, कंस, केशी, शंखासुर जैसे महाबलियों को भी इस संसार से जाते हुए एक क्षण लगा। निर्दयतापूर्वक उन्होंने अपार बल, संपदा अर्जित की परन्तु मरते समय हारकर सब यहीं छोड़ गए। धर्म के अलावा अन्त समय में कोई साथ नहीं देता। भगवान ही इस सृष्टि का सृजन, प्रलह और फिर सृजन करते हैं। अपने धन, बल, ऐश्वर्य का अभिमान व्यर्थ है।

भुज्या व्रंभ अगन्य मां, दीन्ही भस्म उडाय।
सुरेजन सतगुरु भेटिया, अब कुंण आव जाय।।

भावार्थ– सतगुरु से प्राप्त ब्रह्मज्ञान की अग्नि में अपने अहं को जलाकर भस्म कर दिया। अब फिर आवागमन के चक्र में नहीं आना पड़ेगा।

सीत संतोष सहज की बांणी, सतगुरु कहयौ स कीजै।
अवगणां रा सुगुंण राखौ, जरणा अजर जरीजै।।

भावार्थ– शील, संतोष, वाणी की सहजता, सतगुरु की आज्ञा पालन, अपना अपकार करने वाले के प्रति भी उदारता, काम-क्रोधादि विकारों का शमन, ये साधक के लक्षण है।

कीजै धरम न कीजै पाप, जो कीजै सो भुगतै आप।
नेक वदी का मारग दोय, जिसा बीज तिसा फल होय।

भावार्थ– मनुष्य को धर्माचरण करते हुए पाप से दूर रहना चाहिए। अच्छे और बुरे कर्मों के दो मोर्ग है, उन पर चलने में जीव स्वतंत्र है परन्तु फल वैसा ही मिलेगा जैसा कर्म किया है।

एक ज सुख निरोगी काया, दूजो सुख खरचंण नै माया।
तीजो सुख वचन बस नारी, चौथो सुख पुत्र हितकारी।
पांचवो सुख राज सूं पासो, छठो सुख सुथाने वासो।
सातवों सुख सुफल जे होई, हरि की भगति करै नर कोई।

भावार्थ– पहला सुख अच्छा स्वास्थ्य, दूसरा सुख में घर में समृद्धि, तीसरा सुख अनुकूल पत्नी, चौथा सुख आज्ञाकारी पुत्र, पांचवां सुख सत्ता में पहूँच, छठा सुख उपजाऊ खेत और सज्जन पड़ौसी, सातवां सुख है इन छत: सांसारिक सुखों की प्राप्ति के बाद मनुष्य भगवान का भजन करे।

म्रघ कीयो तदि भाजि गयो, सिंघ कियो तदि मारण धायो।
राजी की तदि दान दियो, रंक कियो तदि मांगि के पायो।
जोई कियो सो मानि लियो, अब और सोह हरि के मनि भायो।

भावार्थ– हे प्रभु! आपने मुझे हिरण बनाया मैं तो ज्ञान बचाकर भागा, शेर बनाया तो शिकार किया, राजा बनाया तो दान दिया, भिखारी बनाया तो मांगकर गुजारा किया। आपने जो विधान किया वही मैंने स्वीकार किया और आगे भी जो आपको अच्छा लगे वही करना।

जल सांबनि मल उतरै, ऊं छूटै अपराध।
दरसणि परसणि दु:ख मिटै, जग का दीपक साध।
धरती अंबर आदे देव, रवि सिस पांणी पूंण।
मंडप कीवी साध कूं, नहीं त कारण कूंण।

भावार्थ– जैसे साबुन से मेल दूर हो जाता है वैसे ही भगवान के प्यारे भक्तों के दर्शन और स्पर्श से पाप तथा दु:ख मिट जाते है। ऐसे साधु जगत के लिए दीपक है वे अज्ञानान्धकार को मिटाते है। इनके लिए ही भगवान धरती, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, पानी, पवन की सृजना करते हैं, दूसरे लोग तो इन संतों की उदारता से उन प्राप्त वस्तुओं का उपभोग करते हैं।

रे मन सोचि विचारि कहुं, आप अलेख की बात न पाई।
दाता कुं निरधन बणावत, सूम कुं संपति देह सवाई।
घोड़ा कुं खड़ थिरल न देह, खर कूकर कुं पकवान मिठाई।
एक अउत को पूत न देई, एकै कुं दस बीस देवाई।
गोमिंद की गति गोमिंद जांणै, सागर खार इम्रत बरसाई।

भावार्थ– भगवान की इच्छा को कोई नहीं जान सकता। वह दाता को भिखारी बना देता है। जिसने कभी दान नहीं किया ऐसे कंजूस को भरपूर संपत्ति प्रदान कर देता है। घोड़े को घास के लाल पड़ते है परन्तु गधों और कुत्तों को खाने के लिए मिठाई मिलती है। कोई नि:संतान एक औलाद के लिए तरसता है परन्तु किसी के दस-बीस होते हैं। भगवान की लीला देखें कि खारे समुद्र से उठने वाले बादल भी अमृत के समान मीठा जल बरसाते हैं।

पनरा बीस पचीस, कोस दस कुकरम धावै।
पापी फिरै परदेस, धरम टुकड़ो न आवै।
सुगुर सेव न करै, कुगुर दिस कध नुवावै।
चोरी झगड़ो झूठ, गीत जंगल का गावै।
अमी बेल उखणै, सीचौ सबल आक सीणी।
जंगली जीव जांमै मरै, भगति न लाभै भाग विणी।

भावार्थ– पाप करने के लिए कोसों दूर, यहाँ तक परदेस भी चले जाते है परन्तु धर्म का थोड़ा–सा भी अनुसरण नहीं करते। सद्गुरु की सेवा नहीं करते परन्तु पाखंडी के चरणों में शीश नवाते है। चोरी, झगड़ा, झूठ और अश्लील गीत प्रिय लगते है। अमृत बेल को उखाड़ कर आक का पौधा सींचा जाता है। ऐसी कुबुद्धि वाले जीव जन्मते और मरते रहते है। जिन्हें भगवान की भक्ति प्राप्त होती है वे बड़े सौभाग्यशाली है।

कहा सूंब कै मिलै, कहा विणि अवसर मांगे।
कहा नर नारी सूं प्रीति, सील वीणि त्रिया सुहागै।
कहा फागण की बूंद, चुगल सूं किसी भलाई।
किसो चोर सूं संग, साह सूं किसी ठगाई।
भोजंन दांन सुभाव विणि, दिल कपटी अंतरि दिवै।
जप वीणि जमवारो इकरथ, सुरिजंन कवि साचौ चवै।

भावार्थ– कंजूस से मिलना, बेवक्त मांगना, परस्त्री से प्रेम, मर्यादाहीन नारी, फाल्गुन मास की बरसात, चुगलखोर से हित की कामना, चोर का संग, सज्जन व्यक्ति से धोखा, बिना भाव का भोजन व दान, दिल में कपट रखकर किया गया कार्य व्यर्थ है। कवि कहता है की सत्य बात तो यह है कि भगवपन के भजन के बिना यह जीवन ही व्यर्थ है।

एक सहै दुख भूख, एक उपगार सयंपै।
एक चढ़ै सुखपाल, एक सीर भार संमैंपै।
एक स काया सुचंग, एक दीसे दुरंग छी।
एक छुड़ावै बंदि, एक बेचौ जल मछी।
एक मरै एक उधरै, ठाह बतावै ठांव का।
एक गुरु दोय अंतरा, प्रताप जको हरि नांव का।

भावार्थ– एक दु:ख–भूख सहन करता है, एक लोगों के दु:ख दूर करता है। क सवारी पर चढ़कर चलता है, एक बोझा ढ़ोता है। एक का शरीर स्वस्थ है, एक ही देही बदहाल है। एक बंधकों को छुड़ाता है, एक मछली पकड़कर बेचता है। एक जन्मता–मरता है, एक का उद्धार होता हे। अपने कर्मो

के नअुसार आगे की गति होती है। दोनों एक ही गुरु के शिष्य होने के बावजूद भी कल्याण तो उसी का होता है जो भगवान का भजन करता है।

मुलरि जीव असंख तंना, ओ ही घर बाजार।
इंड फुटि ब्रहमंड मिले, तेन का अंत नै पार।।

भावार्थ– इस शरीर रूपी वृक्ष का मूल जीव है और जीव ने इस शरीर के संबंध से संसार में जो विस्तार किया है वे इसके तने हैं। यह जीव कब इस शरीर रूपी आवरण को त्यागकर अनंत में विलीन हो जाए और यह कहाँ से आया और कहाँ चला गया, कोई नहीं जानता।

आभै फुहारां महि कणां, कुणं जांण करतार।
कवणाधार आतमां, आभै जीवड़ौ भार।।

भावार्थ– वर्षा की बूंदे और धरती के कण गिनना जिस प्रकार असंभव है ऐसे ही इन आत्माओं का आधार कौन है और यह ब्रह्मांड किसके बल पर खड़ा है यह रहस्य जानना भी असंभव है। भगवन्! केवल आप ही जानते हैं।

तुझय पटंतर तो कनै, पढ़या नै लाभ पार।
कांठी मुंठी दीठै कैण, ओही कैण कोठार।।

भावार्थ– जीव, जगत ओर जगदीश के भेद को जानने का दावा करने वाला वैसा ही है जैसे किसी के पास देने के लिए एक मुट्ठी अन्न नहीं है और वह अपने को कोठारी कहे।

परम सनेही परम नूर, सीध साधवां संनेह।
अरचा चरिचा रामरस, मिनख जनम गति एह।।

भावार्थ– भगवान और भगवान के प्रेमी संतों से स्नहे करे तथा भगवद् विषयक चर्चाओं का रसास्वादन करें, यही मनुष्य जन्म की सार्थकता है।

रीदा न भूले नांव रस, ओही सुजीवण मंत।
अनंते नाए एक नांव, एकण्य नांव अनंत।।

भावार्थ– परम रसिक की तरह भगवद् नाम रस का पान करें, यह संजीवनी मंत्र है। इस प्रकार भगवान का होकर, भावपूर्वक लिया गया एक ही नाम अनंत नामों का फल देता है।

वेद स मारग सबद सुर, समझाव सीध साध।
पुंन पाव देवा पुरी, अगते पड़ अपराध।।

भावार्थ– वेदोक्त मार्ग, देववाणी और साधु संत सभी समझा रहे हैं की पुण्य करोगे तो स्वर्ग मिलेगा तथा पाप–अपराध करोगे तो दुर्गति में जाना पड़ेगा।

नातो गीण नै नारीयैण, मन सुध हेत न मंद।
करे सुकरत कीतरा हुवा, इंद सरीसा इंद।।

भावार्थ– पुण्य कर्म करने से स्वर्ग मिलता है, इन कर्मों की प्रबलता से कदाचित इंद्रासन भी मिल जाए परन्तु पुण्यकर्म भोग के बाद वहाँ से भी लौटना पड़ता पर भगवान तो केवल प्रेम का संबंध जानते हैं, जो उन्हें शुद्ध अन्त:करण से प्रेमपूर्वक भजता है उसे वे परमधाम प्रदान करके आवागमन से मुक्त कर देते हैं।

भैविया घरि घरि बोहत भव, वाया ठीक विचारि।
आयो सरण आदि गुरु अबकी बार उबारि।।

भावार्थ– अनेकों जन्म से मैं इस भवसागर में भटक रहा हूँ। अबकी बार मैं आदि गुरु विष्णु अवतार श्री जाम्भोजी की शरण में आया हूँ। उनका वचन मानने से मेरा उद्धार हो जाएगा।

करुणा कर कीरति करूं, वीसन वीसोवा वीह।
पढ़िउ वर कीज प्रवत, जलम सुक्यारथ जीह।।

भावार्थ– विष्णु सर्वशक्तिमान, सर्वत्र और सर्वज्ञ है, मैं उनकी करुणा भाव से स्तुति करता हूँ। केवल पढ़ने सुनने से नहीं, कल्याणकारी बातों को जीवन में उतारने से जन्म सफल होगा।

सायर बूंद असंख तन, क्रम क्रम अछकाल।
ताह संम पेजी तनां, जल एकौ भ्रमजाल।।

भावार्थ– जैसे असंख्य बूंदें एक समुद्र का ही अंश होती हैं, उसी प्रकार अपने कर्मानुसार विभिन्न योनियों में भ्रमण करते सभी जीव एक परमात्मा के ही अंश है।

कीड़ी कुंजर एक जीव, सोह रूघ वंशी सझय।
निगंम न जांण अगंम गति, भज्य जीहा श्री भज्य।।

भावार्थ– चींटी से लेकर हाथी तक सभी जीवों की सृजना करने वाला भगवान है, उसका पार पाने में वेद भी असमर्थ है। जीव तूं उस भगवान का भजन कर।

जस थारो औजस तैही, जोख पड़ी जे हज।
खेवण हारौ खेविसी, जीण माथ सोह लज।।

भावार्थ– हे भगवन्! मेरा यश–अपयश आपके ही हाथ है, भवसागर में मेरी नाव के खेवनहार आप ही है। आपको जैसा अच्छा लगे वैसा ही करें। मैं आपकी शरण हूँ, अब शरणागत की लाज की चिंता आपको ही करनी पड़ेगी।

घट भीतरि भैज घड़, कैवण कर भिन कांम।
कैवण लेख मेट कंवण, चल्य जावै चितराम।।

भावार्थ– कोन निर्माण और विध्वंस कर रहा है, कौन इस जगत के विभिन्न कार्यों का संयोजन कर रहा है, कौन लिख ओर मिटा रहा है? अवाक जीव साक्षीभाव से बदलते चित्रों की तरह प्रभु की यह लीला देख रहा है।

गुरु संमरथ विदीया गुवण, संमरथ कर ले सैंण।
बांधी वेल वे संभ तना, बंद बीज जल वैण।।

भावार्थ– समर्थ का संग करने से बिना विशेष प्रयास के ही कार्यसिद्धि हो जाती है। जैसे तने का सहारा लेकर बेल वृक्ष पर चढ़ जाती है नाव पर बैठकर नदी पार हो जाती है। ऐसे ही तपोबल, विद्यागुण से संपन्न समर्थ गुरु बनाने से वह भवसागर से पार उतार देता है।

गदा धर गोम्यद भीतरय गुझ, मया गुरुदेव सवारथ मुझ।
भगता भी दयंता भार, असी परि तुझय तंणां अवतार।।

भावार्थ– जिन पर गुरु की कृपा हो जाती है उनके हृदय में विराजित अंतर्यामी भगवान संकट हरने के लिए साकार रूप में प्रकट हो जाते हैं।

इंडा अनंड़ गरभेते, माय गइ तज्य सार।
तुंही रखै सांइया, चंच न दुध अहार।।

भावार्थ– मां के गर्भ से अंडे के बाहर आने के बाद उसमें पल रहे बच्चे के आहर की व्यवस्था भी परमात्मा करता है। परमात्मा रूपी ऐसी दयालु मां के रहते नर तुझे चिंता नहीं करनी चाहिए।

बाजीगर खेल पसारण विध्य, संमेटण आपण कारज स्यध।
तीन्यौ तै कीया लोक लयार, ब्रहमंड करत नै लावै वार।।

भावार्थ– बाजीगर जैसे अपने खेल का पसारा करता है और खेल समाप्त होने पर उसे समेट लेता है ऐसे ही भगवान इन तीनों लोकों की रचना और समेटना करते हैं। उसे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति करते देर नहीं लगती।

आपो प काम दसु अवतार, हुव अह का विनहुं हुजदार।
सतो गुण रज तामो गुण सार, सो बांधर तीन्य वडा सीरदार।।

भावार्थ– विभिन्न कारणों से भगवान के दस अवतार होते हैं, मैं उन्हें श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हूँ। सत, रज और तम इन गुणों से जो उपर उठकर गुणातीत हो जाता है वह सर्वश्रेष्ठ साधक प्रणम्य है।

हत्या करि पर जीव की, वन मां अगन्य लगाय।
तीन्य जलम दुख देखिके, चौथे दौर जाय।।

भावार्थ– जो जानबूझकर अकारण निर्दोष जीवों को मारता है और जंगल को जलाता है, वनों का विनाश करता है उसे धरती पर तीन जन्म निकृष्ट योनि भुगताने के बाद नरक में डाला जाएगा।

दान सील तप भाव संतोष, जरणां भगति खिमां ता मोख।
आठ नेम जे पाल कोय, जीवत जुगति मुवां गति होय।।

भावार्थ– दान, शील, तप, श्रद्धा, संतोष, दम, भक्ति, क्षमा ये आठ गुण जिसमें है उसके लोक और परलोक दोनों सुधर जाते हैं।

सत मीत लाधौ सुरराय, भांन आंण अगति मां जाय।
सुगरो मांन गुरु की आंण, नीगरौ करकुबध्य को तांण।।

भावार्थ– सत्य से मित्रता करने पर ही परमात्मा की प्राप्ति होती है। जो धर्म की मर्यादा को नष्ट करता है वह दुर्गति को प्राप्त होता है। सुगरा जीव गुरु आज्ञानुसार चलता है, नुगरा कुबुद्धि से पाप कमाता है।

आन वरन की आखड़ी, सीर धरि हरि का अंक।
पति भरता की पत घट, पीव नै चड़ कलंक।।

भावार्थ– हरि भक्त का भेस धारण करने वाला कोई निंदित कर्म करता है तो इससे भगवान की प्रतिष्ठा पर आंच पर आती है, ठीक वैसे ही जैसे किसी पतिव्रता स्त्री का पत किसी कारणवश घटता है तो उसके पति की प्रतिष्ठा को कलंक लगता है।

पाप न करि गुरु धरम करि, दुख सुख का घर दोय।
जो कीयो सो भुगतिसी, दिल भीतरि फल जोय।।

भावार्थ– हे प्राणी! पाप मत कर, गुरु के बताए धर्म मार्ग पर चल। दु:ख और सुख प्राप्ति के दो मार्ग है– पाप और पुण्य। जो कर्म किया है उसका फल भुगतना पड़ेगा, यह गहन विचार कर ले।

सीध साधा की सरण्य ले, ज्यौ जल सरणै मीन।
दांव न पकड़यौ दीन को, होय बंद आधीन।।

भावार्थ– जीवन मुक्त महापुरुषों की शरण लेने पर भवसागर में डूबना हनीं पड़ता, जैसे पानी बड़े–बड़े गजराजों को बहाकर ले जाता है परन्तु पानी की शरण लेने पर मछली उसी पानी की धारा के विपरित तैरती है। अगर धर्म का पल्ला नहीं पकड़ा तो आपको बंधनों में पड़ना पड़ेगा।

हर वंस मीसर कुराण पढ़िकाजी, सतक सबद विण्य हरि वैराजी।
धामन विच क्रम धर्म संजोई, मीनखा गति वीण्य मुगति न होई।

भावार्थ– ब्राह्मण पुराण और काजी कुराण पढ़ता है परन्तु परमात्मा तभी राजी होंगे जब जीवन में सत्य होगा। इस शरीर से किए गए सत्कर्म ही सद्‌गति प्रदान करेंगे। सभी धर्मों के लोग आकृति से मनुष्य ही है परन्तु जीवन में मनुष्यता (मिनखपना) नहीं है तो मुक्ति नहीं होगी।

जरणां वासण ध्रमै नेवास, कांम क्रोध ता ध्रम विणास।
उजगति वात सुण जे काय, डर करि कर कानां लग जाय।।

भावार्थ– विषय विकारों से रहित निर्मल अंत:करण में धर्म का निवास होता है, काम–क्रोधादि विकार धर्म का विनाश करते हैं। जहाँ धर्म की चर्चा हो रही हो वहाँ से पापी लोग अपने कानों पर हाथ रखकर निकलते हैं।

फीटि कह क्रोध छीमां कह जीव, तेण्य र संग्य सदा रह सीव।
क्रोध सता न छाती करमांण, हस्य दीय छीमा तौ छुटिजै प्राण।।

भावार्थ– जो जीव क्रोध का परित्याग करके क्षमा धारण करता है, भगवान सदा उसके साथ रहते हैं। क्रोध से अपनी छाती क्यों जलाते हो? हंसकर क्षमा कर देने से बड़ी विषम परिस्थिति भी सुखद बन जाती है।

सींगी रीख तपस्या छल्यौ, करन छल्यौ करि दान।
नारद रीख नारी हुवौ, छुटि गयौ अभेवान।।

भावार्थ– सद्गुणों का अभिमान भी पतन कर देता है, जैसे श्रृंगी ऋषि को तप, कर्ण को दान और नारद को कामविजयी का अभिमान ले डूबा।

अवगण उपरै गुण करै जोय, तिण्य री लाज कर सोह कोय।
अगन्य रा बांण छाड इहकार, इदरा बांण जीती छीमा सार।।

भावार्थ– जो अपना बुरा करने वाले का भी भला करता है, वह सबके लिए आदरणीय है। कोई अहंकारी क्रोध रूपी अग्नि बाण चलाता उसे उसे क्षमा रूपी पानी के बाण से बूझा दीजिए।

मन की दया विण्य तन का कपट है, साबण लाख मजीठ लय है।
कहा टीका तीलक तंबोल बणाय, कहा पढ़िवेद सरस धुन्य गाए।

भावार्थ– साबुन से धूले हुए रंगे बिरंगे सुंदर आकर्षक वस्त्र पहनकर, माथे पर तिलक लगाकर शरीर को तो शोभयमान किया जा सकता है, सरस ध्वनि से गायन करने वाला वेदपाठी भी बना जा सकता है, अगर हृदय में दयाभाव नहीं है तो यह सब श्रृंगार संसार को तो आकर्षित कर सकता है परन्तु परमात्मा को नहीं।

गहि आतर करि तुरि नचाव, रीण झुझ सोइ सुर कहाव।
पति भरता पीव क मन्य मांनी, विभचांरण्य भूली बहमांनी।।

भावार्थ– घोड़ी पर बैठकर उसे नचाते हुए नगर में करतब दिखाने वाला नहीं, युद्धभूमि में प्रदर्शन करने वाला शूरवीन माना जाता है। पतिव्रता स्त्री ही पति के मन को प्रिय लगती, बहु श्रृंगार करके छल करने वाले व्यभिचारिणी स्त्री वह स्थान प्राप्त नहीं कर सकती। ऐसे ही मुक्ति के मार्ग में छल, दम्भ, पाखंड, थोथा प्रदर्शन भगवान को नहीं भाता।

मेरी तेरी कहा पचि मरीय, जन सुरजन भव सागर तरीय।
कहया न होइ भइया कीया होइ, असे भरम मत भुलौ कोई।।

भावार्थ– दुनियां मेरी–तेरी के पचड़े पड़ी हुई जन्म गंवा देती है परन्तु भगवद्भक्त इन बातों से दूर रहकर भजन करते हुए भवसागर पार उतर जाते हैं। लोगों को केवल उपदेश देने वाला इन भ्रम में न रहे की वह पार उतर जाएगा, अगर वह उपेदश उसकी करनी में नहीं उतरता तो उसका पार उतरना असंभव है।

देवल विण्य देव कर्म विण्य करसण, वरसण जहर विचारी।
माया मोह भरम मद मातो, ठग बाजी पड़े हारि।।

भावार्थ– मंदिर के बिना देवता की शोभा नहीं होती, खेतीबाड़ी के कर्म को कुशलतापूर्वक नहीं करने वाला किसान धिक्कारा जाता है, आकाश से अमृत समान जल बरसने की जगह जहर बरसे तो उस बरसात का कौन स्वागत करेगा, इसी प्रकार मोह–माया, अहंकार आदि से ग्रस्त परोपकार कर्म से हीन मनुष्य भी संसार के लिए निरर्थक है। ऐसा भ्रमित मनुष्य काल की ठगबाजी में एक दिन अपना सर्वस्व लुटा बैठता है।

मन मेरो विसन नांव नहीं लीया, तातै कहा बोहत दिन जीया।
गीनका का पुत पिता कहे कासुं, जाति पांति कुल खोया।।

भावार्थ– हे मेरे मन! तूने विष्णु नाम जप नहीं किया, व्यर्थ ही जीवन बिता दिया। जैसे वैश्या का पुत्र अपने पिता, कुल, जाति, वंश के नाम का दावा नहीं कर सकता ऐसे ही परमपिता परमात्मा का आश्रय नहीं लेने के कारण इस नाशवान संसार के संबंधों के सब दावे खारिज हो जाएंगे।

एक भगति विण्य जगत अंधेरा, सुभ जुग धुंध कहांणी।
उद्र कोल किया था हरे सूं, सो दिन आयो प्राणी।।

भावार्थ– भगवान की भक्ति के बिना सबकुछ व्यर्थ है। इस संसार का समस्त ऐश्वर्य धुंध की चादर की तरह है जो थोड़ी सी हवा लगने पर ही उड़ जाता है। गर्भाग्नि से पीड़ित होकर जीव ने बाहर निकलने पर भगवान से भजन करने का वादा किया था, वो वादा निभाने अब समय आ गया है।

नेकी छाडय वदी ललचाणां, अपणां आप खवारी।
रतन जलंम मन्खया गति छुटी, लुट जंम संसारी।।

भावार्थ– जो भलाई को छोड़कर बुराई के मार्ग पर चलता है वह स्वयं का सबसे बड़ा दुश्मन है, उसने रत्न सदृश और देवदुर्लभ इस मनुष्य के शरीर को व्यर्थ ही गंवा दिया। अंत में उसके इस शरीर रूपी घर को यमदूत लूट लेंगे।

अवधु देखि भरम की बाजी, तातै अलह विसन वेराजी।
तरवर एक दोय फल लागा, कुंण मीठा कुंण खारा।
अलह नीरंजण रहे गया अंतरि, पथर पेम पसारा।।

भावार्थ– विष्णु और अल्ला एक ही ईश्वर है, इनको अलग करके देखना यह भ्रम है, इस भ्रम से भगवान अप्रसन्न होते हैं। एक ही वृक्ष पर लगे दो फलों में से एक मीठा और एक कड़वा कैसे हो सकता है? एक उपासक ने अल्ला को निराकार माना और अपने अंदर बैठाकर उसे भूल गया तथा दूसरे उपासक ने उसे साकार माना और पत्थर में बैठाकर कर उसे भूल गया।

एक गल दोय हत्या कीनी, एक पिता एक माइ।
मात पिता की खबरे न पाइ, दोय घर अकल्य गुंमाइ।

भावार्थ– दूसरे के मत से घृणा करके उसके भगवान की निंदा करने वाला ऐसा करके अपने भगवान की भी निंदा कर बैठता है, क्योंकि मूल में दो नहीं है, ईश्वर एक ही है, वही सबको जन्म देने वाला माई-बाप है। यह निंदा एक गला दबाने से दो हत्याएँ के समान है। ईश्वर को दो मानने वाले ने अपनी अक्ल गंवा दी है।

नारद व्यास सीनक सीनकादिक, धू पहलाद सहाइ।
अनंत भगत कौ एकौ मारग, नीगुरा का घर नांही।।

भावार्थ– नारद, व्यास, सनकादिक, ध्रुव और प्रहलाद आदि सभी भक्तजन भगवान की तरफ चलने वाले की सहायता करने के लिए तत्पर रहते हैं। अनंत कोटि भक्तों ने एक ही मार्ग पर चलकर भगवद्प्राप्ति की है। भगवद विमुख की दुर्गति ही होती है।

पाँच पचीस पचास पसारा, ए सभ आंवण जांणां।
तांह परे र पार अपारा, कोइ विरला संत संमाणां।।

भावार्थ– संसार में चाहे कितना भी विस्तार कर लो, यह नाशवान है, जो अपंरपर है वह इससे परे की वस्तु है, इस बात को कोई-कोई विरला संत ही जानता है।

अनहद सबद सरस धुन लाव, जहां लाय मन मेरा।
अगंम की बात नीगम क्या जांण, तज्य हदि वेहदि डेरा।

भावार्थ– अनहद नाद की सरस धुन में जब मन लग जाता है तब वह आनंद प्राप्त होता है जिसकी कोई सीमा नहीं है। परमात्मा को सम्यक प्रकार से वेद भी नहीं जानते, इन सबकी सीमाएँ हैं परन्तु परमात्मा असीम है।

पांणी प्रेम पस्य नहीं धोया, इंद्र की आंखि नीरख्या।
इबकी वेर मील्या गुरु औषद, सोइ जांणगा जीण्य चख्या।।

भावार्थ– जिन्होंने भगवदप्रेम के पानी से आँखों के मेल को नहीं धोया है उन्हें इन्द्र की तरह हजार आँखे प्राप्त हो जाए तो भी भगवद् दर्शन नहीं हो सकता। इस बार मुझे ऐसे गुरु (जाम्भोजी) मिले हैं, जिनकी दी हुई औषधि (गुरुज्ञान) से भवरोग दूर हो जाता है। इस बात को वही जान सकता है जिसने इस औषधि का सेवन किया है।

विसन सीवरे मन विसन सहाइ, विसन सीवरि तिहुंलोक बडाइ।
हरि सीवरण दिढ़ कीन्ह मुंजारी, राख्या सुत हरि अगन्य करारी।

भावार्थ– हे मेरे मन! विष्णु नाम स्मरण कर, यह सब जगह तुम्हारी

सहायता करेगा और तीनों लोकों में तुम्हें यश प्राप्त होगा। इस नाम स्मरण के बल पर ही बिल्ली के बच्चों की भयंकर अग्नि में रक्षा हुई थी।

जागै हरेचंद धु पहलादा, करन दधीच सीवरे बल्य राजा।
नारद व्यास कीसन दीपांण्या, सीनक सीनंदांण सुखदेव जांण्य।।

भावार्थ– संसार को मोहित करने वाली इस माया रूपी निद्रा से जागो, उठो और भगवद्प्राप्ति के मार्ग पर लगो। हरिश्चंद्र, ध्रुव, प्रहलाद, कर्ण, दधिचि, शिवि, राजाबलि, नारद, कृरुणद्वैयापन व्यास, सनकादिक और शुकदेव ये सब जाग्रत महापुरुष है, इनका जीवन चरित्र जागने के लिए इच्छुकों का मार्गदर्शन करेगा।

पल पल छिन छिन व्यापै काल, निसवासरि भज्य गोपाल।
विसन भजन हुवा सीध साध, जलम जलम का मीटै अपराध।।

भावार्थ– पल-पल, क्षण-क्षण मृत्यु नजदीक आ रही है, दिन-रात भगवान का भजन करो। विष्णु को भजने वाला ही साधु है, इस भजन से ही सिद्धि मिलती है और जन्म-जन्मांतरों के पाप कट जाते हैं।

जुगां जुगां को तारणहार, जम्भगुरु आयो दातार।
तारण तरण सकल धर्म थंम, सुरजन सीवरे सोइ गुरु जम्भ।।

भावार्थ– अनादि काल से जो अपने शरणागतों का परित्राण कर रहा है, वही इस बार गुरु जम्भेश्वर के रूप में तारणहार बनकर आया है। वह सभी धर्मों का आधार है। सुरजनदासजी कहते हैं कि मैं ऐसे गुरु जम्भेश्वर का स्मरण करता हूँ।

मै मन्य सोच नहीं कुछय है मेरा, त्रभुवन ताक्या सरणा तेरा।
सिध विरोध कपिला गाइ, बंद की पोहच्य पुकारंण तांई।

भावार्थ– हे मेरे मन! गहन सोच-विचार करके देख ले इस संसार में मेरा कहने लायक कुछ नहीं है, इस त्रिभुवन में नजर पसार कर देख ले कौन है जो मृत्यु से तुम्हारी रक्षा करेगा। अपने कहने लायक तो भगवद्प्राप्त साधु ही है जो हमें मुक्ति का मार्ग बताते हैं, उनकी अवहेलना करना, मानों घर से सर्वसिद्धि देने वाली कपिला गाय को निकालना है। अपना नित्य संबंध

भगवान से है, उन्हीं की शरणागति लो, किसी प्रकार का संकट पड़ने पर केवल उन्हीं की पुकार करो।

भीड़ पड़ी सरणौदिक भाज, धरम डीगै तो सतगुरु लाज।
ध्रुव नारद पहलाद पुकारे, भीड़ पड़ी भवसागर तारे।

भावार्थ– संकट पड़ने पर भगवान की शरण का आश्रय लो। अगर हम धर्म का परित्याग करते हैं तो हमारा सतगुरु लज्जित होता है। ध्रुव, नारद, प्रहलाद आदि भक्तों ने धर्म को दृढ़ रखा और संकट पड़ने पर भगवान को पुकारा, उसे पुकारने पर वह भवसागर से पार उतार देता है।

जीण्य कुल पुत न ग्यान विचारी, विधवा क्यौं न भइ महतारी।
जीण नर विसन भगति नहीं साधी, जलम तक्यौ ओ अपराधी।

भावार्थ– जिस कुल में जन्म लेने वाला पुत्र आत्मज्ञान प्राप्त करने की चेष्टा नहीं करता, उसकी माँ का सधवा कहलाना और गर्भधारण का कष्ट उठाना निरर्थक है। जो मनुष्य विष्णु भगवान की भक्ति नहीं करता वह इस मनुष्य शरीर के दुरुपयोग का अपराधी है।

तसकर हर नै राजा डंडा, भोल छुटि नै जाइ।
बाहरे भीतरि सरब नीरंतरि, सहजे रहया संमाई।

भावार्थ– राजदंड कोई प्रकट वस्तु नहीं है परन्तु अपराधी को हर समय और हर स्थान पर वही दिखाई देता है, भूल से उसे उसका विस्मरण नहीं होता ऐसे ही परमात्मा अदृश्य रूप से सर्वत्र व्याप्त है, साधक उसे कभी नहीं भूलता।

रे सीध साध्यक गंद्रभ मुंनीयर, वाका पार न पाव।
धरण्य गीगन मेर तै मोटा, सुइ के नाकै संमाव।

भावार्थ– परमतत्व का पार पाना सिद्ध, साधक, गंधर्व और मुनिजनों के लिए भी असंभव है। वह स्थूल होता है तो धरती, आसमान और सुमेरु पर्वत से भी भारी है और सुक्ष्म होता है तो सुई के नाके में भी समा जाता है।

पारस क संग्य लोह लगाया, सो फीरय हाथ हेम कहाया।
उडि गया हंस विरख पधरांणां, गुरु सरणागति हंस समाणा।।

भावार्थ– जैस पारस का स्पर्श होते ही लोहा सोना बन जाता है ऐस ही समर्थ गुरु की शरणागति जीव को साधारण पक्षी से हंस बना देती है जो उड़कर अपनी मंजिल (मुक्तिधाम) को पा लेता है।

तन दीपक मन तेल करि, ब्रंभ ग्यान जगाया।
जल मां जोती परगटी, ताउ बुझण न पाया।।

भावार्थ– इस शरीर और मन को साधकर जो उपासना की जाती है उससे ब्रह्मज्ञान की ज्योति प्रगट होती है। तन की देये में मन का तेल डालकर प्रज्ज्वलित की हुई ऐसी ज्योति अखंड होती है। बाहर की अग्नि को तो पानी बुझा देता है परन्तु जो बड़वानल अग्नि पानी में प्रकट होती है वह बुझती नहीं है।

सकल वीयापी एक है, करि लीजो दाया।
दरपण मां मुख देखि ले, गुरु ग्यान बताया।।

भावार्थ– सभी जीवों में आत्मा रूप में एक परमात्मा ही व्याप्त है, ऐसा विचारकर कभी किसी जीव के प्रति निर्दयता का भाव न रखकर दयाभाव ही रखना चाहिए। जैसे अनेक दर्पणों में मुँह देखने पर हमारे जैसे ही अनेक और उनमें दिखाई देंगे, परन्तु वास्तव में वहाँ दूसरा कोई नहीं है, एक का ही प्रतिबिंब सब में दिख रहा है। यह ज्ञान जो करवा देता है वही सच्चा गुरु है।

दीन गरीबी बंदगी, भजीय एक धारा।
पर ऊपगार विचारीय, करि प्रेम पियारा।।

भावार्थ– अपने में अमानी भाव रखकर अखंड धारावत भगवान को भजना चाहिए। दिल में दूसरे जीवों के प्रति उपकार की भावना और भगवान के प्रति प्रेम का संचार ही भगवद्प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

एक रीझावै राग तै, एक रूप रीझाया।
सभ का सांइ साच मां, गुरु ग्यान बताया।

भावार्थ– सुंदर बदन पर सुंदर वस्त्र धारण करके और सुरीले कंठ से

गायन करके आप जगत को तो रीझा सकते हो परन्तु जगदीश तो तभी रीझेगा जब जीवन में सत्य होगा।

तिल मां तेल पोहप मां, रस बास संमाया।
प्रेम जतनै ता उपजै, उपदेस लखाया।।

भावार्थ– जैसे तिल में तेल और पुष्प में रस तथा सुगंध अदृश्य रूप में व्याप्त है, वैसे ही भगवान अदृश्य रूप में सर्वत्र व्याप्त है, परन्तु जहाँ उनके प्रति प्रेम का अतिरेक हो जाता है वहाँ वे प्रकट हो जाते हैं।

वडी गरीबी जे गुण जांण, जीव दया तप जांही।
साध संगति साहेब की सेवा, आ नीध वीरला कांही।।

भावार्थ– अहं शून्यता और जीवमात्र के प्रति दया का भाव रखना तप है। सच्चे साधु की संगति और भगवान के भजन की कीमत विरला ही जानता है।

ध्रुव राज ले पहलाद हरिचंद, दीयो दहुठल दीन।
जिस काज्य राज अनेक तज्य तज्य, सो संभराथल चीन्हं।

भावार्थ– जिस तत्त्व की प्राप्ति करके ध्रुव, प्रहलाद, हरिश्चंद्र, युधिष्ठर ने धर्मस्थापना के लिए राज्य किया तथा असंख्य राजाओं ने राज्य का परित्याग करके उस तत्त्व को प्राप्त करने के लिए वनगमन किया, वही तत्त्व समराथल पर विराजमान है, उसके पहचानो।

लुधवास की अदरास संभल्य, कीसंन दीज कांन।
नांव सुणत नीवाजीया, गजराज ध्रुव समान्य।

भावार्थ– निर्बल होकर की गई पुकार को भगवान ध्यानपूर्वक सुनते हैं। यह अंतस की अरदास का ही परिणाम था की भगवान गजराज और ध्रुव के सामने प्रकट हो गए थे।

भूलौ लोग कह घर मेरा, तिस घर मां क्या तेरा।
आंख्य मीच्य करि देखौ क्यों नांही, सभ जुग धुंध अंधेरा।

भावार्थ– जिस घर को भूलवश हम अपना कह रहे हैं, क्या वास्तव

में वह अपना है? जैसे आँख बंद करने पर चारों ओर अंधेरे के अलावा कुछ दिखाई नहीं देता ऐसे ही एक दिन इस शरीर को छोड़ते समय जब स्थाई रूप से आँखे बंद होगी तब पता चलेगा की यह घर तो अस्थाई था।

रस कस जीम्भ्या चखीयौ, गुठली रही निराट।
बीज पड़ो या बीज पे, फीरय लागो अवचाट।।
वढ़ ही का वढ़या पांगर, दाह कुंपल्य मेल्ह।
जतन कीया ज्यौ जीव का पसरि गइ भ्रम वेल।।
भुज्या व्रंभ अगन्य मां, दीनही भसम उडाय।
सुरेजन सतगुरु भेटिया, अब कुंण आव जाय।।

भावार्थ– किसी फल को खाने के बाद भी उसका बीज शेष रहता है और वह समय पाकर पुन: पेड़ बनकर असंख्य फल पैदा कर देता है। किसी वृक्ष को ऊपर से काटने पर तथा शीतादि के प्रकोप से जली हुई वनस्पति भी पुन: हरी-भरी हो जाती है। इसी प्रकार जीव के लाख जतन करने पर भी वासना के समूल नाश न होने पर उसका बचा हुआ बीज अवसर पाकर और भी विस्तार के साथ प्रकट हो जाता है परन्तु सुरजनजी कहते हैं की मुझे गुरु जाम्भोजी के रूप में ऐसा सत्‌गुरु मिला है कि उनके दिए गए ब्रह्मज्ञान की अग्नि में संपूर्ण विषय वासनाओं के बीज जलकर भस्म हो गए हैं। मैंने उस भस्म को भी उड़ा दिया है। अब दोबारा आवागमन में नहीं आना पड़ेगा।

रे मन दरस परस्य स्यौ तांही, भज्यले पाप परल जांहि।
संभरथल्य एक साच पायौ, सीध बैठो आय।
भेख धारय अलेख आयौ, जोग ध्यान दीढाय।।

भावार्थ– समराथल पर स्वयं योगेश्वर भगवान ही भेष-धारण करके ध्यानस्थ होकर बैठे हैं, उनके दर्शन, स्पर्श और स्मरण से पाप प्रलय हो जाते हैं।

वसती मां तै पकड़ि नीकाल्यौ, जंगल्य कीया वसेरा।
घर की खबरि खरच नहीं पठव्या, आप न कीया फेरा।।

भावार्थ– मरणोपरांत इस शरीर को जिसे हम अपना घर कहते हैं उससे निकालकर गांव से दूर जंगल में निवास दे दिया जाएगा, तब यह घर कैसे चलेगा इसकी कोई खबर नहीं मिलेगी और न ही इसे देखने के लए वापस आ सकते हैं।

उंच नीच कुल कुछ न जांणौ, पांणी का पिंड दोइ।
जरणां जुगमा पारय उतार, भाग्य आया सोइ कोइ।।

भावार्थ– सभी मनुष्यों के शरीर का निर्माण एक ही प्रकार के तत्त्व से हुआ है, इसलिए परस्पर ऊँच-नीच की भावना रखनी उचित नहीं है। भाग्यानुसार जीव को अनुकूल प्रतिकूल परिस्थितियों में जन्म लेना पड़ता है परन्तु वह उन परिस्थितियों से सामंजस्य करके विषय-विकारों से दूर रहकर सद्‌गति प्राप्त कर सकता है।

क्रमै कीया अध्रम चित लाया, सुण्य सुण्य ध्रम कहांणी।
कोड़ि गुमी कवड़ी के साटा, बुडि गया विण्य पाणी।

भावार्थ– इस शरीर से भगवद् भजन हो और भगवद्प्राप्ति ही लक्ष्य बन जाए, यह जीव भगवान के साथ अपने विस्मृत संबंध को पुन: जोड़ ले, ऐसी जुगति बताने वाले को गुरु बनाने और उसका चेला बनने में कल्याण निश्चित है।

हरि काया हरि नांव भजन का, बांध्य भगति सुं बेला।
जुगति परापति करूं जीव की, तो मैं गुरु का चेला।।

भावार्थ– इस शरीर से भगवद् भजन हो और भगवद्प्राप्ति ही लक्ष्य बन जाए, यह जीव भगवान के साथ अपने विस्मृत संबंध को पुन: जोड़ ले, ऐसी जुगति बताने वाले को गुरु बनाने और उसका चेला बनने में कल्याण निश्चित है।

तन करे सीप सुवाति सुंमति, बीज सबद करि झांई।
मन के कारण्य मोती नीपज्य, जोत्य हुइ जग मांहि।।

भावार्थ– इस देह को सीप, भगवद्प्रीत्यर्थ सुमति को स्वाति नक्षत्र, सबद को वर्षा की बूंद मानकर मन एकाग्र किया जाए तो साधना की परिपक्वता

पर तत्त्व रूपी मोती की प्राप्ति होती है। यह जिसको प्राप्त होता है उसका जीवन प्रकाशमान बन जाता है और वह जगत को भी प्रकाशमय कर देता है।

दया हीण दुरमति का वासा, काया लबध्य का कांमा।
आलस ग्रब घंणी असताइ, अइ अगति का सांमा।।

भावार्थ– दयाहीन हृदय, कुबुद्धि, केवल अपने शरीर की ही सुविधा का चिंतन, आलस्य, अहंकार और असत्य, यह वह सामान है जो जीव की दुर्गति कराता है।

बुरै भलै का अमल विसारूं, सील सरम गुरु भाइ।
जुगति मुगति अर भगति भलाइ, अस लोभ लिव लाइ।।

भावार्थ– जीवमात्र में भगवद्भाव रखते हुए किसी को भी बुरा न समझें। गुरु मर्यादा का ध्यान रखते हुए शील धर्म का पालन करें। अब तो बस मन में एक ही लोभ है कि अहर्निश भगवान का भजन हो तथा सबका हित चिंतन करते हुए जीवन को युक्तिपूर्वक जीते हुए मुक्ति प्राप्त हो जाए।

वेपरवाह विसन का चाकर, जंम का आस्यक नांही।
नेकी कर वदी तै न्यारा, राज कर घर मांही।।

भावार्थ– भगवान विष्णु का उपासक सब चिंताओं से मुक्त होता है, यमराज की उसमें कोई आसक्ति नहीं होती। वह बुराई से दूर रहकर सबकी भलाई ही करता है। एक दंडधारी राजा की तरह वह मन आदि निरंकुश इंद्रियों पर शासन करता है।

गोरख गोपीचंद भरथरी, अमर हुवा अंधराया।
जरणां का घर जोगी पकड़्या, तो भोगी पांय लगाया।

भावार्थ– गोरखनाथ, गोपीचंद और भृतहरि जैसे योगियों ने अपने काम–क्रोधादि विकारों को नष्ट करके अमरपद प्राप्त किया तो सांसारिक लोग उनके चरण पलौटने लगे।

उतिम लछंण कला उंनमनी, जीण्य सरण सुख पाऊँ।
सीध सांधा का करूं सुवारथ, तो सीरि भसम चढ़ाऊँ।।

भावार्थ– जो सन्यास धर्म के उत्तम नियमों का सम्यक् प्रकार से पालन करते हुए संसार में विरक्त भाव से विचरण करते हैं, ऐसे सिद्ध साधु की शरण ग्रहण करने से वास्तविक सुख की प्राप्ति होती है। मुझे उनकी सेवा करने का अवसर प्राप्त हो और मैं उनकी चरणरज को अपने मस्तक पर धारण करूं।

सोह जुग सीण नहीं कौ दुरेजैण, पीसण कीया प्रहारा।
सरंम रही सुरगे सुख पाया, वाज्य धरम नगारा।।

भावार्थ– यह सारा संसार ही हमारा मित्र है, यहाँ कोई अपना शत्रु नहीं है। अगर हमारा कोई प्रबल शत्रु है तो वे हमारे विषय–विकार हैं जो नित्य प्रति हमारे पर प्रहार करते रहते हैं। जहाँ धर्म का नगाड़ा बजता है वहाँ ये शत्रु दूर भाग जाते हैं। धर्म का पालन करने वाले को अक्षय लोक की प्राप्ति होती है।

कह संतोष सुणो रे साधो, मुगति लहगा सोइ।
घटी वधी सुं क्या पचे मरणां, करता कर स होई।।

भावार्थ– जिसके जीवन में संतोष है तथा जो हानि–लाभ को ईश्वर का विधान मानकर संतुरुट और प्रसन्न रहता है, वह मुक्ति का अधिकारी है।

आसण मार तीसनां जार, खुध्या कर रसोइ।
आसण साध तीसनां जीत, हुंणी होय स होइ।।

भावार्थ– सच्चे साधक की संसार से आशा और तृष्णा समाप्त हो जाती है। उदरपूर्ति के लिए अयाचक वृत्ति से कुछ मिल जाए तो ठीक है, नहीं तो भूख लगने पर भूख को ही खा लेता है और विधि के विधान में खुश रहता है।

ग्यान गरीबी नीकुछ भलाइ, असा बाण चलाव।
भांज ग्रब कया गढ़ भेल, तो हरि दरग आव।।

भावार्थ– विवेक, अमानीता, निराभिमानिता और परोपकार ये आपके तरकश में ऐसे बाण हैं जिनसे अहं को मारकर तथा समस्त कर्मों का भुगतान करके ईश्वर प्राप्ति संभव है।

माया मीलत मेहर विसन की, नहीं तो माया काया।
दुख निदोखी आंसण्य बंसण्य, जीव संतोष बुलाया।

भावार्थ– जो सुख भगवान की कृपा से मिलता है वही सच्चा सुख है, भगवान से विमुख होकर प्राप्त किया हुआ सुख किस काम का। दुख हमें निर्दोष बनाने के लिए आता है। वास्तविक सुख के अपनी आशाओं को संयमित रखते हुए जीव को संतोषी होना चाहिए।

गुरु परताप साध की संगति, परम जोति परचाई।
अंति पाप क रेत पड़ी मुखि, धरम धजा ठहराइ।।

भावार्थ– गुरु कृपा करके तपोबल से अर्जित शक्ति प्रदान कर दे और भगवदप्राप्त संतों का सान्निध्य हरपल मिलता रहे तो आत्म साक्षात्कार संभव है। अंततोगत्वा पापी की दुर्गति निश्चित है। जीत तो आखिर में धर्म की ही होगी।

सहज सील संतोष खिमा तप कीरीया, जप जोग दीढाई।
वा मुख देखि सभ सुख संपति, सेव कीया गति पाई।।

भावार्थ– जो सहजता, शीलता, संतोष, क्षमा, तप, शास्त्र विहित नित्य नैमितिक कर्मों का सम्यक प्रकार से संपादक (जैसे उनतीस नियमों का विधिवत आचरण), जप, योग– ध्यान का दृढ़ता से पालन करता है, ऐसे साधक के दर्शन मात्र से ही सुख प्राप्त होता है और सेवा करने से सद्गति प्राप्त हो जाती है।

नीकुछ कोट लीयौ नरपुर को, जरणां ताक बताया।
भव भागा भगवंत क सरण, त्रिभ नाद वजाया।।

भावार्थ– अपने में अमानीपना और विषय–विकारों का शमन दुर्गति से बचने का बहुत बड़ा सुरक्षा कवच है। जगत की बाधाओं से बचने के लिए जिसने भी भगवान की शरण ली है वह निश्चिय ही अभय हुआ है।

तारा दे रोहितास हरीचंद, झागी धारी करारी।
पते रही परमेसर भेंट, सति असो संसारि।।

भावार्थ– राजा हरिश्चंद्र, तारावती रानी और राजकुमार रोहिताश्व ने सत्य की तेज धार वाली तलवार पर चलकर कड़ी परीक्षा दी थी। इस प्रकार सत्य का पालन करने से भगवान ने उनकी लाज रखी और उन्हें भगवद्प्राप्ति हो गई।

सीता कुंता सती सुपेदरा, कौसल्या पटराणी।
मन का सील सजीवण मूली, घर का अमर कहांणी।।

भावार्थ– सीता, कुंती, सती सुभद्रा, महारानी कौशल्या ने शील का पालन करते हुए मन को पवित्र रखा, यही वह संजीवनी बूटी है जिसके सेवन से इनकी अमर कहानी घर–घर में गाई जाती है।

चीत मां चेतन भसंम चड़ाव, संयम दीय लंगोटी।
सील कंथा मरजाद मेखला, जंम की कीसमत्य लुटी।।

भावार्थ– चित्त में आत्मज्ञान की भस्म चढ़ाए, संयम की लंगोटी पहने, शील की गूदड़ी ओढ़े और धर्म की मर्यादा का कमरबंद धारण करे तो फिर बाहरी भेष–भूषा चाहे कैसी हो, उस यम के भाग्य फूट जाते हैं जो ऐसे योगी की ओर नजर उठाकर भी देखे।

काला मुंह वदी का कीया, नेकी नेह लगाया।
राव वमेखी विसन का चाकर, गति मुगति ले आया।।

भावार्थ– जो बुराई का दूर से ही परित्यपाग करके भलाई से प्रेम करता है वह परम विवेकवान विष्णु भक्त मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

आप तीर संगति कुं तारै, कुल नै चाड़ पाणी।
ने की वास विसन कर सरण, सांभल्य सीध कहांणी।।

भावार्थ– विष्णु का सच्चा शरणागत साधक वह है जो आप तो मुक्ति प्राप्त करता ही है अपने कुल और संगी साथियों को भी तार देता है।

धन्य वा मात पिता धन्य सुरजन, गुरु चेला धन्य दोइ।
पावन जोति मील परमेसर, आवा गुवण्य न होई।।

भावार्थ– सुरजनदासजी कहते हैं कि वे माता–पिता धन्य है जिनकी संतान भगवदप्राप्ति करती है और पुन: इस संसार के आवागमन में नहीं आती। ऐसा गुरु धन्य है जो स्वयं तिरे और अपने शिरुय को भी तार दे, ऐसा मुमुक्षु शिष्य धन्य है जिसे ऐसा जीवनमुक्त गुरु मिलता है।

आदे धरम इहनाण, वाद सभ दीन वहांणा।
छुटि सभ विकार, सार जीण्य राह चलाणां।।
उपख्यान वेद उदबुद कथा, त्रगुण जीत्य तारण तरण।
झंणकत झंभ झीणां सबद, सुरेजन कवित संभु सरण।।

भावार्थ– यह आदि धर्म की पहचान है की इसके प्रकट होने पर सभी वाद-विवाद विगलित हो गए हैं, इसको तत्त्व से जानकर इस राह पर चलने वालों के सभी विकार छुट गए। वेदमयी, त्रिगुणातीत, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, तरणतारसी गुरु जाम्भोजी की वाणी है। सुरजनजी कहते हैं ऐसे स्वयंभू की शरण होकर मैं अपनी कविता लिखता हूँ।

झंभ सबद झंणकार, भूत भै करंत भगांणा।
ध्रम डाल परवरे, पाप परलोक पयाणां।।

भावार्थ– जहाँ गुरु जाम्भोजी की सबदवाणी का पाठ होता है वहाँ से भूत, भय सब भाग जाते हैं, धर्म का संवर्धन होता है और पाप प्रलय हो जाते हैं।

घर एक भेला घण जांमी, साह चोर रहे किम साथि।
सुरिजन कहे माहरा सामी, हरिजी पिसंण पकड़ द्यो सो हाथि।।

भावार्थ– मैं और मेरा मन दोनों एक ही घर में निवास करते हैं। साहूकार और चोर एक साथ कैसे रह सकते हैं। हे भगवन्! इस शत्रु को काबू करके मेरे अधीन कर दीजिए।

बुधि दीता आलोचण वैसे, मत मिलै नहीं खिण मात।
थापू जकै जारि उथपै, घट मांहल पीण री घात।।

भावार्थ– बुद्धि में कोई शुद्ध संकल्प आता है तो वह उसकी आलोचना करता है। उसके साथ मेरा मत एक क्षण के लिए भी नहीं मिलता। मैं किसी शुभ कर्म को करने का निश्चय करता हूँ तो वह उस निश्चय को जबरदस्ती उखाड़ फेंकता है, ऐसा शत्रु कोई बाहर नहीं है मन रूपी वह मेरे अंदर ही बैठा है।

धर अकास दुनिया धंणीयाप, आतम देव न को तो ईढ।
कहर समान्य न को तो करता, महर समान्य न को तो मीढ़।।

भावार्थ– धरती और आकाश का जो मालिक है, आत्मस्वरूप में वह हमारे हृदय में विराजमान हैं, उसके समान और कोई नहीं है। क्रोध करे तो उससे भयंकर दूसरा नहीं है और कृपा करके तो उससे बड़ा दयालु अन्य नहीं है।

काल सुकाल करै तु करता, चिंता हरण करण तुं चीत।
मारणहार न वड मीरा, राखणहार नहीं हरे रीत।।

भावार्थ– हे भगवन्! तूं चाहे तो भयंकर अकाल तो भी सुकाल में बदल सकता है। चित्त को संपूर्ण चिंताओं से मुक्त करके आल्हादित कर सकता है। मारने वाला कितना भी बड़ा बादशाह क्यों न हो जिसकी रखवाली तूं करता है उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

आज हु लाज जम्भराज राखौ, आपरा वापरी सांव आयो।
सांभलि नाथ अनाथ सुरिजन कहै, गरीब हरि नाम वेसास गायौ।।

भावार्थ– आज मेरी लाज रखो जम्भराज, मैं कृपा प्राप्त करने के लिए आपकी शरण आया हूँ। हे नाथ! इस अनाथ सुरजन की सुनिए, इस गरीब ने विश्वास करके आपका नाम गाया है।

भरतार नै लाज जो छीन तन भांवणी, लांघणे बाल मावीत लाजै।
आदि गजराज पहलाद ध्रु उधरे, भगति पति जगत की भीड़ भाजै।।

भावार्थ– स्त्री पर कोई संकट आता है तो उसके निवारण की जिम्मेदारी उसके पति की है। बालक भूखा है तो उसकी क्षुधा निवृत्ति का उपाय करना उसके माता-पिता का फर्ज है। इस प्रकार आश्रित होने पर जिसने आदिकाल में गजेन्द्र, प्रहलाद और ध्रुव का उद्धार किया था वह आज भी संसार के समस्त विघ्नों का नाश करके अपने भक्त की रक्षा करने के लिए तत्पर रहता है।

हाथे हेकै सुरलोक तीन्यौ हुवा, जीव सूं सोव किण्य भंति जूवा।
हेक हुंकारि दे पैदास्य तीन्यौ हुवा, हाथ री हाक पैमाल हुवा।।

भावार्थ– स्वर्गादि तीनों लोक जिसके हाथ पर हैं, वह परमात्मा किसी भांति भी जीव से दूर नहीं है। उसकी एक हुंकार से तीनों लोकों की उत्पत्ति हो जाती है और हाथ की एक फटकार से तीनों लोक प्रलय हो जाते हैं।

निबल सूं रोस हरि सबल कीजै नहीं, काल पैमाल करि मेह कीजै।
विनती साम्य सुरिजन कहै सांभलौ, दुन्यै कर जोड़ि आसीज दीजै।।

भावार्थ– हे भगवन्! सर्वसमर्थ को निर्बल पर क्रोध नहीं करना चाहिए, मेरे दोषों को न विचार कर अपनी कृपा की ओर देखते हुए आप मेरे अकाल रूपी संकट को नष्ट करने के लिए कृपा रूपी बारिश कर दीजिए। सुरजन की विनती सुनिए स्वामी, मैं दोनों हाथ जोड़े खड़ा हूँ मुझे आशीर्वाद प्रदान करें।

मारि उधारिसी सार आपो मिले, कुराण वेदा लग सूत कहिया।
दत भीड़ी जत राखि दया, वे दिया सकति आकास वहिया।।

भावार्थ– शरणागत भक्त पर कोई विपत्ति पड़ती है तो भगवान दया करके उसका निवारण करते हैं और देह छुटने के बाद उसे उर्ध्वगति प्रदान करते हैं। वेद, पुराण, कुराण तो यहां तक कहते हैं की वे बड़े से बड़े पापी पर भी कृपा कर देते हैं उसे मारकर उसका उद्धार कर देते हैं।

धवल जल धूप आकासि वाजी धरा, इंद रवि चंद कर जोड़ि आंमी।
नावं समानि राजा न बीजा नहीं, नांव भज्य सुरजनां सहंस नामी।।

भावार्थ– सूर्य, चंद्र, आकाश, धरती, अग्नि, वायु, इंद्र जिसके सामने हाथ जोड़े खड़े रहते हैं वह भगवान का नाम है, उससे बड़ा राजा दूसरा नहीं है। हे सुरजन! उस हजार नाम वाले भगवान को तूं भज।

रूही पलटै पेम ते, हुवै खीरि थणेह।
लखे ही लाभै नही, लाधौ गुर वैणेह।।

भावार्थ– मां के शरीर में रुधिर सर्वत्र व्याप्त है जो अपने बच्चे के प्रति उमड़ते प्रेम के कारण दूध में बदलकर स्तनों में प्रकट हो जाता है, ऐस ही सब जगह रहने वाले परमात्मा को अपने प्रयत्न से नहीं पाया जा सकता परन्तु सम्यक् प्रकार से गुरु के वचनों का पालन करने से वे गुरु कृपा से सम्मुख प्रकट हो जाते हैं।

दुनिया पोखण देत हैं, गिणत न लाभै गंन।
बाल बिसारे माय नै, माय न खंचौ मन।।

भावार्थ– जो पूरी दुनियां का पोषण करता है उस भगवान के गुणों की गिनती नहीं की जा सकती, ऐसे परमदयालु भगवान को हम भूल जाते हैं परन्तु वह हमें नहीं भूलता, जेसे बालक तो मां को भूल सकता है परन्तु मां अपने बच्चे को नहीं भूलती।

परचौ बाजि विटंबणा, भेख मीति का चीत।
सेवग नीला रूंखड़ा सूका काठ अतीत।।

भावार्थ– अपने तपोबल से अर्जित सिद्धियों का भौतिक लाभ के लिए प्रयोग करना प्रपंच है। भेख परिमाण बाहर से नहीं अन्दर चित से मापा जाता है, जिसमें सेवा का भाव है वह हरे वृक्ष के समान जगत के लिए परोपकार करता है और जिसमें विरक्ति का भाव है वह सूखे हुए काष्ठ के समान जगत से निरस हो जाता है।

पथर घड़े सिलावटा, सिलवट घड़या करीव।
कुदरिति की गति छाडि कर, पथर धोकै कीव।।

भावार्थ– सिलावटा पत्थर को तराशकर मूर्ति बनाता है और उसमें भगवान की कल्पना की जाती है। भगवान तो सृष्टि के कण–कण में विद्यमान है, उसे सर्वत्र व्याप्त न मानकर केवल मूर्ति में ही क्यों मान रहे हो?

सेन्या श्रीराम हणौ सांवता, फीरत नारद कलह फिरै।
दांणो सिर रांण करन दातारां, सरब हिंगाा गुरड़ सिरै।
चंद सीरि कला रहैण धू निहंचल, थलि संभरि केवल ग्यान थटै।
नावै हरि रिखा दुरभासा, वासा सिर हरि बैंकुंठै।

भावार्थ– श्रीराम की–सी सेना, हनुमत–सा वीर सरदार, नारद सरीखा झगड़ा करवाने वाला, रावण जैसा दानव, कर्ण समान दानी, गरुड़ जैसा पक्षी, चंद्रमा जैसी कला, ध्रुव जैसा अचल, समराथल जैसी कैवल्य ज्ञान की भूमि, हरि जैसा नाम, दुर्वासा जैसा ऋषि और हरिधाम बैकुंठ जैसा निवास दूसरा कोई और नहीं है।

जल की बूंद जिहान है, फल फल अंतरि फेर।
लोह तिरंतो दीठ मै, काठ संगीणी केर।।

भावार्थ– जल सभी पेड़ पौधों को एक समान ही पुष्टि प्रदान करता है परन्तु उनमें लगने वाला फल अलग–अलग गुण और स्वाद वाला होता है, यह सब संगति का फल है, जल तो वही है परन्तु विभिन्न प्रकार के संग के कारण भिन्न भिन्न रस रूपों में परिवर्तित हो जाता है। मैंने लोहे को लकड़ी के संग में पानी में तैरते हुए देखा है।

रति मति जगत सूं, अण रति हरि रति।
ताहै तपति न थिया, नांहि दुमति अपति।।

भावार्थ– जब तक संसार से प्रेम है भगवान से नहीं हो सकता, जो धर्म का दृढ़ता से पालन नहीं करता, जो नास्तिक ओर पापी है वह भगवद्प्रेम को नहीं पा सकता।

पथर ही का देहरा, मांहि ज पथर मांहि।
रिव का डेरा रूह विच, तासूं अन्तर नांहि।।

भावार्थ– मंदिर भी पत्थर का है और उसमें मूर्ति भी पत्थर की है, परमात्मा तो आत्मस्वरूप है, आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।

घरि ही हरि सुं हित लाय रहो, मन रे मत जाय भटकण कूं।
कण पाखो काम बे काम करै, थोथा झूर फटकण कूं।
भरम्यौ कुल काज अकाज करै, आयो है खरची खटंण कूं।
मनवा मत जाहि हुवो मतवालो, पर पाखंड थटंण कूं।।

भावार्थ– प्रतिपल भगवान में ध्यान लगा रहे ताकि मन को कही बाहर भटकने का अवसर ही न मिले। फालतू के काम क्यों करते हो, थोथा कचरा फटकने से अन्न नहीं मिलेगा। भ्रमित होकर अकर्म कर रहे हो, संसार में तो पुण्य कर्मों की कमाई करने के लिए आए हो। हे मन, तूं मतवाला मत बन, तूं क्यों पाखंड का प्रदर्शन कर रहा है।

करो काम जको गुर दखयो, गु वरजी सा न करि।
कलि राखी लाज कुल उजलै, कर जोड़ि वास वैकुण्ठ करि।।

भावार्थ– हमें वही काम करना है जो गुरु महाराज जाम्भोजी ने बताया है, जिसके लिए उन्होंने मना किया है वह हमें नहीं करना है। इस कलियुग में धर्म की मर्यादा रखने वाला अपने कुल का नाम रोशन करता है और बाद में उसे बैकुंठ धाम में वास मिलता है।

कहणी रहणी संमझणी, साध संझति का चीत।
सेवग मरणौ मुगति फल, जीवत मुकति अतीत।।

भावार्थ– मन, वचन ओर कर्म से जो एक समान और शुद्ध है उसे स्वभाव से साधु समझना चाहिए। सेवक (कर्मयोगी) को मरने पर मुक्ति मिलती है, विरक्त (ज्ञानयोगी) को जीवन–मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

करो कथ केवली, करो सत सील सुकरणी।
करो जीभ जीकार, करो उदिया घटि धरणि।।

भावार्थ– हमारे मुंह से सत्य, मधुर और दूसरे के प्रति आदरसूचक वचन ही निकले। हमारे कर्म सत्य और शील से संपोषित होकर सुकर्म बनें। हमारा हृदयाकाश प्रकाशित हो।

तन की भूख अलप है, तीन पाव कां सेर।
मंन की भूख अपार है, गीणत न मेर समेर।।

भावार्थ– शरीर की भूख को अधिक से अधिक तीन पाव अथवा तो एक सेर खाद्य पदार्थ से तृप्त किया जा सकता है परन्तु मन की तृष्णा तो सुमेरुपर्वत जितने पदार्थ मिल जाए तो भी मिटती नहीं है।

गरब नीच गुमान, ग्यांन गंगाजल मंडण।
गाढ़ो मन राखीयौ, गढ़ काया जस मंजण।।

भावार्थ– किसी पद प्रतिष्ठा और वस्तु का अहंकार नहीं करना चाहिए। ज्ञान गंगाजल के समान पवित्र करने वाला है जैसे शरीर नहाने से शुद्ध होता है ऐसे ही चंचलता त्यागकर स्थिर होने से मन पावन होता है।

जरणा ढ़ाकण जिंद, जिंद उजाल संभै जल।
जीवदया परम जीव, आदि जग हंत अचगल।।

भावार्थ– जीव को अपने काम–क्रोधादि शत्रुओं को वश में रखते हुए स्वानुभूति रूपी जल से अपने अंत:करण को उज्ज्वल करना चाहिए। जीवमात्र के प्रति की गई दया उस परमात्मा की परम सेवा है। आदिकाल से परमात्मा से बिछुड़े जीव का जब तक परमात्मा से पुनिर्मिलन नहीं होगा तब तक उसकी व्यथा नहीं मिटेगी।

अज व्याधि टलै जरीयै अजर, जम काल न चाहैस्यु जुरा।
जगति भंति रहै साख्यात जण, ज्याहा गुण जगदीस रा।।

भावार्थ– पवित्र अंत:करण की प्राप्ति में बाधक समस्त विकारों का शमन करने वाले साधक को बड़ी–बड़ी व्याधियाँ, यहाँ तक की यम, काल, जरावस्था का भी भय नहीं रहता। वह जगत को साक्षी भाव से देखता हुआ इसे जगदीश की लीला समझकर आनंदित रहता है।

छकी बैर कीयौ मंण छोत्य सूं, घटि हीण व्यलखो दिठ घरा।
छल राख्य पीये मत छूंतरा, छतै प्राण लगी छरा।।

भावार्थ– मलिनता और अपवित्रता से जब संग हो ता है तो बुद्धि हीन हो जाती है और अप्रिय ही प्रिय लगने लगता है। धर्म की मर्यादा रखते हुए अपेय पदार्थ नहीं पीना चाहिए, इससे प्राणशक्ति का नाश होता है और यश में कलंक लगता है।

न करि पाप निंद्या नहूं, ना नीपाप निरभै निडर।
निज नेह नोव गुरा दिस्य विनवणी, न पड़ि झूठ अहंकार नर।।

भावार्थ– किसी की निंदा करना पाप है इसलिए यह नहीं करनी चाहिए। पापी आदमी हर समय भयभीत रहता है, निष्पाप हुए बिना निर्भयता और निडरता नहीं आ सकती। अपने गुरु के प्रति श्रद्धा और प्रेम रखते हुए उन्होंने जो मुक्ति का मार्ग बताया है उस पर विनम्रतापूर्वक चलना चाहिए। इस संसार का समस्त ऐश्वर्य श्रणभंगुर और नाशवान है उसकी प्राप्ति का क्या अहंकार करना।

गोवरधन गाइयै, गति सेवा गुण दीजै।
ओगुण गुण कीजियै, गुणे ओगुण नहीं कीजै।।

भावार्थ– भगवान का भजन करना चाहिए। सेवा करने से सद्गति प्राप्त होती है। जो हमारा बुरा करता है उसका भी हमें भला करना चाहिए। हमारे प्रति किए गए किसी के उपकार को कभी भूलना नहीं चाहिए और ऐसे उपकारी का बुरा तो सोचना भी नहीं चाहिए।

झूठो मन पालीयै, साचि संार पतीजै।
झूठ घटै परतीति, साख्ये झूठी न दीजै।।

भावार्थ– झूठ की तरफ जाते मन को रोकना चाहिए। संसार में सत्य बोलने वाले का सब विश्वास करते हैं। झूठ से प्रमाणिकता नष्ट हो जाती है। कभी झूठी गवाही नहीं देनी चाहिए।

टलो तात्य पार की, टलो रिण चोर मंरता।
टलो वैर बंधवा, टलो अपराध कंरता।।

भावार्थ– बिना समुचित व्यवस्था के सागर पार जाना, किसी से कर्जा लेकर मुकरना, भाई–बंधुओं से वैर भाव रखना और किसी भी प्रकार के आपराधिक कृत्यों से बचना चाहिए।

खरो बैण व्योहार, खरो जग बंदण जचौ।
खरो सार उधरै, खरौ धन पुनि खरचौ।।

भावार्थ– अपने वचन और व्यवहार में सच्चाई रखनी चाहिए। अंत में सत्य की जीत होती है और सच्चा व्यक्ति ही संार में वंदनीय और शोभित होता है। धन वही सच्चा है जो पुण्य कार्यों में खर्च किया जाए।

खर नांव खटीजै, खरी बुधि छोडि खवारी।
खरो खोट न पड़ै, खोट टोटे क लिखवा री।।

भावार्थ– खरा (सत्य) तो भगवान का नाम है, उसका जप करो। खरी बुद्धि वही है जो असत्‌विचारों को त्याग देती है। खरे में कभी खोट (विकार) नहीं पड़ता और जो खोटा (नकली) है उससे टोटा (घाटा) ही होगा उससे कभी लाभ की आशा नहीं रखनी चाहिए।

टलो विकल कांमणी, टलो वणि सीह जहंता।
टलो रीस रहंता, टलो गजराज वहंता।।

भावार्थ– जो स्त्री आपके चरित्र को भ्रष्ट कर दे उससे दूर रहना चाहिए (ऐसा ही स्त्री का पुरुष के विषय में समझना चाहिए)। वन में जाते सिंह, अकारण आए क्रोध और उन्मुक्त हाथी से बचना चाहिए।

छीलर घर छडीयै, छोति घर पांव न दीजै।
छाके सुं यर संग छे, जाते तन छीजै।।

भावार्थ– नीची जगह का निवास छोड़ देना चाहिए, अपवित्रता वाले घर में नहीं जाना चाहिए। नशे से मित्रता करने पर यह शत्रु बनकर हमारे शरीर पर घात करेगा।

न करि ठाकर स्यूं वैर, पनंग स्यूं आलि न कीजै।
न करि चोर स्यूं संग, नांव का करो न लिजै।।

भावार्थ– अधिकार प्राप्त समर्थ सत्ता से वैर, सर्प से छेड़खानी, चोर का संग घाटे का घर है। अपनी शक्ति और सामर्थ्य को परहित में लगाना उचित है उसका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

छः तो वेर छः छडीयै, छः तो अहंकार न कीजै।
छीतै स्यूं व्योपार छोडि, बुधिनास न पीजै।।

भावार्थ– विनाशी से वैर, मोह और उसकी प्राप्ति का अहंकार नहीं करना चाहिए। कपटी से व्यापार–व्यवहार छोड़ देना चाहिए और तम्बाकू का सेवन कभी नहीं करना चाहिए।

न करि भेख सूं वाद, न करि नेह परनारी।
न करि सैण स्वप्न वैण, घसण स्यूं न करि यारी।।

भावार्थ– साधु से वाद–विवाद नहीं करना और परस्त्री में मातृभाव रखना चाहिए। अपने प्रिय से स्वप्न में भी बचनबद्ध नहीं होना चाहिए और कलहप्रिय व्यक्ति से मित्रता नहीं रखनी चाहिए।

तिल मात पढ़े तूं ही चूक, तूं ही तिल कोटि बगसै।
तुं ही करै रिछपाल, तुझ हित भुंच तरसै।।

भावार्थ– हे भगवन्! आप कितने दयालु हो कि मेरे थोड़े–से

पुण्यकर्म को बहुत अधिक मान लेते हो और मेरे करोड़ों गुनाहों को बहुत थोड़े–से मानकर माफ कर देते हो। आप पग–पग पर मेरी रक्षा करते हो। ऐसे अकारण करुणा करने वाले भगवान के अनुग्रह को अभिमानी मुर्ख नकार देते हैं और परम लाभ से वंचित रह जाते हैं।

झंखीयै ग्यांन आठौ पहर, झाले माला मेटि झल।
झण हरे वेद इमरत झुकै, बल हीणा हरि नांव बल।।

भावार्थ– लोग दिन–रात ज्ञानवार्ता में निमग्न रहते हैं, दु:ख संताप को दूर करने के हाथ में माला लेकर मंत्र–जाप करते हैं, अमृतवाणी समझकर वेदाध्ययन करते हैं परन्तु मेरे बलहीन का बल तो एक भगवान का नाम ही है।

ताव राखी गुर तेज, तकै मत घात पराई।
तिण वेला मत धीठ, दीठी ते पीठि पराई।।

भावार्थ– गुरु अपने तपोबल से शिष्य की रक्षा करता है। दूसरे के अनिष्ट की कामना कभी नहीं करें क्योंकि समय बदलते देर नहीं लगती, परपीड़न के लिए की गई धृष्टता आखिर में हमारे लिए अहितकारी होगी। दूसरे की पीठ (दोष) पर तो हमारी दृष्टि रहती है परन्तु अपनी पीठ (दोष) कोई नहीं देखता।

ठाहरे धरम हरि ठीक दे, ठाली घंट अनेक ठग।
ठीकरी रंग आना निवर, लाभै ठाहर जोत्य लग।।

भावार्थ– धार्मिक होने का पाखंड तो किया जा सकता है परन्तु भगवद्कृपा के बिना जीवन में धर्म की मर्यादा स्थाई रूप से टिक नहीं सकती। तत्त्व प्राप्ति के बिना मनुष्य जन्म बेकार है। आत्मज्ञान होने पर परमपद की प्राप्ति होती है।

टलि जो हि मतै गुर टेकते, टलो भेदागक्त अटल।
राखीयै टेक मोटा रसणी, छोटो टेक एकाल छल।।

भावार्थ– जिस कार्य के लिए गुरु आज्ञा नहीं है उसे मत करो। जो आपका भेद जानता है उससे बचो। समर्थ की शरण लेनी चाहिए, असमर्थ की शरण तो एक निश्चित धोखा है।

ढ़ील करो कूं कवै, ढ़ील करि क्यूं पड़ता।
ढ़ोले बाजे ढ़ील, ढ़ील संग आय पड़ंता।

भावार्थ– किसके भरोसे निश्चिंत होकर बैठे हो, भगवद भजन में देरी क्यों कर हो? प्रमादवश हुआ यह जीवन बहुत तेजी से जा रहा है। ढ़ील करी तो पुन: जन्म मरण के चक्र में आना पड़ेगा।

डरो साध वेद वा करो, गुर अकही कीजै।
डरो सिध फिटकार, डरो गुर लछण दीजै।।

भावार्थ– वेदोक्त परंपरा का सम्यक् रूप से पालन करने वाले तपोनिधि साधु का अपराध करने से डरो। समर्थ गुरु का सामर्थ्य अपरिमित होता है। अपनी साधना से सिद्ध हो चुके संतों की फटकार से बचो। गुरु प्रदत्त मार्ग का उल्लंघन करने में संकोच करो।

ढाहीये मन करतो अढंग, ढिग उभो दातार गुरु।
ढ़ीली करि बात वरजी तिका, ढ़हे पिंजर हरि भेदि सुर।।

भावार्थ– उपद्रवी मन को काबू में करना चाहिए। दीनदयाल दातार गुरु जाम्भोजी आपके साथ खड़े हैं। घटिया बात करने वाले को रोक देना चाहिए। शरीर विनष्ट होने से पहले–पहले भगवान की प्राप्ति का उपाय खोज कर अमर हो जाओ।

डर मूल तहां घर नाथ का, डर हीणा भै काल डरि।
डाकणी संत भूतेय डर, उरि लाधो हरि मुकति घरि।।

भावार्थ– अधर्मियों को डराने के लिए डर की उत्पत्ति भगवान से ही होती है और भगवद् शरणागति से निडरता आती है और ऐसे निडर शरणागत से भूतप्रेतादि तो क्या काल भी भय खाता है। हरि का निवास मुक्तिधाम अपने हृदय में हैं, खोज करने पर वह मिलता है।

ठीक हुआ सिध साध, ठीक कुल लाज सुधारै।
ठीक एक ठाहरै, ठीक मैइ तरे तारे।।

भावार्थ– वही साधु पूज्य है जो अपने तपोबल से परिपक्व होकर

सिद्ध हो गया है। वही ग्रहस्थ आदर्श है जिसने अपनी कुल की मर्यादा को उज्ज्वल किया है। वही मुमक्षु मानव धन्य है जिसकी अपने ईष्ट के प्रति अनन्य निष्ठा है और जो स्वयं भी मुक्ति प्राप्त करता है दूसरों के लिए भी मुक्तिदाता बन जाता है।

डरो भरम पाखंड, डरो परनारी परघरै।
डरो लोभ लालची, डाह मति चालि सभै डरै।।

भावार्थ– लोगों को भ्रमित करने व पाखंड फैलाने से डरना चाहिए क्योंकि यह सब भगवद्प्राप्ति के मार्ग से दूर ले जाते हैं। परस्त्री से कुभाव से संपर्क और दूसरे घर के निजी मामलों में अकारण हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। दूसरों का अहित करके स्वयं की स्वार्थपूर्ति हो ऐसे लोभ, लालच, ईष्या से सभी को बचना चाहिए।

थाकै प्यंजर थूल, देखि संसार विरचौ।
थोड़ी आसा काज्य, थूक मुखि अवगण रचौ।।

भावार्थ– यह नश्वर शरीर एक दिन जवाब दे देगा, देखना यह अपना लगने वाला संसार भी धोखा दे देगा। थोड़े–से जीवन और इसके सीमित–सी आवश्यकताएँ हैं, इसके लिए क्यों अवगुण धारण करते हो, इन्हें मुख से त्यागे हुए थूक के समान तज देना चाहिए।

ठीक मोटा मानवी, ठीक बोह ठाहर लसै।
ठीक ठाकुर रीझवै, ठीक मांनै नर सभै।।

भावार्थ– मनुष्य का बड़प्पन तभी है जब उसकी संगती ठीक है, मुखिया उस पर प्रसन्न है और दूसरे सभी लोग उसके सदाचार को हृदय से स्वीकार करते हैं।

एक मनी हो एक, एक आतमां विचारी।
एक नांव अलेख, एक नारी ब्रह्मचारी।।

भावार्थ– एक मन एक चित्त से भगवान का भजन करना चाहिए। यह गहनता से विचार करें की सभी जीवों में आत्मा के रूप में एक परमात्मा ही निवास करता है, कोई पराया नहीं है। अनंत नामों से पुकारे जाने वाले ईश्वर के

किसी एक नाम के प्रति अनन्य निष्ठा रखकर उसका जाप करना चाहिए। ग्रहस्थ आश्रम में रहकर अपनी धर्मपत्नी के अलावा स्त्री मात्र में मातृभाव रखने वाला ब्रह्मचारी ही है।

दाता तरवर देव, दीयै दुख सुख हुं परि।
दिहाड़ो कम देखि, दुखमति मांनि मया करि।।

भावार्थ– दाता तो वृक्ष के समान निष्कामभाव से उपकार करने वाला देवता है। किसी को दु:ख देने पर स्वयं के लिए सुख के दरवाजे बंद हो जाते हैं। जीवन बहुत थोड़े दिनों का है इसमें प्रारब्धवश अगर दु:ख प्राप्त होता है तो इसे दु:ख नहीं मानना चाहिए यह भगवान की कृपा ही है क्योंकि दु:ख में भगवान याद आते हैं। भगवद्स्मृति ही भगवद्प्राप्ति कराती है।

धीर रोस उपने, धीर गुर रोस करंता।
धीर तया मारता, धीर अपघात करंता।।

भावार्थ– स्वयं को किसी बात पर क्रोध आए, गुरु को हमारी किसी गलती पर क्रोध आए, स्त्री पर हाथ उठाते समय और कभी आत्महत्या करने का विचार आए तो ऐसे समय में जल्दबाजी में कदम न उठाकर धैर्याधारण करते हुए विवेकपूर्वक विचार करना चाहिए।

फल गालि मिटै हरि फंकतै, जीव दया जल एक फल।
फल कवल निरमल सुफल, फल गालि मांगि मुकति फल।।

भावार्थ– झूठ बोलने से जप का फल नष्ट होता है तथा कलंक लगता है। जीवदया का फल जीवन मो प्रदीप्त करता है। गर्भवास में भगवान से भजन करने का वादा किया था उसे निभाने का सुफल यह है की फिर बिन मांगी ही मुक्ति मिलेगी।

ताल रा छील ओछा मत क्य, तहां खोजी साधु तिरै।
तजिये देस वासो तिमर, तहां चालि भै उधरै।।

भावार्थ– बहुत कम पानी के छिछले तालाब को तैरकर पार करना असंभव है परन्तु उसमें भी तैराक तैर लेता है यानि संसार की प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मुमुक्षु साधक तत्त्वप्राप्ति का मार्ग खोज लेता है। जरामरण

आदि के डर और अज्ञानान्धकार से भरे इस देश को छोड़कर वहाँ चले जहाँ ऐसे भय का सर्वथा अभाव है।

पालिये चित परघरि पमडि, पढ़ीये केवल ग्यांन परि।
पल साधि हिरदै अग्याध पल, परम जोति परगास करि।।

भावार्थ– दूसरों के घर में कलह हो जाए ऐसी बात न करें। जो अविद्या के अंधकार को दूर करके हमारे विवेक को जाग्रत कर दे ऐसे कैवल्यज्ञान की प्राप्ति का उपाय करें। अगर हम मन को एकाग्र करने का अभ्यास करेंगे तो हृदय में परम ज्योति प्रकाशित हो जाएगी।

फलो सील संतोष, फलो सतिया पण सागै।
अफल गया अपराध, जेणि फल कदे न लागै।।

भावार्थ– जिसके जीवन में शील, संतोष और सत्य का प्रण है उसके कर्म शुभ फल प्रदान करते हैं। दूसरों को दु:ख देने वाले कर्मों का परिणाम हमारे लिए कभी सुखदायी नहीं हो सकता।

थकी जोति परगास, करो गुण लेपण थकै।
दीह चांदण थकै, थकै करि संबल माया।।

भावार्थ– संसार की माया बड़ी प्रबल है यह जीव को दिग्भ्रमित कर देती है परन्तु दिन का उजाला होने पर जैसे अंधेरा छंट जाता है ऐसे आत्मज्योति के प्रकाशित होने पर इस माया का अंधकार दूर भाग जाता है।

फलो सीख साधवां, फलो उपगार करंता।
फलो जाप जीवंता, फलो परकाज मरंता।।

भावार्थ– साधु पुरुष से उपदेश ग्रहण, परोपकार के कार्य, भगवद्नाम जप और परहित के लिए जीवन समर्पण ये कर्म शीघ्र फलदायी होते हैं।

दिन रात मती दुतिया म गणि,दिल उभो दातार गुर।
दिब सीझ मी चंद हु पख में, देह पड़ी मिल्यदेव सुर।।

भावार्थ– दिनरात दुविधा में क्यों रहते हो, इस संशय का निवारण

करो, कृपा करने वाले गुरु भगवान जाम्भोजी हृदय में प्रत्यक्ष प्रकट है। इस देह में दिव्य आत्मा ही हमारा मूल स्वरूप है, ज्ञान की परिपक्कवता से इसकी अनुभूति होती है तथा देहपात होने पर वह आत्मा देवताओं से मिल जाती है।

दया मूल दुनी, देव पूजा गुण दीजै।
दीजै दान सुपात, दान उतपात न दीजै।।

भावार्थ– दुनियां में धर्म का मूल दया है। भगवान का भावपूर्वक स्तुतिगान करना चाहिए। दान सुपात्र को ही देना चाहिए, जो दान का दुरुपयोग करता है उसे दान कभी नहीं देना चाहिए।

थल चूक पड़ै काया अथिर, थकै प्राण वाखाण थिर।
थापना जम्भ आदेस गुरस्य महल, करि कुरबाण सिर।।

भावार्थ– एक दिन यह शरीर निस्तेज होकर भूमि पर गिर जाएगा, प्राणों के रहते ही इसकी महिमा है। इस शरीर की यही सार्थकता है की गुरु जाम्भोजी ने जिस धर्म की संस्थापना की है उसका पालन करते हुए इस शरीर को कुर्बान करना पड़े तो यह सौभाग्य ही है।

पालि भरम पाखंड, पालि कुल वैर पडंतौ।
पालि वाद बधंवा, पालि अहंकार चडंतौ।।

भावार्थ– अपने धर्म पर दृढ़ विश्वास रखते हुए न तो स्वयं भ्रमित हो और न किसी प्रकार का पाखंड करके दूसरों को भ्रमित करने का अपराध करें। अपने कुल में वैरभाव और अपने भाई बंधुओं से वादविवाद पैदा हो ऐसा कार्य कभी नहीं करना चाहिए। संसारिक वैभव प्राप्त होने पर इसे क्षणभंगुर और विनाशी मानकर अहंकार न करें।

पालि मीत पोसती, पालि दासी परनारी।
पालि ताति पारकी, पालि वेस्या पड़ि सारि।।

भावार्थ– नशेड़ी से मित्रता, परस्त्री से सेवा, पराई निंदा तथा जो अपने शीलधर्म को खंडित कर दे ऐसी स्त्री (तथा स्त्री के लिए पुरुष) के प्रपंच से बचना चाहिए।

बलि राव गयो तजि बांह, बलि छलियो एकाल छल।
बल मूक तको गुर बांह बल, बल हीणा हरि नांव बलि।।

भावार्थ– राजा बलि ने गुरु आज्ञा का उल्लंघन किया तो जो गुरुतत्त्व का मूल था उसने बलि का त्याग करके उसे बलहीन कर दिया। बलि के साथ बहुत बड़ा छल हुआ परन्तु बलि अपने प्रण पर अडिग रहे और भगवान ने उन्हें कसौटी पर कसते हुए अमरपद प्रदान किया। बलहीन का एक ही बल है– हरिनाम।

लोका सरसी लाज, लाज मोटी गुर लेखै।
लागै चित अलेख, दुख सांमो नहीं देखै।।

भावार्थ– लोकलाज और गुरु प्रदत्त मर्यादा की धर्मलाज हमें निषिद्ध कर्म करने से रोकती है। जिनका चित्त भगवान में लग जाता है उनके द्वारा निषिद्ध कर्मों की सब संभावनाएँ समाप्त हो जाती है, दु:ख ऐसे साधक के सामने दिखने की भी हिम्मत नहीं करता।

बलि फटा गोरंभ, गए जल बलि रसातल।
बलि बंधी मेदनी, मरे तिणि बीज किसो बल।।

भावार्थ– धरती फटी और राजा बलि पताललोक में चले गए। संपूर्ण धरती पर बलि का अधिकार था परन्तु पलक झपकते ही पराभूत हो गए कोई बल काम नहीं आया।।

माया अवगण मेटि, मांण तजि मीत चितारसि।
मात पिता मरजाद, आप मरि अवर न मारसि।।

भावार्थ– माया अवगुणों की खान है और अहंकार मतिभ्रम करता है इनके परित्याग के बाद अपने सच्चे साथी भगवान की याद आती है। परहित के लिए स्व को स्वाहा करने वाला अपनी कुल परम्परा को उज्ज्वल करता है।

राखीयै धरम लज्जा रहै, रछया करि पर जीव री।
वीछड़े रोर मोटी जित्य, सेरी लाधी सीव री।।

भावार्थ– धर्म की रक्षा करने पर धर्म हमारी रक्षा करता है (धर्मो

रक्षति रक्षित:)। परोपकार सबसे बड़ा धर्म है, यह हमारे सब कष्टों का निवारण करके हमें बहुत बड़ी उपलब्धि करवा देता है, यह ईश्वर प्राप्ति का सुगम मार्ग है।

मन सुधि मिल्यौ ममता करि, मोहि ले ठाकुर हाथि मति।
मेटियै मन राजा मछर, मानिखा देह छूटि मुकति।।

भावार्थ– मन को सचेत रखो यह विषयों से ममता रखता है। संसार में इतना मोह न करें की भगवान को ही भूल जाएँ। जगत सब जगदीश का रूप है ऐसा समझकर हम मन में किसी से द्वेषभाव नहीं रखेंगे तो यह देह छूटने पर मुक्ति निश्चित है।

संभार स बोलयो, रीत्य भंगै रंग सारै।
रीत्य भांति राखीयै, चित हरि नांव चितारै।।

भावार्थ– वाणी सोच विचार कर बोलनी चाहिए। मर्यादा छोड़कर प्राप्त किया हुआ सुख किस काम का है। परम्परा से प्राप्त मर्यादा का पालन करते हुए चित्त में भगवदस्मृति रखनी चाहिए।

सदा ग्यांन गुण गोठि, सदा निज नांव सुंणीजै।
सदा धरम आचरे, सदा सत भांति सुधारण।।

भावार्थ– सदैव ज्ञानवान लोगों की गोष्ठी में बैठने, कानों से भगवद्नाम उच्चारण सुनने, जीवन में धर्माचरण करने और सत्य पर दृढ़ रहने से जीव का उद्धार हो जाता है।

सदा सील संतोष, सदा सुरवांणी सुमति।
सदा साध मंडली, सदा सोभा गुण गति।।

भावार्थ– शीलवान, संतोषी, सुसंस्कृत बुद्धिमान और साधुसंग वाले गुणवान की सदैव शोभा होती है।

विलंब काम दल कोप, विलंब अपराध करंता।
विलंब बात पर ताप्य, विलंब करि क्रोध करंता।।

भावार्थ– जब कभी काम-क्रोध का वेग आए, कोई अपराध होने

का अवसर उपस्थित हो और किसी को पीड़ित करने वाली बात कहनी हो तब ऐसे कार्यो को तुरंत न करके थोड़ा विलंब कर देना चाहिए क्योंकि वह आवेग कुछ ही पल का होता है।

लह प्राण गति हु तीया लछण, पूजा केवल साधि पगि।
लीजीये सत सेवग लभ, लाभै जोति अकास लगि।।

भावार्थ– जिन्होंने योगाभ्यास से प्राणों की त्रिपथगा गति का संधान कर लिया है, कैवल्यज्ञानी महापुरुष जिनके गुरु है और भगवद्प्रेमी जनों का जो संग करता है, उसकी परमात्मप्राप्ति निश्चित है।

रजा मांगि चालीयै, रीति बैसि कुल कीयौ।
रे कारो छडिये, राज बांणी जग रीझै।।

भावार्थ– सदा धर्म की मर्यादा में ही चलना चाहिए। अपने कुल की उत्तम रीति का कभी त्याग नहीं करना चाहिए। अशिष्टता पूर्वक किसी को संबोधित नहीं करना चाहिए, सभ्य वाणी बोलने से दुनियां मुग्ध हो जाती है।

लीह मारग चालीये, लाभ निज नांव नीपजै।
लेखो सुधि कीयै, लाज आपो नहि लीजै।।

भावार्थ– सदैव सन्मार्ग पर चलें, भगवद्नाम जप करने में अनंत गुण है। विवेकपूर्वक अपने कर्मों का हिसाब रखें, कोई ऐसा कार्य न करें जो हमारी प्रतिष्ठा को धूमिल कर दे।

भेख देख भव लेख, मान्य आयो मह मजण।
भाय भाय गुर सेव, आप भंजि अवरे भंजण।।

भावार्थ– जिसका भाग्य अच्छा होता है उसे साधुवेश मिलता है, ऐसे अहंशून्य, पवित्र अंत:करण वाले गुरु की भावपूर्ण की गई सेवा से उनकी कृपा प्राप्त होती है। वह अपने भवबंधन तो काटता ही है। अपने आश्रित को भी पार उतार देता है।

भला साथि जांचीयै, आप कीजै भलीयाण।
भाव सरसा भेट, भेट दीजै सैणायण।।

भावार्थ– मित्र जांच परख कर बनाना चाहिए। हम दूसरों के प्रति भलाई का भाव रखेंगे तो हमारे भाव के अनुसार हमें अच्छे मित्र भी प्राप्त होंगे। मित्र बनाने के बाद मैत्रीधर्म का निभाना चाहिए।

दुनिया नवमी माली विसन, पान कली जड़ि पाल्यसि।
चिंता न करि निचंत रह, सीचंणहार संभाल्यसी।

भावार्थ– दुनियाँ रुपी इस बगिया के बेल-बूटो को पालने वाले विष्णु भगवान को मैं नमन करता हूँ। इस दुनियाँ का पालनहार हमारी भी सुध लेगा, इसलिए चिंता न करके निश्चिंत रहो।

सीध रूप संसार, घट हुझ मै न घटै।
घटीरण्य गोम्यद, उद अंधीयार पलटै।

भावार्थ– यह संसार भगवान का साकार रुप है परन्तु अज्ञानवश हमारे अन्त:करण में इसकी प्रतीति नहीं होती, भगवान हमारे घट में बसते हैं यह बोध हो जाए तो सब अज्ञानान्धकार मिट जाता है।

विसन गांव सुचि साच, घटता अवगण घटै।
खीमा दया दीढ़ जोग, पाप कुल साख्य पलटै।।

भावार्थ– विष्णु का नाम ही सत्य और पावन है, इसका जप करने से हमारे सब अवगुण मिट जाते हैं और अंत:करण निर्मल हो जाता हैं तथा दूसरों के दोष-अपराध को क्षमा करने और मन में दया भाव रखने से हमारे पापों का प्रलय हो जाता है।

सुखदेव सांच मोटो सुमति, साधा पति लाधो सीरि।
संसारि सोभि लाभै सुरग, सुरजन सेवा स्याम री।।

भावार्थ– कृष्णद्वैपायन महामुनिंद्र सुखदेवजी के समान परम ज्ञानवान गुरु मुझे मिल गया है, जो संत शिरोमणि है। ऐसे गुरु का सांनिध्य पाकर संसार में तो शोभा होती ही है तथा मरणोपरांत परमगति भी मिलती है और भगवान की सेवा के लिए उनका निजधाम मिलता है।

परहरी कुपरि पर उपजी, सो सर पहता एण्य सरि।
करतार कीरति क्यतनी करूं, सुरजन सीध बखाण करि।।

भावार्थ– दूसरों के प्रति जो दोषभाव की दृष्टि का परित्याग कर देता है वह परमधाम पहुंच जाता है। भगवान के अनंत गुण है, सुरजनदासजी कहते हैं की मैंने अपनी मति अनुसार बखान किया है।

भेदा न भेद भौं भंज्यवा, भ्रम क्रम छुटि कजा।
जग्य प्रगट झांभौ जती, ध्रम तंणी बंधी भजा।।

भावार्थ– द्वैत-अद्वैत आदि सभी मतों का सांमजस्य करते हुए एक नवीन सर्वहितकारी पंथा को प्रकट करनेवाले गुरु जाम्भोजी ने धर्म की ऐसी ध्वजा फहरा दी है की उसको धारण करने वालों का भवभय, भ्रम और सब दूषित कर्मों का दुर्भाग्य मिट गया।

माता औदरि आय कहो, किण्य आरंभ कीद्यौ।
कीड़ी चावल कंठि, दइ बिच्य पथर दीधौ।।

भावार्थ– माता के गर्भ में पोषण करने वाले और पत्थर के अंदर चिंटी को चावल पहुँचाने वाले भगवान के रहते चिंता करने वाले नर अभागे हैं।

जे तो जामै अंकुर, तांम कुंण भंजण हारौ।
पुरण हार सपुर, दइ हरि दास तुम्हारौ।।

भावार्थ– जो सृष्टि की रचना करता है उस सृजनहार का विनाश कौन कर सकता है, वह सर्वशक्तिमान है। ऐसे हरि का मैं दास हूँ।

पिता पुत छडीयौ, नेह छोडै वर नारी।
मात पुत नै मेहल्य, नेह तुटौ संसारी।
पुत मीत परवार, तजे घर म्यदर छाया।
मोह मांण छडीयौ, प्राण हंम छडि स काया।।

भावार्थ– जब प्राण इस काया से विलग हो जाएंगे तो माता, पिता, पत्नी, पुत्र, मित्र, परिवार, घर, महल, मोह, अभिमान और संसार का स्नेह सब छूट जाएंगे। इसलिए स्वस्थ शरीर और प्राणों के रहते-रहते अपने कल्याण का उपाय कर लेना चाहिए।

थरहरयौ हंस कायर थीयौ, खता वार लागी खर।
तेण्य वार काम तो सुं पड़्यौ, सांर पधारयौ साथर।।

भावार्थ– जीव जब इस संसार से प्रस्थान करता है तो डर के मारे काँपने लगता है, उसकी कोई सहायता नहीं करता उसके साथ बहुत बड़ा धोखा होता है। जब-जब संसार को काम पड़ा वह उसके साथ गया था परन्तु आज जब वह मुसीबत में है तो काई साथ नहीं दे रहा है।

जीव विलुधौ जांम, तांम जाय चिंता लगौ।
कह सुरजन कथा, हंस हरि डोरी विलगौ।
प्रजले जाल पारध डसै, धार अमी मुख घात मां।
राख्यसी सोय लज्या रहै, कांय अधीरौ आतमां।।

भावार्थ– जीव संसार की माया से मोहित हो गया है, यही चिंता का विषय है। सुरजनजी कहते हैं कि जीव की यह दशा हरि से विमुख होने पर हुई है। इस संसार में काल रूपी शिकारी ने चारों तरफ जाल बिछा रखा है परन्तु जिनके मुख में हरिनाम रूपी अमृत है उनके सामने काल और उसका जाल दोनों जलकर भस्म हो जाते हैं। हमारी लाज हरि रखेगा उसके रहते जीवात्मा को अधीर नहीं होना चाहिए।

इंद गए के लख, कोड़ि के दत स्यंघारे।
पिलब गए पति साहा, पदंम के लोक पधारे।
ऊँच नीच अवतार, छाडिग्या वेद भणंता।
भंज्यग्यौ लोक चवरा भुवंण, कौन जाय पुठी करण।
सुरेजन साथ छाडि स नहीं, भगति एक तारण तरण।।

भावार्थ– लाखों इंद्र चले गए, करोड़ों दैत्यों का संहार हो गया, बड़े-बड़े चक्रवर्ती सम्राट मिट गए, पदम की संख्या में लोक यहाँ से पधार गए। छोटे-बड़े अवतार जिन्हें संसार पूजता था, पुराणों के मर्मज्ञ पंडित और वेदों के ज्ञाता भी चले गए। चौदह लोक भी एक दिन नष्ट हो जाते हैं, इन सबकी गिणती कौन करे। सुरजनजी कहते हैं की एक भगवान की भक्ति जीव का साथ नहीं छोड़ती और वह उसे तार देती है।

रही बस्य भारयज, अन रहीयो अर गाहे।
पिता पुत छडीयो, माल रहीयो धर माहे।
मीत पुत ओ लज, लज परहाथ्य उलजे।
रुले हाड एकल, गीध खाधौ स्वावजे।
गति रही भंति पड़ीयौ अगति, चरण बंध कंध चड़ै।
तीण्य वार लार सीरय धुड़ी दे, प्रति हंस दोजक्य पड़ै।।

भावार्थ– वचनवश नारी, भरपूर अन्न भंडार, धरती में छुपाया हुआ धन, पिता, पुत्र सभी को एक दिन छोड़ना पड़ेगा। पुत्र और मित्रों से जो आदर मिलता था वह पराया हो जाएगा। जंगल में फैंकने पर गीध, सियारों के खाने को बची हुई हड्डियाँ वहीं ठोकरें खाती रहेगी। ईश्वर का अंश यह जीव जो परमगति का अधिकारी था वह अपने कर्मों से दुर्गति को प्राप्त होकर नरकों में जाता है। अपने कहने वाले लोग ही पैर बांधकर कंधे पर उठा ले जाकर गड्ढे में डालते हैं और सिर पर तीन बार धूल डालकर घर लौट आते हैं। जरा सोचो यहाँ अपना कौन है।

नं क्यौ आप कीरतै, नं क्यौ परवार वडाइ।
नं क्यौ मात पीतीय, नं क्यौ भली पातंण भाइ।
नं क्यौ आथ्य संचीय, क्यौ घर साह कहाय।
नं क्यौ राजा बीजीय, नं क्यौ सीर छत्र धराय।
गुरमुखी दान सहजा गवण, कंण गरीबी हाथि करि।
सुरेजन जगत साथी नहीं, हुव संगाती नांव हरि।

भावार्थ– भले ही क्यों न अपने प्रताप से यश प्राप्त किया हो अथवा कुल की कीर्ति हो, घर में माता-पिता, शुभेच्छु भाई, धन-धान्य, चौधर हो। भले ही क्यों न राजा से मित्रता हो अथवा स्वयं ही राजा बन जाए। सुरजनजी कहते हैं कि जगत में अपना कोई साथी नहीं है, सच्चा साथी तो केवल भगवान का नाम है। गुरुमुखी दान, सहज रहनी और दीनों पर दया कल्याण हेतु है।

रतन विसन को नांव, दुलभ संसारि उदाधी।

मिठुजी

कुंण तारे मो कूं कुंण तारे, बिना गुरु जम्भ कहो कुंण तारे।
काल के ग्राह चहुं ओर घेरया फिरै, महा अतिबल तिस कूं नै टारे।
कहै मिठू विरद की लाज मोटा धणी, करि छिन पार नहीं लगै वारै।

भावार्थ– हे भगवान जाम्भोजी! आपके बिना मुझे तारने वाला और कोई नहीं है। काल रूपी ग्राह ने मुझे चारों ओर से घेर रखा है जो बहुत बलवान है, उससे बचना असम्भव है। तारणहार के रूप में आपकी ख्याति है, अपने इस नाम को सार्थक कीजिए और बिना एक पल की देरी किए भवसागर में डूबते मुझको पार उतारिए।

माटी के काढे बिन जनम इक्यारथ,
संभर के धोके बिन भार सिर भारी है।
सोहत अनंत मूरत गुर झंभ हूं की,
दरसण कै देष्य स्यै पाप खवारी है।
सबदन की धुन सुन मुनियन के मन मोहे,
पद पंकज कै परस स्यै को निसतारी है।

भावार्थ–जाम्भाणी पंथ में जन्म लेकर जाम्भोलाव जाकर मिट्टी नहीं निकाली तो जन्म व्यर्थ है, समराथल पर मस्तक नवाये बिना सिर पर रखी पापों की भारी गठरी नीचे कैसे गिरेगी, मूकाम में तो प्रत्यक्ष ही गुरु जाम्भोजी विराज रहे हैं उनके दर्शन करने से सभी पाप जलकर भस्म हो जाते हैं। गुरु जाम्भोजी के सबदों का जहां गायन होता है वहां ऋषि मुनि भी मग्न हो जाते हैं, उनके चरणों की वंदना करने से सभी भ्रमों का निवारण होकर मुक्ति मिलती है।

माखनजी

अवगतिनाथ अजोध्या के पति, तुम ही व्रजपति नंद कंवारा।
अब समराथल आए स्वामी, नवखंड पृथ्वी खेल पसारा।।

भावार्थ– अयोध्या पति श्रीराम तथा व्रजपति नंद कुमार श्रीकृष्ण ही इस बार समराथल पर आए हैं, वे इस पृथ्वी पर सम्पूर्ण सृष्टि के अधिष्ठाता हैं।

रामूजी खोड़

मेळो गुर पहळाद सूं, मेळो हरिचंद राय।
मेळो पांचे पांडवे, धन्य कुंतां दे माय।
जांही वाह्यौ तां लुंण्यौ, सुपंन सुवाया खेत।
म्हे सींवरां साचौ सांम्य नै, म्हारो झांभैजी सूं हेत।

भावार्थ–गुरु प्रहलादजी, राजा हरिश्चंद्र, पांचों पांडवों और जिसकी कोख से जन्म लेकर पांडव धन्य हुए ऐसी कुंती माता से मिलन होगा। जिसने जैसा बोया है वह वैसा ही काटेगा, कर्म सिद्धांत अटल है, शुद्ध अंत:करण रूपी खेत में ही पवित्र कर्मों की फसल उपजती है। हम तो अनंतगुणशाली भगवान का स्मरण करते हैं, हमारा गुरु जाम्भोजी से प्रेम और स्नेह का संबंध है।

रूपोजी बणियाल

जंभ गुरु दातार मेरा, मो पर कृपा कीजियै।
तुम दया करो दयाल, अब अपणां कर लीजियै।
जम सैं डरपै जीव, थरहर कंपै प्रांणियों।
विष्णु तणां अवतार, मैं मुरख नहीं जांणियों।

भावार्थ– गुरु जाम्भोजी आप परम कृपालु हो मुझ पर कृपा करो, दया करो हे दीनदयालु, मुझे अपने शरण में ले लो। यमराज के भय से जीव डरते हुए थर-थर कांपते हैं, उस त्रास का निवारण आप ही कर सकते हो। आप साक्षात विष्णु के अवतार हैं, मैं मुर्ख आपको पहचान नहीं पाया।

दामोजी

कहि नारांयण नांव, सांव सतगुर की आयौ।
दीन्ही मिनखा देह, जलम उतिम घर पायौ।।
परहरि कुल की कांणि, जांणि जगदीश चितारे।
जीती सार न हारि, जाप करि जलंम सुधारे।।
हळवी बात हरांम तजि, धरणिधर सूं ध्यांन धरि।
मोसरि मिनषा देह कै, इणि अवसर उपगार करि।।

भावार्थ–पूर्व के किसी कर्म, भगवन्नाम स्मरण और सतगुरु की कृपा से ही यह मानव का शरीर और ऐसे उत्तम घर में जन्म मिला है। कुल की लोकलाज की परवाह न करके भगवान के भजन में लग जाओ। कहीं जीती हुई बाजी हार न जाएं इसलिए अहर्निश जप करके अपने जन्म को सुधार लो। ओछी बात और हराम की कमाई का त्याग कर देना चाहिए। भगवान का अटल ध्यान करो, मनुष्य जन्म का यह शुभ अवसर है इसका लाभ ले लेना चाहिए।

सरंणि तुमारी सांम्य, राषि प्रतंग्या पाळौ।
दुत दया करि पाल्य, सदा संनमुषि न्हाळौ।
अरि को डर आसान्य करि, तारि मया करि महमहंण।
मो सीरि छाया छाप की, पंथ प्रतंग्या राषि पंण।

भावार्थ– भगवन, मैं आपकी शरण हूँ, शरणागत की रक्षा का आपने जो प्रण ले रखा उसका आप पालन किजिए। आपने माया के आवरण में जो अपने को छिपा रखा है उसे हटाकर दया करके सन्मुख प्रकट होइये। मेरे विषय विकार रूपी शत्रुओं का नाश करके मुझे कृपा करके तार दीजिए। मैंने पंथ (बिश्नोई) में जन्म लिया है और आप इस पंथ में जन्म लेने वालों पर कृपा करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध है।

जुरा पहुंती जाण्य, मांण घर छाडि पधारयौ।
तांण तज्यौ तिणवार, हेत हुरमति सह हारयौ।
जदि जोबंन थो जोरि, आव को धरयौ उभारौ।
वीचि गई नर वार, हुवौ अंगि अषत उवारौ।
बालपंणै बुझौ नहीं, पुषतो ही पोह पुछै लहि।
चेतंन होय चौथी वही, नर हूं सेई हरि नांव कहि।

भावार्थ–बुढापा आ पहुंचा है, स्वाभिमान घर छोड़कर चला गया है, शक्ति ने तिणके के समान त्याग दिया है, प्रेम और इज्जत सब हार गई है। जब युवावस्था का जोर था तब जोश उफान पर था, वह उमंग का समय बीत गया, अब तो इस शरीर से वियोग का निश्चित दिन नजदीक आ रहा है। बालपन में

तो समझ नहीं थी विवेक होता तो निश्चय ही तत्त्वप्राप्ति का मार्ग पूछता। अब तो सावचेत हो जा, जीवन की चौथी अवस्था आ गई है, मनुष्य का जन्म मिला है भगवान का भजन कर।

देवोजी

सतगुर आयौ रळिए रळिए, कुंण नेम ध्रंम कियौ आं थळिए।
हिरणाकस मारि पहळाद उबारे, अपणै जंन का कारज सारे।
रावंण मारि बभीछंण थापे, सोई गुर आयौ आपे आपे।
नीबेइ नाळेर आकेइ आंबा, तह विण कूंण करै देव झांभा।
देवौ कहै देवजी मैं अबकै पाए, अवर जळंम फिरि वाद गुमांए।

भावार्थ–सतगुरु जाम्भोजी समराथल पर रमण करने के लिए नहीं आते तो यहां नियम–धर्म का उपदेश कौन करता। आपने सतयुग में हिरण्यकश्यप को मारकर अपने जन प्रहलाद को उबार लिया और उसके समस्त कार्यों को पूरा किया। त्रेतायुग में रावण को मारकर विभिषण को लंका देने वाले ही गुरु जाम्भोजी के रूप में आए हैं। नीम के नारियल और आक के आम गुरु देव जाम्भोजी के बिना कौन लगा सकता है। देवोजी कहते हैं की हे देवजी, हम आपको पाकर कृतार्थ हो गए हैं, अब जन्म–मरण के फंद कट गए हैं।

हरिनन्दजी

सांतलि सीष सुणी सतगुर की, ऊंच पदवी मन मांनी।
नरपत नहचौ सूं निसतरियौ, हुयग्यौ सील सिनांनी।
सांगै रांणै सतगुर औळषियौ, चित चोषै चीतोड़ी।
झाली रांणी जगत पिछांणी, तन की तिरसनां तोड़ी।
जैसलमेर जगत सोह जाणै, रावळ नै परचायौ।
काचो कळस कियौ महमांणी, सतगुर सरणैं आयो।

भावार्थ– राव सांतल ने गुरु जाम्भोजी की आज्ञा को माना और मनमांगा ऊंचा पद(राजा) प्राप्त किया, राजा के दृढ़ विश्वास से ही यह संभव

हुआ, वह शीलवान और सिनानी बन गया। सांगा राणा ने गुरु जाम्भोजी को पहचान लिया, चितौड़ी का चित्त आनंद से भर गया। झाली रानी ने उपदेश सुनकर संसार की नश्वरता को जान लिया और जीवनमुक्ति प्राप्त की। जैसलमेर के रावल जेतसी के आग्रह पर गुरु जाम्भोजी वहां गए थे और रावल पर कृपा की थी इस बात को सारा जगत जानता है। रावल सतगुरु की शरण आए और अपना सर्वस्व उनके आतिथ्य में समर्पित कर दिया।

गोकलजी

दु:ख में सुख में सुख राखि इसी, नित प्रीत सदा जल मीन जीसी।
जगदीश विरख रिख पात कली, रिख तोरा मान जिसा मछली।

भावार्थ– प्रत्येक परिस्थिति में साधक प्रसन्न रहता है, उसकी भगवान में अनन्याश्रिता ऐसी होती है जैसी मछली की जल के प्रति होती है। भगवान वृक्ष है तो उसके साधक पत्ते और कलियां है।

तव कीति स मोर झंगौर करैं, घन बूठां तूठां दोष हरैं।
सुष सारंग स्वांति जिसी पपियै, मुषि मीठी बांणी सदा जपियै।
उर अंतर जांण बषांण जिसौ, परभू परवाड़े पार किसौ।
करता कवि केती सोभ करै, तो तूठै त्रीकम सरै।

भावार्थ–बादलों को देखकर मोर आनंदित होकर नाचने लगते हैं तो बादल भी बरसकर उसकी इच्छा पूर्ण करते हैं। पपीहा केवल स्वाति नक्षत्र को बरसने वाला जल ही पीता है, इन पक्षियों की तरह अनन्य प्रेमी बनकर इनकी जैसी मीठी वाणी में अपने प्रियतम परमात्मा को भजो। जैसा अंतर्मन का भाव होता है वैसा ही भजन होता और वैसा ही फल प्राप्त होता है। भगवान के शक्तिशाली चरित्रों का पार नहीं पाया जा सकता। कवि कहता है मैं कहाँ तक आपकी महिमा का गान करूं, आपके प्रसन्न होने पर सब कार्य संपन्न हो जाते हैं।

आंन भर्म अभिमांन म्हेलि अहंकार अलगो।
अलष तंणी धरि आस हेत हरि डोरि विलगो।
सिंवरियै सांम संभू सरण विषंम बाट भौ जळ तरूं।
केवळीनाथ कृपा करौ हूं वोट तुम्हारी ऊबरूं।

भावार्थ–अन्याश्र, भ्रम, अभिमान, अहंकार को अलग रख दो और भगवान के बल का भरोसा रखकर उनसे प्रेम का संबंध स्थापित करो। स्वयंभू परमात्मा के शरणागत होकर उनका स्मरण करेंगें तो वे भवजल जैसी विषम बाधाओं को दूर कर देंगे। कैवल्य ज्ञान प्रदान करने वाले(गुरु जाम्भोजी) कृपा करो, आपकी ओट लेकर मेरा उद्धार हो जाए।

करो हरि जाप तरै तेतीस, मिल्यौ अवतार विसोवा वीस।
सुंणीं सत वात कथूं करतार, त्रिकम तोरा पार अपार।

भावार्थ–भगवन्नाम जप करो, क्योंकि पहले तैतीस करोड़ भी भगवान का नाम स्मरण करके ही तरे थे। हमें पूर्ण अवतार (गुरु जाम्भोजी) मिले हैं। मैंने ये सब सत्य बातें सुनी है तभी मैं भगवान की महिमा का बखान कर रहा हूँ। हे भगवन, आपकी शक्ति का पार नहीं पाया जा सकता, वह अपार है।

खड़ग धारा खेल मांडियो, और आपो मारियो।
ग्यान गुरु के ध्यान धरीयो, परभु पंथ कुं सारियो।
करता करै ज सार, राज करै कुफरांणा।
हरिजन पहुंतौ पार, विधि सूं बात बखांणा।

भावार्थ–सब तलवार की धार पर चल रहे हैं, शरीर और संसार के साथ संबंध समाप्त करके सब अहं शून्य हो गए हैं। गुरु जाम्भोजी ने जो उपदेश दिया था वह हृदय में धारण कर रखा है। यह भगवान का पंथ है, इस पर चलना हमारा परम कर्तव्य है। राज चाहे कितनी भी जोर जबरदस्ती करे, परमात्मा सहाय करेगा। भगवान के प्रिय जन पार पहुँचते हैं, यह मैं सत्य बात कहता हूँ।

विरष पड़िया, रिष षड़िया, पंथ की पारिष पड़ी।
तागाळा सों तेग बांधी, हाकिम नै हतिया चड़ी।
हतिया करै हैरान, कुबधी कुबध कमाई।
चेले रे मन ओर, चोगस चाल चलाई।

भावार्थ–वृक्ष तो सुरक्षित बच गए परन्तु ऋषि सदृश लोगों ने बलिदान दे दिया। बलिदानियों के सिर तलवार से काट दिए गए, हाकम हत्यारा हो गया। यह हत्या हैरान करने वाली है, धुर्त ने चालकी की है। मंत्री के मन में कपट है उसने बहुत सोच–समझकर चाल चली है।

बात बखांणा सत जाणां, पण राखो पूरा धणी।
पापीयां नै तुरंत पहुंचो, तागाळा तीखी अणी।
अणी तीखी सुरंगी सर पर, तके आखर क्युं ओसरै।
पांछा खिसियां तो पण घटे, तंत लिया तागा करै।

भावार्थ–यह सत्य बात है। हे भगवन, आप हमारे प्रण की रक्षा करो। पापीयों तक यह संदेश पहुंच जाए की तागाळा (बलिदानियों) ने तलवार की धार पर चलने का संकल्प कर लिया है। यह तीखी तलवार ही अब हमारे शीश की शोभा होगी, इस सुदुर्लभ अवसर को अब हम नहीं छोड़ेंगे। पीछे हटने पर प्रण का मान घटेगा, अब तो निश्चय कर लिया है की बलिदान ही करेंगे ।

तागो तो करस्यां नहीं डरस्यां, ध्यान मन ऐसो धरो।
मान तज्या क्यूं मान रयसी, सिर सुंपां साको करो।
कीयो साको हुयो साकत, भड़क भड़वो भाजसी।
सार वयसी सीस पड़सी, लांणतीया तद लाजसी।

भावार्थ– अब डरेंगे नहीं, बलिदान करेंगे, मन में ऐसा पक्का निश्चय कर लो। स्वाभिमान छोड़ने से मान-प्रतिष्ठा चली जाएगी। अपने सिर को समर्पित करके बलिदान करो। बलिदान करने के लिए तैयार हो जाओ, निर्लज्ज सिर पर पैर रखकर भाग जाएंगे। तलवार चलेगी शीश कटेंगे, कुकर्मी शर्मसार होंगे।

सिंवर विसन सत जांण, गिण्यौ वासग वषाण्यौं।
सिंवर विसन सत जांण, पहल पहळाद पिछाण्यौं।
सिंवर विसन सत जांण, वस्यौ षटजतिया हाली।
सिंवर विसन सत जांण, प्रीत पंडवां सूं पाली।
धू तारयौ तारयौ करण, सिवर दधिच सुधारिया।
तारसी तोह सोई सिंवर, साध अनेक उधारिया।

भावार्थ– सत्य जान कर विष्णु नाम का स्मरण करो, अपने अनेक मुखों से नागराज वासुकी जिसका बखान कर रहे हैं। सबसे पहले परम भक्त प्रहलाद ने जिसको पहचाना था। छः प्रकार के पराश्रित साधक (ब्राह्मण, संन्यासी, दरवेश, जोगी, जंगम, जती) नाम के प्रभाव से ही पूजित होते हैं। पांडवों के प्रेम के वश भगवान हो गए थे। भक्तराज ध्रुव, महादानी कर्ण, शिवि, दधिचि ने भी अपने जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त किया था। वही तरेगा जो स्मरण करेगा। अनेक साधक इस नाम के बल पर पार उतर गए।

अंन आतम भूष हटै तन की, सिंवरयां हरि वाहर है जन की।
जळ पीयां जेम पियास मिटै, प्रणम्यां प्रभु सह पाप कटै।
सुत मिंत मिंल्या नित प्रीति जिसी, निज नांव जप्यां जगदीस खुसी।
नर न्यांन बिना वड़ चूक पई, रहता सूं राचि गई सु गई।

भावार्थ–जैसे अन्न से भूख तृप्त होती है वैसे ही हरि के स्मरण से साधक की आत्मतृप्ति होती है। जल के पीने से जैसे प्यास मिटती है वैसे ही प्रभु के शरणागत होने पर संपूर्ण पाप मिट जाते हैं। प्रिय मित्र और पुत्र के मिलने पर जैसी खुशी होती है वैसी ही नित्य नवीन प्रसन्नता भगवान के नामजप में होनी चाहिए। मनुष्य जन्म मिलने पर भी विवेक नहीं हुआ, बिना भजन के ही यह जीवन बीत गया। अब गई सो गई, बची हुई आयु को भगवदार्पण कर दे।

मूल मरणों अमर नांहीं, मोमणे कियौ मतो।
षड़या षाड़े चडया चंवरी, करै अपछर आरतो।
जाति कुळ की त्याति निहंचौ, पंथ पर काजै मिल्यो।
गुंण गूंथि गोकळ कहै साषी, षेजड़ली षळकट सांभल्यौ।

भावार्थ–सभी बिश्नोई मुमुक्षुओं ने निश्चय कर लिया की एक दिन तो इस नश्वर शरीर को मरना ही पड़ेगा, यहाँ अमर कोई नहीं है। इस बलि वेदी रूपी विवाह वेदी पर मृत्यु रूपी वधु का वरण करते समय गला फूलों के हार की जगह तलवार को भेंट करके बलिदान दे दो, स्वर्ग में आपका स्वागत होगा, अप्सराएं आरती करेगी। आपकी कुल और जाति निश्चित पूज्यनीय होगी, बिश्नोई पंथ में जन्म तो परहित के लिए ही मिला है। गोकळजी कहते हैं की खेजड़ली में जो भीषण नरसंहार हुआ है उसे सुनो, उन अमर शहीदों का गुणगान करने के लिए मैंने यह साखी कही है।

षेह न षोज न छांह न छोति, विराजै जंभ निरमळ जोति।
पढै मुख पंचवौं वेद पुरांण, झंणकैं जोजन झीणीं बांण।

भावार्थ–स्थूल देहधर्म, पदचि, परछाई, अशौच से रहित गुरु जाम्भोजी पवित्र ज्योति स्वरूप विराज रहे हैं। उनके श्रीमुख से निसृत होने वाले सबद पांचवां वेद और पुराण हैं। उनकी झीणीं वाणी एक योजनपर्यत सुनाई दे रही है।

सरै काज रहै लाज, तरै हंस होय निरमल।
धरै ध्यांन कर न्यांन, प्रेम प्रगास परमल।
पूरण आस अलेष, दास कहै दरसण चाहूं।
आंव कमोदनि चंद सूं, लगन ऐसी लिव लाहूं।
विघन हरण विध दाषवौं, मुष्य सुंदर सोभा बरण।
गोकल अकळ अलेष भज, सिंवर नाथ असरण सरण।

भावार्थ–भगवद्कृपा से जन के संपूर्ण कार्य सिद्ध हो जाते हैं, सदैव उसकी लाज की रक्षा होती है। और अंतमें जीव पावन होकर मुक्ति प्राप्त कर लेता है। ईश्वर को जानने के बाद उसे अपना मानकर ध्यान करना चाहिए, इससे भगवदप्रेम रूपी सुगंध प्राप्त होती है। एकमात्र भगवान की आशा रखकर दास्यभाव से उनके दर्शन की चाहना करनी चाहिए। कुमुदिनी की जैसी प्रीत चंद्रमा से होती है, ऐसी हमारी भगवान से होनी चाहिए। विघ्नहरण, विधि विधाता, सुंदरम स्वरूप की शोभा वर्णनीय है। गोकलजी कहते हैं की जिनकी महिमा असीम, अपार है, जो कुपात्रों पर भी कृपा करके शरण में ले लेते हैं ऐसे मालिक का मैं स्मरण करता हूँ।

जगनाथ सुनाथ सुपरसण सिंभु, मया करि मनिषां मिलियौ।
गुर पांचूं वेद पढै मुष परगट, सो गुरबांणी सांभळियौ।

भावार्थ–स्वयंभू जगन्नाथ ही कृपानाथ बनकर दया करने के लिए अवतरित होकर मनुष्यों को साकार रूप में मिला है। गुरु जाम्भोजी के श्रीमुख से पांचवां वेद प्रकट हुआ है, उस गुरुवाणी को सुनों।

ऊबरूं आपरी ओट मोटा धंणी, आदि सिर ओपमां छाप थारी।
पाप परळै करो प्रीती पालो तका, करण पैदा तूं ही काज सारी।
लाज त्रीलोक मां राषि पूरा धंणी, विषम भै जळ लंघि वाट भारी।

भावार्थ–हे मेरे सर्वसमर्थ प्रभु, आपकी कृपा से ही मेरा उद्धार हो सकता है, आदिकाल से ही यह अवधारणा है की जीव पर आपकी अहेतुकी कृपा रहती है। मेरे पापों को मिटाकर आप जीव के प्रति अपने पुरातन प्रेम का निर्वहन करो, आपने ही मुझे इस संसार में जन्म दिया है तो मेरे सभी कार्यो को आप ही सिद्ध करो। इस त्रिलोकी में आप शरणागत की लाज रखते हो और अंत में उसे विषम भवजल से पार उतार देते हो।

सर्व सांसौ मिटै प्रब पावां इसौ, सदा राषौ सरण गदाधारी।
आदि अनादि आदेस ओपै तूं ही, जिण पाज पहळाद संगि कोड़ि तारी।
रकृा वाकी तका वचन पाळो विसन, किस्सन किरपा करो काज सारी।
दास गोकळ कहै आस पूरौ अलष, ऊबरूं आदि पुरुष ओट थारी।

भावार्थ–सब प्रकार के संशयों के निवारण का यह सुअवसर प्राप्त हुआ है, हे विष्णु भगवान आप मुझे अपनी शरण में रखें। आदि अनादि काल से आपकी आज्ञानुसार सृष्टि का संचालन आपकी शोभा है, आपने प्रहलाद से प्रण करके करोड़ों जीव तार दिये। बाकी जो बच गए हैं अपने वचनानुसार उन्हें भी तारिये। आपकी कृपा से समस्त कार्य सकुशल संपन्न होते हैं। गोकळदासजी कहते हैं की हे ईश्वर, मेरी आशा को पूर्ण करो और मुझे अपनी शरण में लेकर मेरा उद्धार करो ।

लालचन्दजी

छोड़ि कुढ़ि जदि हंस चाल्यौ, हेत हुरमति सब गई।
नित वारि चंदन खोळि करतो, छिनक मां गंदी भई।

भावार्थ– जब इस अस्थाई संसार को छोड़कर जीव रूपी हंस प्रस्थान करेगा तब इसके नेह और नाते सब यहीं धरे रह जाएंगे। इस देह को जिसे रोज चंदन मलता था वह अस्पृश्यनीय हो जाएगी, लोग उसे छूने पर स्नान करेंगे।

नीकुछ कोट लीयौ नरपुर को, जरणां ताक बताया।
भव भागा भगवंत क सरण, त्रिभ नाद वजाया।।

भावार्थ– अपने में अमानीपना और विषय–विकारों का शमन दुर्गति से बचने का बहुत बड़ा सुरक्षा कवच है। जगत की बाधाओं से बचने के लिए जिसने भी भगवान की शरण ली है वह निश्चिय ही अभय हुआ है।

ऊँच नीच अंतर नहीं कोई, हरि कूं भजै सो हरि का होई।
ऊँच नीच सरण जै आवे, च्यारि पदारथ पावै सोई।।
ऐसा होय परम पद पावै, आवागुवणि मुचौ सुखदाई।
निराकार सूं परदो खुल्है, नीकुछ होय भौ भाजै सोई।।

भावार्थ– भगवान का भजन करने में ऊँच–नीच का कोई भेद नहीं है, जो भी इनकी शरण आता है उसे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है। वह आवागमन से मुक्त होकर परमपद प्राप्त करता है। उसे निर्गुण निराकर परमात्मा की प्रतीति हो जाती है। यह सब तभी संभव होता है जब वह निराभिमानी होकर भगवान का भजन करता है।

सिध साधिक पकंबर मुंनियर, कर जोड़े सब आगे ठाढै।
होय हुसियार सतगुरु कूं देषै, निराकार सूं संनमुषि आजै।।
सिर पै टोपी करि जपमाळा, निस दिन जागै नहीं अहारो।
छाया षोज नहीं घर ऊपरि, निराकार आकार तुम्हारो।।

भावार्थ–सिद्ध, साधक, पैगंबर, मुनिगण हाथ जोड़े सावधान होकर सतगुरु जाम्भोजी को निहार रहे हैं, निराकार आज सामने बैठा है। सिर पर टोपी है और हाथ में जपमाला है, ये दिन–रात जागते हैं, कभी नींद नहीं लेते, भोजन नहीं करते, इनकी छाया नहीं पड़ती है और न ही पदचि पड़ते हैं। इनका धाम ऊपर है, निराकार ही साकार बनकर आया है।

दांन करै मन मां बोह फूलै, ज्यौं दुनियां करै वडाई।
पढै गुंणै मंन मां गरबावै, कर चेहरा उर मांन्य सुवाई।।
तपस्या का अंहू नहीं छाडै, जटा वधारै खाक लगाई।
ग्रब महा भड़ सब ता सबळौ, तपस्या दांन कूं देत डिगाई।।

भावार्थ–दान करने पर दुनियां प्रशंसा करती है तो मन बहुत प्रफुल्लित हो जाता है। मन में अपनी बुद्धि विद्या के अभिमान की जो हवा भरी होती है वह उसके चेहरे पर साफ झलकती है। सबकुछ छोड़–छाड़ कर जटा बढ़ाने और तन पर भस्म लगाने के बाद भी तप का अहंकार पीछा नहीं छोड़ता। अहंकार सबसे ताकतवर तथा महाबलवान है यह दान और तप के फल को नष्ट कर देता है।

नीकुछ हुवै तदि सतगुर परसै, भौ सागर को सांसो जाई।
रासानंद हरि दरसंन परसै, सुन्य मंडळ मां जोति संमाई।।

भावार्थ–निरभिमानिता गुरु जाम्भोजी को प्रसन्न करने का अचूक उपाय है, निरभिमानी के लिए भवसागर से पार उतरने का संकट नहीं रहता। रासानंदजी कहते हैं की उसे भगवान का सान्निध्य प्राप्त हो जाता है और उसकी आत्म ज्योति भगवदाकार हो जाती है ।

संची छाडि गयो घर मांहीं, करि कुकरंम माया संकेरो।
धरंम राय जदि लेखो मांगै, पाछो झाकै घर दिस हेरो।।
दांन सील जप तप नंहीं कींनू, नरकि दियौ जांहां घुप अंधेरो।
रासानंद प्रभु भलो उबारयो, निराकार अपनूं करि चेरो।।

भावार्थ–अपना संचित किया हुआ धन घर पर छोड़कर जाना पड़ता है परन्तु मायावश जिन पापों का संग्रह किया है वे साथ जाएंगे। धर्मराज आगे जब कर्मों का हिसाब–किताब मांगेंगे तब भगवान को भूलकर जिस घर के लिए जीवन खपा दिया था वह याद आएगा। दान, उत्तम संस्कारित आचरण, जप, तप नहीं किया तो घोर नरक में डाल दिए जाओगे। रासानंदजी कहते हैं अगर तुमने भगवान से प्रेम किया है तो निराकार रूप से सब जगह रहने वाला ईश्वर वहां भी उपस्थित रहेगा और अपना दास जानकर वह तुम्हें उबार लेगा।

थाके चलंण जुरा जदि आई, जंमराय जदि दीन्हों डेरो।
पकड़ै जंम माय माय पुकारै, सुत बंधु परवार घंणेरो।।
तंन धंन छाडि चल्यौ जदि भूंदूं, मरतलोक कूड़ी मेरो।
राज पाट धंन मिंदर विसरे, भीड़ पड़ै जदि सोच घंणेरो।।

भावार्थ–वृद्धावस्था आने पर पैर चलने से जवाब दे देते हैं और विभिन्न प्रकार की व्याधियों के रूप में मृत्यु आसपास अपनी उपस्थिति का संकेत देती है। यमदूत आकर जब पकड़ते हैं तो जीव मां–मां पुकारता है परंतु पुत्र, भाई–बंधुओं से भरे–पूरे परिवार में से उसकी कोई सहायता नहीं करता। अपना मानने वाला तन और धन यहीं छोड़कर जाना पड़ता है, तब उसे आभास होता है की इस मृत्युलोक संसार से अपनापन व्यर्थ है, इसकी मेर झूठी है। राजपाट, धन, महल आदि सब छोड़ने पड़ते हैं। जब मृत्यु रूपी महान संकट आता है तब बहुत चिंता होती है।

मुकनदासजी

अवधू असा जोग कमावो, फिरि आवागुवण न आवो।
एक सबदी भिछया मांगै, पाँच ग्रास रूचि लेई।
रंभा देखै खंभा जेही, साबित राखै देही।।

भावार्थ– साधु की करणी ऐसी होनी चाहिए जो आवागमन काट दे। भिक्षा के लिए जाते समय गृहस्थी के दरवाजे एक बार आवाज दे, पाँच ग्रास भिक्षा में मिला भोजन करके भजन में लग जाए। रंभा जैसी अनुपम अप्सरा भी सामने आ जाए उसे केवल एक हाड़–मांस के खम्भेजैसी ही माने और मन को विचलित न होने दें।

कोई प्रीति करके इधकेरी, कोई देते है गारी।
दोन्यौ ठोड़ सरीखी देखा, तो तन तीसना जारी।।

भावार्थ– साधक की परिक्कवता तब माननी चाहिए जब वह निन्दा और स्तुति को समान रूप से स्वीकार करें तथा अपने शरीर की सुख–सुविधा की कोई चाहना न करें।

पाँचूं मार पकड़ पहि आंणै, मनसा डिगंण न पावै।
सांसा सोग करै नहीं चित मां, आणंद मां गुण गावै।।
काया कस वस हरि हिरदै, माया मोह न होई।
सबद विचारी निरंतर बसौ, सुखमा रहै संजोई।।

भावार्थ– साधक पँच इन्द्रियों के विषयों की पकड़ से स्वयं को बचाते हुए मन को स्थिर रखे। अन्त:करण में किसी प्रकार के संशय और शोक को स्थान न दे। अपना शरीर कायम रखे और हृदय में भगवान का ध्यान रहे। संसार से किसी प्रकार का मोह–माया न रहे, निरन्तर नाम स्मरण में तल्लीन रहते हुए स्व में अपनी स्थिति रखे।

सबदे हरिजंण साचवंण, दांन तप सील दिढांवंण।
कोड्यां तारंण किसंन, आप आयो इभणासी।
अवगंण मेटि अंनंत, झंभ काटी जंम पासी।।
धुरा पंथ चाल्यौ धंरम, अंनंत संत कीया अंमर।
कर जोड़ि कवत मुकनू कहै, हूं सरणाईं नांव हरि।।

भावार्थ–मुमुक्षुओं को सबदों के द्वारा सत्य से परिचित करवाकर, दान, तप, शील आदि सद्गुणों पर दृढ़ता से चलने का उपदेश दिया। करोड़ों को तारने के लिए जो द्वापर में श्रीकृष्ण थे वे ही अविनाशी आए हैं, वे गुरु जाम्भोजी शरणागत के अनंत अवगुणों की ओर नहीं देखकर अपनी कृपालुता से उसके यमपाश को काट देते हैं। अनादि काल से चले आ रहे पंथ का इन्होंने पुन: संस्थापन किया है और पंथ में आने वाले अनंत साधकों को मुक्ति प्रदान कर दी। मुकनदासजी हाथ जोड़कर कहते हैं की हे भगवन्, मुझे आपके नाम का सहारा है।

किरपाळ दयाल नीहाल करै, प्रतिपाळ गुवाळ सदा पंण में।
किळकार चिंघार अपार कियौ, सुणं साद तही आए छिन में।।
करि तंतंण फंद्यंण दूरि किया, गज मीन उधारि उबारि बियो।
परणांम विसंन को परमेसर, देव वैकुंठां वास दीयौ।।

भावार्थ–अपने प्रण को पालने के लिए कृपालु भगवान सदैव अपने शरणागत की रक्षा करने के लिए तत्पर रहते हैं। गजराज ने चिंघाड़ते हुए जोर से किलकारी मारी तो क्षण भर में भगवान वहाँ पहुंच गए और तत्काल उसके समस्त बंधनों को काटते हुए मगर को मारकर तार दिया और गज बचाकर उबार लिया। उन परमपिता परमात्मा विष्णु को मैं प्रणाम करता हूँ, वे अपने भक्त को वैकुंठ में वास प्रदान करते हैं।

दीय बैकुंठे वास, आस पूजै अंमरापुरि।
रतंन जोति झिलमिलै, सुष दीसै सबहि सुरि।।
हवद सरोवरि न्हांण, हांणि एकंणि उंणिहारा।
हंस दिसा हरि कथ, जीह जगदीस उचारा।।
संचंदंण दीसै सदा, निसवासरि जित कै नहीं।
विसंन जप्यै मुकनूं कहै, सरब सुष लाधा सही।।

भावार्थ–भगवद्प्रेमियों को बैकुंठ, स्वर्ग के अभिलाषियों स्वर्ग, मुमुक्षुओं को मुक्ति और धरती पर देवताओं के समान सुख प्राप्त हो जाते हैं। सहस्रसार चक्र के अमृत सरोवर में स्नान करने पर अपने आरोपित स्वरूप को त्यागकर सहज स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। जीभ से भगवन्नाम स्मरण और कानों से भगवदकथा श्रवण से जीवात्मा मुक्त हो जाती है। अहर्निस उसकी स्मृति बनी रहती है, विस्मृति होती ही नहीं, सर्वत्र वही दृष्टिगोचर होता है। मुकनदासजी कहते हैं की मैं विष्णु का जप करता हूँ, मुझे सब सुख मिल गए हैं।

कोई प्रीति करै इधकेरी, कोई देत है गारी।
दोन्यौ ठोड़ सरीषी देषां, तो तंन तिसनां जारी।।
हिरदै नांव जपै निसवासरि, जुग मारग सोह मेल्है।
तीन्य गुंणां ता रहै नियारा, चौथे पद मां षेलै।।
सो जोगी ब्रभै भो नांही, जोग जुहर सूं चीता।
मुकनदास आस सतगुरु की, ले हरि नांव नचीता।।

भावार्थ–कोई अतिशय प्रेम करे चाहे कोई गाली दे, दोनों समान रूप से स्वीकार है, क्योंकि मान की तृष्णा और अपमान की वितृष्णा दोनों को ही जलाकर राख कर दिया है। दिन-रात हृदय से नामजप होता है, संसार के विभिन्न आकर्षणों से अब कोई मतलब नहीं है। सत, रज, तम तीनों गुणों से दूर चौथी गुणातीत अवस्था में स्थिति हो गई है। वह योगी भवसागर से निर्भय नहीं हो सकता जिसे अपने योगबल का अभिमान है। मुकनदासजी कहते हैं की मुझे तो मेरे सतगुरु जाम्भोजी के बल का भरोसा है, मैं अब निश्चिंत होकर हरि नाम स्मरण करता हूँ।

सेवादासजी

गवां उछेर चले उनकै ढिंग, मोहन आपकी गउवां चरे है।
दूदोजी आप तुरंग चढ़े जब चाबका मार कर घोरो षरे है।
जोर कियो सारे वैथी भागै नहीं, रुंमाल लपेट कै पांय परे है।
षांडो बगस जद मेड़तो दीनो, दूदो जंभेसर नांव धरे है।

भावार्थ–जब गायों को लेकर गुरु जाम्भोजी जंगल की ओर प्रस्थान कर गए तो राव दूदाजी भी घोड़े पर चढ़कर उनके पीछे चलना चाहते हैं, उन्होंने घोड़े को चाबुक मारा परन्तु वह टस से मस नहीं हुआ, जब सब विधि उपाय करने पर भी वह नहीं दौड़ा तो हारकर वे नीचे उतरकर अपना अंगवस्त्र देवजी के चरणों में रखकर नतमस्तक हो गए, तब गुरुदेव खांडा प्रदान करते हुए उन्हें मेड़ता प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। दूदाजी ने आदर के साथ देवजी का जम्भेश्वर नामकरण किया।

आप आपरा साथियां, भला भला भाषंत।
सांम्हां छाती सुभड़ नर, सेला रम चाषंत।

भावार्थ–अपनी और अपने प्रियजनों की तो सभी प्रशंसा करते हैं परन्तु वास्तव में प्रशंसा के लायक तो वे शूरवीर ही है जो परहित के लिए अपनी छाती पर भाले का वार सहते हैं।

जांणि कपोतो झड़फियौ, सरपपटियै सीचांण।
बड़ा बड़ा भड़ पाड़िया, गरब गुमांन अग्यांन।

भावार्थ–जैसे कबूतर पर बड़ी तेजी से बाज झपट्टा मारता है और उसके संभलने से पहले ही उसे धर दबोचता है, ऐसे ही अहंकार और अज्ञान रूपी बाज के झपट्टों ने बड़ों बड़ों को धाराशायी कर दिया।

जहां काळ तंणौ सारो नहीं, फिरी रांम की आंण।
सेवादास जंग जीपिया, परस्या पद निरवांण।

भावार्थ–वह अमर पद है, वहाँ मृत्यु की पहुंच नहीं है क्योंकि वहाँ भगवान की मर्यादा की पाळ है। सेवादासजी कहते हैं की अपने काम-क्रोधादि विकारों से जंग जीतकर ही उस परमपद को प्राप्त किया जा सकता है।

हरजी बणियाल

मन को बुरो स्वभाव, इसके मतै न चालिये।
ये जाणै बहुत उपाव, अनेक जतन कर पालिये।।
अनेक जतन कर पालिये नै, झालिये गहि बांहि।
बाहर जातो आणियै नै, काया गढ़ के मांहि।।

भावार्थ– मन की नीच गति है, इसके मतानुसार नहीं चलना चाहिए। यह जितने उपायों से जीव को गिराने का प्रयत्न करे जीव उतनी ही सावधानी से इसका प्रतिकार करता रहे। जीव को चाहिए कि विषयों की ओर बाहर भागते मन को पकड़कर पुन: पुन: स्थिरता प्रदान करे।

मन जाणै सब बात, जाणत ही काक खेड़े।
कदे नहीं कुसलात, कर दीपक कूवे पड़े।।

भावार्थ– कर्म के फल विधान को जानकर भी मन पापकर्म में प्रवृत्त होता है। रात के अंधेरे में दीपक के प्रकाश बावजूद भी कुएँ में पड़ने वाला कुशल कैस रह सकता है। अँधेरा मन का, दीपक आत्मा का और कुआँ दुर्गति का प्रतीक है। स्वाभाविक रूप से मन पाप करने के लिए प्रेरित करता है पर एक बार आत्मा की आवाज अवश्य आती है की यह गलत है।

प्रगटयो पूरण भाग, सांचो गुरु समराथले।
दाख्यो आदू माघ, कृपा कर आयो भले।।

भावार्थ– परम्परा से चले आ रहे धर्म के विलुप्त होते अनादि मार्ग को पुन: स्थापित करने के लिए समराथल अवतार भगवान श्री जाम्भोजी कृपा करके प्रकट हुए हैं।

रे मन भोळा ले चभोळा, भवसागर कै मांहि।
कूड़ में पड़ियो रहियो सड़ियो, कदै ही निकसै नांहि।।

भावार्थ– अरे भोले मन तू भवसागर में डूबने से बचने के लिए छटपटा रहा है परन्तु जब तक असत्य को नहीं छोड़ेगा कभी पार नहीं उतर सकता, निश्चय ही डूब जाएगा।

रे मन मूरख नहचा तू रख, भगवंत तणां भरोसा।
कीट पतंग सकल कूं पोखै, दइ न दीजै दोसा।।

भर्वार्थ– अरे मूर्ख मन! तूं धैर्य के साथ भगवान पर विश्वास रख। वह सकल सृष्टि का पालन-पोषण करता है। अपने पाप कर्मों का फल भोगते समय भगवान को दोष मत दे।

दोस न दीजै हरि सिंवरीजै, चित वत नटणी ज्यूं रख।
बार बार समझाऊँ तोकूं, विसन सिवंर मन मुरख।।

भावार्थ– एक नटणी रस्सी पर चलते समय अनेक करतब दिखाती है परन्तु उसका पूरा ध्यान अपने पैरों के संतुलन पर हता है। अतीत में किए पाप कर्मों का फल भोगते समय दूसरे को दोष देने से कोई लाभ नहीं होगा बल्कि वर्तमान में सावधानी से अपने कर्तव्य कर्म करते हुए ध्यान अपने लक्ष्य भगवद्प्राप्ति की तरफ ही केन्द्रित रखें।

धन जोवन अंजरी को पाणी, कर सूं जासी निसर।
मिनखा देही भलै न पावै, हरि सिवंरो मन बूसर।।

भवार्थ– धन और यौवन अंजलि के पानी की तरह जो बूंद-बूंद करके कब समाप्त हो गया पता नहीं चलता। मनुष्य जीवन बार-बार नहीं मिलता, ऐस दुर्लभ अवसर को प्राप्त करके जीव को अहर्निश भगवान का स्मरण करना चाहिए।

ये मन कायर भजि हरि सायर, छीलरियां कांय सोधै।
देवी देवा धोकै मुरखा, भोपा भांड परमोधै।।

भावार्थ– जैसे कोई सागर को छोड़कर छोटे तालाबों से प्रयोजन रखता है, वैसे ही कोई ईश्वर को छोड़कर अन्य देवी-देवताओं की आराधना करता है उसे मुर्ख ही जानना चाहिए। मनुष्य को ईश्वर के मार्ग से हटाकर दिग्भ्रमित करने वाले अपराधी है।

मन का मता अनेक, क्या जाणै जीव बापड़ो।
महा मसत मन एक, सब सिर थापै थापड़ो।।

सब सिर थापै थापड़ो नै, बापड़ो संसार।
सुर नर मुनि जन देवता, सबको करै सिंघार।।
महा मसत मानै नहीं, गही न छाड़ैं टेक।
जन हरजी ऐसे कही, मन का मता अनेक।।

भावार्थ–मन गति बहुत चंचल है, जीव बेचारा इसके प्रपंचों को क्या जाने। यह अकेला उच्छृखंल सबकी मति हर लेता है और संसार इसके सामने बेबस हो जाता है। देवता, मनुष्य, मुनि यह सबको पथभ्रष्ट कर देता है। यह बहुत बड़ा स्वेच्छाचारी है, यह अपनी आदत नहीं छोड़ता। हरजी कहते हैं की यह विश्वास के योग्य नहीं है पल–पल में यह बदलता रहता है।

परमानन्दजी बणियाल

मिनखा जन्म मिलै मेरा जीवो, चूकै भव चौरासी।
नूंवो लेखो हुवै मेरा जीवों, करसी सो जीव पायसी।।

भावार्थ– मनुष्य की एक कर्मयोनि है बाकी सब भोगयोनि है। मनुष्य योनि में आकर इसे प्रथम या अन्तिम जन्म बनाना जीव के ही हाथ में है। शुभकर्म करके वह मुक्त हो जाएगा तथा पापकर्म करने से फिर चौरासी का चक्कर शुरु हो जाएगा।

जैसी कथणी कथै, असी करणी होय।
पारब्रह्म कूं परसता, पल्ला न पकड़ै कोय।।

भावार्थ– वचन और कर्म में समानता हो जाए तो परमात्मा की प्राप्ति से कोई रोक नहीं सकता।

नीसवासर आठ पहर, पलक न विसरत मुझ।
जहां जहां नैन पसारिहु, तहां तहां देखुं तुझ।।

भावार्थ– हे प्रभु! दिन–रात, आठों पहर में आपको एक पल भी भूलूं नहीं। जहां तक मेरी दृष्टि जाए प्रत्येक जगह और जीव में मैं आपको ही देखूं।

बाल तरण अर व्रधपणा, हे करे हरि ध्याय।
जब लग सांस सरीर मां, हरख्य हरख्य गुण गाय।।

भावार्थ– जब तक इस नश्वर शरीर में श्वास चल रही है, बाल, युवा या वृद्ध कोई भी अवस्था हो प्रेम पूर्वक भगवान का स्मरण करना चाहिए। क्योंकि मृत्यु शरीर की अवस्था नहीं देखती।

हरि सनमुख का पुनं अनंत, नहीं वेमुख सम पाप।
सुख नहीं संतोष सम, तिसनां सम नहीं ताप।।

भावार्थ– भगवान की तरफ लगना सबसे बड़ा पुण्य है और भगवान से विमुखता ही सबसे बड़ा पाप है। संतोष के समान कोई सुख नहीं है और तृष्णा के समान कोई संताप नहीं है।

मान बड़ाई तेज धन, तन जाव शरम लाज।
भगति मुगति अर ग्यान ध्यान, एते नै जावे भाज।।
नर नारी कारण नहीं, जांकै अंतरि काम।
कामी कदै न हरि भजै, निसदिन आठोंजाम।।

भावार्थ– मान–सम्मान, तेज, धन, तन, लज्जा, भक्ति भावना, मुक्तिकामना, ज्ञान, ध्यान सब भाग जाते हैं जब जीव काम के वशीभूत हो जाता है। कामी कभी भगवान का भजन नहीं कर सकता।

कै हरि की चरचा कर, कै हरि हिरदै नाम।
प्रीतम पल न वीसारिया, चलता करता काम।।

भावार्थ– उत्तम संग मिले तो व्यक्ति भगवदचर्चा करे अथवा तो एकान्त में भगवद् स्मरण करे। अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए कर्म अवश्य करें, पर भगवान एक पल के लिए भी विस्मृत नहीं होना चाहिए।

हरेजन तो जागत भलो, जपे ज हरि को नाम।
तीन्यौ सूता ही भला, चोर स्यंघ अर सांप।।

भावार्थ– चोर, शेर और सांप को सोता हुआ देखकर जगाना नहीं चाहिए परन्तु असमय सोते हुए साधक को जगा देना चाहिए ताकि वह जागकर भजन करें।

भोजन करि सौ काम तज्य, सहंस काम तज्य न्हाय।
सहंस दस तज्य उपगार करि, लाख विसारी हरि ध्याय।।

भावार्थ– सौ काम छोड़कर भोजन करना चाहिए, हजार काम छोड़कर स्नान करना चाहिए, दस हजार काम छोड़कर परोपकार करना चाहिए तथा लाख काम छोड़कर भगवान का भजन करना चाहिए।

जो जीवतो अति भलो, मरते महा आनन्द।
जे राता हरि नांम सूं, नीहचल परमानन्द।।

भावार्थ– जिन्होंने भगवान के नाम का रसास्वादन कर लिया है उनके लिए यह जीवन आनंद है और मृत्यु परमानन्द।

मरते पावै पीव कूं, जीवंत वंचौ काल।
नीरभै हरि नाम ले, दोनों हाथ दयाल।।

भावार्थ– भगवान का नाम जीव के लोक और परलोक दोनों संवारता है, जीवित रहते संकटों से रक्षा करता है और मरने के बाद भगवान से मिलाता है।

माया जग की मोहणी, मोह लिया संसार।
बड़ा बड़ा मुनियर ठग्या, सब कै लागी लार।।

भावार्थ– जीव को भ्रमित करने वाली इस माया ने संसार को मोहित कर रखा है। अपने मन को वश में करने का दावा करने वाले मुनियों को भी यह धोखा दे देती है। यह सबके पीछे पड़ी हुई है।

विरही जन की पारेखा, बोलत मीठे बैन।
निर्मल जांकी आत्मा, सीतल जाकै नैन।।

भावार्थ– भगवद्प्रेमी जन की यह पहचान है कि वह मधुरभाषी होगा, उसका अन्त:करण अत्यंत पवित्र होगा और उसके नेत्रों से करुणा बरसती रहेगी।

एक लख पूत सवा लख नातियां, दस बंधु सिरताज।
एक सीता के कारणौ, गयो रावण को राज।।

भावार्थ– लाखों सदस्यों के परिवार वाले महाबली दशानन रावण का

राज्य और लंका का विपुल ऐश्वर्य एक परस्त्री अपहरण के कारण धूल में मिल गया।

मन गयौ तो जांण दै, दिढ करि राखि सरीर।
बिनां चढ़ी कुबांणि को, किस विधि लगै तीर।।

भावार्थ– भरपूर प्रयत्न करने के बाद भी मन वश में नहीं होता तो उसे स्वतंत्र छोड़ दें और (स्वयं) को उससे अलग कर लें तथा मन के किसी संकल्प में शरीर को सम्मिलित नहीं होने दे, जब शरीर क्रिया नहीं करेगा तो मन का संकल्प व्यर्थ चला जाएगा और हम पाप कर्म से बच जाएंगे। शरीर रूपी कमान पर चढ़े बिना मनरूपी तीर कुछ भी बिगाड़ नहीं पाएगा।

विशेष– विभिन्न मत–पंथ और शास्त्रों में मन को वश में करने के अनेक प्रकार के उपाय बताए गए हैं परन्तु जैसे विलक्षण उपाय इस सूक्ति में बताया गया है वैसा अन्यत्र देखने में नहीं मिलता, यह है जम्भाणी साहित्य की विशेषता।

आपनपौ न सराहिंयैं, पर निंदियै न कोय।
मात सराहै पूत को, लोक न मांनै सोय।।

भावार्थ– आत्मश्लाघा और परनिंदा से बचना चाहिए। मां द्वारा अपने अयोग्य पुत्र की प्रशंसा करने से वह जगत में माननीय नहीं हो जाता।

दोय च्यारि साखी कह, दोय च्यारह कह पद।
कह हम कुं अनभै फुरी, हम ग्यानी वेहद।।

भावार्थ– किसी विषय का अल्प ज्ञान प्राप्त करके ही हम अपने को परमज्ञानी और अनुभवसिद्ध समझने लगते हैं।

गरब न करै रे मानवी, देह न जीव क संग।
भवंग तज ज्यौ कांचली, तरवर पात प्रसंग।।

भावार्थ– जैसे सांप कैंचुली को और पेड़ पत्ते को त्याग देता है वैसे ही प्राण शरीर को छोड़ देता है। जीव के यहां से प्रस्थान करते समय उसका प्रिय शरीर भी साथ नहीं जाता फिर संसार का तुच्छ और क्षणभंगुर वैभव पाकर कैसा अभिमान।

झूठ कूं झूठा मील्या, तब ही बंध्या सनेह।
झूठ कूं साचा मील्या, तब ही तूटा नेह।।

भावार्थ– सच्चे और सिद्धांतवादी इन्सान को संसार में स्थाई मित्र मिलना बहुत मुश्किल होता है। लोगों के अच्छे-बुरे कर्मों में स्वीकृति दो तभी तक मित्रता है, विरोध करने पर मित्रता छूटते देर नहीं लगती।

औरां नै उपदेस दे, आप चेते नहीं अचेत।
करै जगत को जाबतो, घर को भिळग्यो खेत।।

भावार्थ– जो दूसरों को तो उपदेश बहुत देते हैं परन्तु उस उपदेश को स्वयं के आचरण में नहीं लाते ऐसे तथाकथित उपदेशकों का पतन हो जाता है।

ज्यूं महि मांहि घीरत काढयो, सरब मारग मथ।
परमानन्द पूरे धणी, परगट कियो जय पंथ।।

भावार्थ– जिस प्रकार दही को मथने पर छाछ के ऊपर घी आ जाता है उसी प्रकार भगवद्प्राप्ति के सभी मार्गों का मंथन करके भगवान श्री जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ के रूप में एक अनुपम मार्ग प्रकट किया है।

का पूरंण ग्यानी भलो, का तो भलो अजांण।
मूढ़मती अधवीच को, जळ मां जिसो पषांण।।

भावार्थ– किसी विषय का अपूर्ण ज्ञान प्राप्त करके कार्य प्रारम्भ करने वाला निश्चय ही असफल होता है, कई बार दूसरों के लिए हानिकारक भी सिद्ध होता है, इससे तो अच्छा वह उस विषय के प्रति अनजान ही रहता। वह अधर में लटकता मूढ़बुद्धि उस पानी में पड़े पत्थर के समान है जो न पूरा भीगा है न पूरा सूखा है।

ऐसा गुरु भूल न कीजियै, हर विन कथै गियांन।
दयाहीण दुरमती, पूजै पुजावत आंण।।

भावार्थ– जिसकी मति में दुर्गण हो, जो दयाहीन हो, जो आन देवों की पूजा करता हो, जो जीव को भगवान की और न लगाकर दूसरी तरफ लगाता हो, ऐसे व्यक्ति को भूलकर भी गुरु नहीं बनाना चाहिए।

हरि जी जांह छत्र हुवा, छांह करै सब कोय।
करता छाया न करै, तो छांह धूप ही होय।।।

भावार्थ– भगवान जिस पर कृपा करते हैं उसके लिए सब अनुकूल बन जाते हैं, भगवान की कृपा न हो तो अनुकूल भी प्रतिकूल हो जाते हैं।

विष वेली अपणै कर वाहै, इम्रत फल कैसे पाई।
करै जका लेखा हरि मांगै, जदि जीवड़ो पछताई।।

भावार्थ– अपने हाथ से जहर की बेल बोई है तो उसके अमृत फल कहां से लगेंगे। जीवन भर पापकर्मों में रत रहने के बाद मरणोपरांत सद्गति की इच्छा करना बेकार है। किए हुए कर्मों का हिसाब जब भगवान लेता है तो पापी जीव बहुत पछताता है।

तेरा संगी कोई नहीं, तूं किसी का नांहि।
बेड़ी काठ संजोग ज्यौं, उतरि चहुं दिस जांहि।।
अनेक बार समझावीयो, समझै समझण हार।
परमानंद चित चेतीयो, तो पावै दीदार।।

भावार्थ– जैसे नदी पार करने के बाद लोग नाव से उतरने के बाद अपने-अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान करते हैं वैसा ही क्षणिक साथ संसार के संबंधों में समझना चाहिए, वास्तव में यहाँ जीव का कोई स्थाई साथी नहीं है, यह बात संत-शास्त्रों के द्वारा जीव को बार-बार समझाई जाती है, जो जिज्ञासु जीव इस तत्त्व को जान लेता है उसे ज्ञान हो जाता है और वह परमात्मा के दर्शन का अधिकारी बन जाता है।

ज्यौं माखी गुड़ मां पड़ी पछताई, यों प्राणी पछतायो।
आगे सुरनर लेखो मांगै, पूछत ही सकुचायो।
कांही लाभ चोवगणां लीया, कांही मूल ठगायो।

भावार्थ– रसना के लोभ में मक्खी गुड़ का स्वाद लेती है, परन्तु जो गुड़ उसे प्रिय लगता है वही उसकी मृत्यु का कारण बनता है। इसी प्रकार सांसारिक विषयों के भोगों में रत रहकर भगवान को भूलने वाले जीव से जब आगे हिसाब-किताब मांगा जाता है तो उसे बहुत संकोच होता है। यह जीव के ही

हाथ में है की वह उस मक्खी की तरह विषय-भोगों में डूबकर जीव अपनी दुर्गति करता है या इस अमूल्य मानव शरीर से भगवदप्राप्ति करता है।

जो करता सोइ भोग्यता, आडो आवत सोय।
अपणौ कीयौ भोगवै, हरि कूं दोस न कोय।।

भावार्थ– जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही उसे फल मिलता है, अपने बुरे कर्मों का फल भोगते समय भगवान को दोष नहीं देना चाहिए।

मन माया की तरंग है, बोहत भांति करि जोय।
पकड़ीजै तो अनंत सुख, छोड़या बहु दुख होय।।

भावार्थ– जलतरंगों की भांति उत्पन्न होने वाली मन की गति को पकड़ना बहुत कठिन है, परन्तु फिर भी जीव को अनन्त सुख चाहिए तो इसे पकड़ना होगा अन्यथा मन के मते चलने पर यह जीव की दुर्गति करके अनन्त दु:ख में ढकेल देगा।

एके थांणे रोपीया, आंबो अर बबूल।
अंब रा फल पाव्यजौ, उणरी भाजै सूल।।

भावार्थ– एक ही स्थान पर लगाए गए आम और बबूल के पेड़ फल देते समय एक मीठा फल और दूसरा शूल प्रदान करता है उसी प्रकार एक ही देश, काल, परिस्थिति में रहने वाले सज्जन और दुर्जन व्यक्ति व्यवहार करते समय अपना-अपना स्वभाव प्रदर्शित करते हैं।

जांकै जसी पीड़ है, सो तसी करै पुकार।
को सुख मां को सहज मां, को म्रतग की वार।।

भावार्थ– जिसके जैसी आवश्यकता होती है उसके अंतर्मन से वैसी ही पुकार उठती है। कोई सुख में भगवान का धन्यवाद कर रहा, कोई सुख-दु:ख से परे सहज अवस्था में भगवान का गुणगान कर रहा है तो कोई भीषण संकट में सामने मृत्यु को उपस्थित देखकर आर्तभाव से भगवान से उबारने के लिए प्रार्थना कर रहा है।

ऊंट रूपइया सोलह, गाडर रूपीया दोय।
ओठिल काती वणी, ऊंन समान्य न होय।।

भावार्थ– भेड़ से ऊंट की कीमत ज्यादा होती परन्तु भेड़ की ऊंन का मुकाबला उंट के बाल नहीं कर सकते। बड़े लोगों से संबंध रखते हुए साधारण लोगों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए क्योंकि उनके पास कोई ऐसा गुण हो सकता जो शायद बड़ों के पास न हो।

एक पंथ महा मुगति को, सतगुरु दियो बताय।
दूजो माया मोह को, भरम्यौ गोता खाय।।

भावार्थ– दो रास्ते हैं, पहला जगदीश प्राप्ति और दूसरा जगत प्राप्ति का, दोनों पर एकसाथ नहीं चला जा सकता। पहला रास्ता जो मुक्तिमार्ग है श्री जाम्भोजी ने हमें बता दिया है, दूसरे रास्ते पर चलने वाले आवागमन में भटकते रहेंगे।

वाघ हुं के भेटा भली, कर काया को छेद।
नासतीक नर को दरस, भलो न भाखे वेद।।

भावार्थ– नास्तिक मनुष्य से तो बाघ अच्छा है जो मिलने पर एक बार ही शरीर को मारता है परन्तु नास्तिक की संगति के कारण भगवान के रास्ते से भटका जीव कोटि बार जन्मता और मरता है।

जहाँ सुवारथ मन चाहि, जहाँ ही मानै सुख।
जहाँ स्वारथ नहीं आप कूं, कह कालो वाको मुख।।

भावार्थ– दुनियाँ क यह दस्तूर है की यह वहीं प्रीत करती है जहाँ इसे स्वार्थसिद्धि की अपेक्षा रहती है। जिन लोगों से इसे कोई लाभ नहीं मिलने वाला वे इसके लिए बेकार है।

ज्यौ मुख दरसै आरसी, एक रूप दरसाय।
पालो पांणी दोय कह, सूर उदै एक थाय।।
एक रूप सब रूप मां, सब मां रहया संमाय।
जीव सीव सब एक है, ज्यौ पोहप वास पसराय।।

भावार्थ– जो मुख शीशे में दिखाई दे रहा है वह दूसरा नहीं है। ओस और पानी को अलग–अलग देखा जाता है परन्तु सूर्योदय होने पर दोनों एक हो जाते हैं। एक परमात्मा ही सभी जीवों में दृष्टिगोचर हो रहा है परमात्मा और जीव भिन्न नहीं है। परमात्मा रूपी पुष्प ही जीव रूप में अपनी सुगंध चारों ओर बिखेर रहा है।

कूकर म्यंदर काच का, छांह देख्या घुरराय।
यो नर दुबध्या भरम का, भटक्य भटक्य मर जाए।।

भावार्थ– शीश महल में कुत्ता चारों ओर अपने अक्ष को देखकर दूसरा कुत्ता समझकर भौंकता है, काश! उसे कोई समझा पाता की वहाँ दूसरा कोई नहीं है हर जगह तुम्हीं ही हो, ऐसे ही मनुष्य जीवनभर दूसरों से वैर, द्वेष, ईर्ष्या रखते हुए मर जाता है। मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है, उसे तो समझना चाहिए की परमात्मा का अंश आत्मा जो मेरे में है वही सभी जीवों में दृष्टिगोचर हो रहा है, फिर पराया कौन है?

मन मां दुबध्या उपजी, माया भजु क राम।
दुबध्या सुं अधविच रहयौ, सरयौ न एकौ काम।।
जांकै दिल दुबध्या नहीं, निश्चौ हरि वेसवास।
सो सांचा हरिजन सही, परमानन्द हरि पास।।

भावार्थ– जो जगदीश और जगत दोनों की प्राप्ति एक साथ करना चाहता है वह पूर्णतया दोनों से ही वंचित रह जाता है। जिसके अंत:करण में दुविधा नहीं है, जिसने परमात्मप्राप्ति का पक्का निश्चय कर लिया है, वही सच्चा साधक है, परमात्मा उसके आसपास ही है।

ब्रंभादिक मुन्य रेख सब, आय दीयो उपदेस।
मूढ़ मती अग्यान क, मूल नहीं य प्रवेस।।

भावार्थ– मनमुखी मूढ़मति को ऋषि, मुनि और स्वयं ब्रह्माजी आकर ज्ञान दें तो भी उसे सद्बुद्धि नहीं आएगी।

ग्यान सोई मुख उपजै, चुण्य कंण अखर पाय।
पैड़ी पैड़ी चढ़ता, महल्य वीराजै जाय।।

क सतगुर के सासत्र, क सतसंगत्य नीधान।
क पुरेबल पुंन तैं, एह भोम्य का गीयान।।

भवार्थ– जिस प्रकार एक–एक सीढ़ी चढ़ते हुए ऊपर महल में पहुँचा जा सकता है, उसी प्रकार सद्गुरु, शास्त्र, संतो के सत्संग अथवा तो पूर्वजन्म के पुण्य से स्वयं को ज्ञान की अनुभूति होती है। विभिन्न जगहों से थोड़ा–थोड़ा ज्ञान संग्रहित करते–करते एक दिन जीव ज्ञानी बन जाता है।

समझाइय अजांण कुं, सो काचौ दूध समान्य।
वीगड़ायल दूध वीगड़यै, कांहा हुवै सुणाये ग्यान।

भावार्थ– कच्चे दूध को गर्म करके विभिन्न प्रकार से उपयोग में लाया जा सकता है परन्तु जो दूध खराब हो गया है वो किसी भी उपाय से प्रयोग के लायक नहीं बनता। जो अनजान है उसको समझाया जा सकता है परन्तु जो जानबूझकर कर गलती करता है वह समझाने पर भी नहीं सुधरता।

असो ध्यान अज्ञान को, परगट कहुं परवान।
ज्यौ बुग मछी कुंतक, यो कुबधी को ग्यान।।

भावार्थ– एक पैर पर खड़ा रहकर मछली को पकड़ने के लिए जैसा छल बगुला करता है, कुबुद्धि के ध्यान करने का नाटक कुछ ऐसा ही है। लोगों को दिखाने के लिए किया गया जप, तप, ध्यान अज्ञानता की निशानी है।

मन मां मोटा होय रहा, मोटा तुछय समान्य।
आपो आप सरावही, ओ सब मांहि अग्यान।।

भावार्थ– जो स्वयं को बड़ा मानने का अभिमान करता है वास्तव में यह छोटेपन की निशानी है। अपने मुंह से अपनी बड़ाई करना, यह सबसे बड़ा अज्ञान है।

उतिम सेती टल्य चलै, मधम सेती नेह।
सठ मुरेख संमझावत मत, दु:ख उपजगौ देह।।

भावार्थ– जो सज्जन लोगों से दूर रहता है और दुर्जनों से स्नेह करता है ऐसे दुष्टबुद्धि को समझाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वह आप के लिए कष्टदायक सिद्ध होगा।

कु अमध्या करि गीण, अमथ्या सति ठहराय।
भली कहया मानै बुरी, तासु कुछय न वसाय।।

भावार्थ– जो सत्य को असत्य तथा असत्य को सत्य ठहराये। कोई उसके भले की बात कहे तो वह उसे बुरी लगे। ऐसे व्यक्ति किसी भी उपाय से सन्मार्ग पर नहीं आते।

पद की नासति कर, कथ इन्द्री रत ग्यांन।
जैसे कुवो नीर विण्य, पढ़ियो निरफल जाय।।

भावार्थ– जो धर्म प्रचारक अपने उद्बोधन में भगवान की बात न कहकर सांसारिक विषयों का बखान करता है उसकी विद्या बिना जल के कुएं के समान व्यर्थ है।

लाभ हुवै तो मन खुसी, हंस खुसी मन मांहि।
अलाभ मुरछत होय पड़ै, रोवत है मन मांहि।
असी ओछी बुध्य का, अग्यानी अवैचार।
तांकु हरि मेलो नहीं, जलम धरे सो बार।

भावार्थ– थोड़े-से लाभ से प्रफुल्लित हो जाए और थोड़ी-सी हानि से रोने लग जाए, यह अज्ञान है और ओछी बुद्धि का परिचय है। ऐसे व्यक्ति का परमात्मा से मिलन नहीं हो सकता, वह बार-बार जन्मता और मरता है। सबसे बड़ा लाभ तो दुर्लभ मनुष्य शरीर का मिलना है और सबसे बड़ी हानि इस मानव देह से भगवद् प्राप्ति न करके इस दुर्लभतम अवसर को गंवाना है।

दुख दाझंता देवजी, लीवी तुम्हारी ओट।
तुम सरण्य दुख पाइय, तो सेवग ही मां खोट।।

भावार्थ– दु:ख निवृत्ति के लिए भगवान की शरण लेने के बाद भी अगर दु:ख हमारा पीछा नहीं छोड़ते हैं तो समझो अभी सम्यक् प्रकार से शरण नहीं हुए है। अभी भी हमने भगवान के विकल्प के रूप में कुछ बचा कर रखा हुआ है।

गुण औगुण भूंडो भलौ, तुम जानत हो सोय।
हम तो तेरे ही आसरै, अवर न दूजा कोय।।

भावार्थ– मेरे गुण-दोष, भलाई-बुराई तुम सब कुछ जानते हो। मुझे तो केवल तुम्हारा आसरा है। तुमसे बड़ा आश्रयदाता मुझे कोई दूसरा दिखाई नहीं देता है।

कहर दिष्टय नांही कबु, आदि मध्य अरू अंत।
सीतल सुखदाई सदा, सचा सुगैणा संत।।

भावार्थ– कभी किसी के प्रति क्रोध न करके, दूसरा के साथ व्यवहार सदा शीतल और उन्हें सुख देने वाला हो। ऐसा संतत्व को प्राप्त व्यक्ति ही सच्चा सगुणा है।

गुण करि गुण सब को करै, हर वांको उपराध।
औगुण उपरि गुंण करै, सो कहीय निज साध।।

भावार्थ– कोई किसी का भला करता है तो प्रति उत्तर में उसकी भलाई तो हर कोई कर देता है परन्तु किसी की बुराई के बदले में उसकी भलाई करने वाला तो कोई साधु पुरुष ही हो सकता है।

जां कु निद्या असतुल्य न इरखौ, मान्य अपमान्य संमान्य।
वह हरेजन हरि का हितु, वै पावै परम नीधान।।
ऐसा ग्यानी साध की, निद्या कर नर कोय।
किया करतब सबही अफल, जंमैपुर वासो होय।।

भावार्थ– जिसके लिए निंदा-स्तुति, मान-अपमान एक समान है, जो किसी से ईर्ष्या नहीं रखता, वह साधक भगवान को प्यारा है और वही भगवद्प्राप्ति करता है। ऐसे ज्ञानी साधक की कोई व्यक्ति निंदा करता है तो उसके समस्त शुभकर्म निरुफल हो जाते है और वह नरक में जाता है।

सुरज रज लागै नहीं, लगे उडावण हार।
साच का कछु न बीगड़ै, जो नींदै सो वार।।

भावार्थ– चाहे कितनी भी धूल उड़ाई जाए वह सूर्य तक नहीं पहुँचती है। सत्य की चाहे कितनी भी निन्दा की जाए उसका कुछ भी नहीं बिगड़ता है।

जहाँ कथा नहीं करतार की, नहीं भगति हरि नांव।
संगति नहीं ज साध की, परहरीय सो गाँव।।

भावार्थ– जहाँ भगवान की कथा–वार्ता न हो, लोगों में भगवान की भक्ति और भजन का भाव न हो तथा साधु–संत का निवास न हो उस स्थान का परित्याग कर देना चाहिए।

अप दुख पर दुख एक सा, गीणै न मुरिख ग्यान।
अन्त काल्य पछतायस्यै, पिंड जब तजे पीरांन।।

भावार्थ– अपना दु:ख और पराया दु:ख एक समान है, इसे तत्वत: न समझना अज्ञानता है। सभी जीवों को आत्मस्वरूप न मानने वाला अन्तकाल में पछताता है, जब अपना कहने वाला यह शरीर भी उसे छोड़ना पड़ता है।

रसना स्वारथ कारण, दहै हतै पराइ देह।
सतगुरु लेखो मांग्यसी, तदि मुहि पड़सी खेह।।

भावार्थ– मुँह के स्वाद के लिए जो जीवों की हत्या करता है, मृत्योपरांत जब उससे इसका हिसाब मांगा जाएगा तब उसके मुँह में धूल पड़ेगी।

दया वेहुणा नीरदइ, तरयो न तरसी कोय।
परमाणंद सा साची कह, दया तरेवौ होय।।

भावार्थ– जिसमें दया नहीं है ऐसा निर्दयी पार नहीं उतर सकता। सत्य बात तो यह है की दया ही कल्याण का हेतु है।

जदि गुण को गाहक मीलै, मुंहघ मोल्य बीकाय।
जदि गुंण को गाहक नहीं, कोड़ि बदलै जाय।

भावार्थ– गुणवान को जब गुणग्राही मिलता है तो वह विशेष आदर पाता है। जिन्हें गुणों की परख नहीं है ऐसे लोगों के बीच जाने पर गुणवान की उपेक्षा ही होती है।

हींदू तुरक का राह है दोई, मूल खोजो तो एको होई।
वाद-विवाद विच भुयजल भारी, कोई एक सुरता उतरै पारी।
नेक बदी जांण सब कोई, देखत जांणत भुला लोई।

भावार्थ– हिन्दू ओर मुसलमान के (पूजा–पद्धति के) मार्ग दो हो

सकते हैं परन्तु मंजिल (ईश्वर) तो एक ही है। जो धर्म के नाम पर वाद–विवाद करता है वह भवजल में डूब जाता है, जो इसके तत्त्व को जान लेता है वह पार उतर जाता है। अच्छाई–बुराई के परिणाम जानते हुए भी लोग जानबूझ कर भूल करते हैं।

आव नहीं आदर नहीं, जहां न हरिजन जाय।
हस्य कुसलात न पुछैही, वहंता वार न लाय।

भावार्थ– जिसके हृदय में मेहमान के प्रति आदर का भाव न हो, जो प्रसन्न होकर आगंतुक का कुशलक्षेम न पूछे, वहां सज्जन आदमी को नहीं जाना चाहिए, अगर चला भी जाए तो तुरन्त वहां से रवाना हो जाना चाहिए।

नारी जब नजर पड़ै, मात भगनी पुत्री सही।
पाखाण्य समान्य टल्य चल, जती अतीत जांणौ जही।

भावार्थ– अपने से बड़ी आयु वाली स्त्री को मां, समवयस्क को बहन तथा छोटी को पुत्री के समान मानने वाला, विषयों को विष्ठा मानकर दूर से ही त्यागने वाला सच्चा साधक है।

निंद्या कबु नै कीजिय, सुण्य दुख पाय सोय।
दुख दीना दुख उपजै, सुख दीना सुख होय।

भावार्थ– किसी की निंदा कभी नहीं करनी चाहिए क्योंकि जिसकी निन्दा की जाती सुनकर उसे दु:ख होता है। यह शाश्वत सत्य है की किसी को दु:ख देने से बदल में दु:ख और सुख देने से सुख प्राप्त होगा।

जामंण मरण निरभै भया, सिर पर हरि का हाथ।
हसती पर चड़िया पछै, स्वानि न पूजै घात।

भावार्थ– जैसे हाथी पर चढ़ने के बाद कुत्तों के द्वारा काटने का डर नहीं रहता है वैसे ही भगवान की कृपा होने पर आवागमन का भय मिट जाता है।

उंच नीच कुल कारण नहीं, करणी कारण जोय।
मल मूत्र वीच उपजै, करमै न्यारा होय।।

भावार्थ– मनुष्य के ऊंच–नीच में उसका जन्म नहीं बल्कि उसके कर्म कारण है। सभी मनुष्यों का जन्म तो एक ही प्रकार से होता है परन्तु बाद में उनके कर्म विभिन्न प्रकार के होते हैं।

प्रेम न वाहयौ नीपजे, प्रेम न मोल्य बीकाय।
राजा प्रजा जास्य रुचि, सिर दे सो ले जाय।।
सूर सीस संमपीयौ, छाडि तन की आस।
हरि देखत ही मुलकीया, आवत देख्या दास।।

भावार्थ– प्रेम की खेती नहीं होती और न ही यह बाजार में मोल मिलता है। इसकी प्राप्ति में छोटा–बड़ा, अमीरी–गरीबी भी कारण नहीं है, यह तो अपना सर्वस्व बलिदान करने पर मिलता है। भगवान के प्रेम में जो साधक जीवन की आशा त्याग देता है उसे परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है, ऐसे अनन्यनिष्ठ साधक को पाकर भगवान अति प्रसन्न होते हैं।

मेरी मेरा करत है, तन भी नाहीं साथ।
क्या जाणौ कदि मारीसी, प्राण काल क हाथ।।
जंत्र वाजत रहे गया, छुटि गई सब तार।
पंखी तरवर तज तहाँ, यो गयो बजावण हार।।

भावार्थ– जीवनभर जीव मेरा–मेरा करता है परन्तु वास्तव में शरीर भी अपना नहीं होता, पता नहीं कब काल आकर इसे भी छीन लेता है। इस शरीर रूपी यंत्र को बजाने वाले प्राण जब निकल जाते हैं तो इसके सब तार बिखर जाते हैं। रात्रि विश्राम के बाद सुबह जैसे पक्षी वृक्ष को छोड़कर प्रस्थान कर जाता है ऐसे ही एक दिन जीव शरीर को छोड़कर चल देता है।

मरण दुहैलौ जग डरै, मोहि मरणो सुख आणंद।
कदि मरीय कदि भेटय, पुरण परमाणंद।।

भावार्थ– संसार में लोग मरने से डरते हैं परन्तु वीतराग भगवद्प्रेमी साधक के लिए मृत्यु एक उत्सव है, वह तो सोचता है कि कब इस मरणधर्मा शरीर–संसार से छुटकारा मिले और कब भगवान से मिलन हो।

दिन बीता ज्यों रात है, पख बीतां ज्यों मास।
कूवै काचौ कुंभ ज्यौं, किसी जीवण की आस?

भावार्थ– दिन–रात, पक्ष–मास करके आयु निरन्तर बीत रही है। कच्ची मिट्टी के घड़े में जैसे पानी ठहरना असम्भव है वैसे दसों द्वार वाले इस शरीर में

प्राणों का ठहरना आश्चर्य है। अत: यथाशीघ्र अपने कल्याण का उपाय कर लेना चाहिए।

नां कुछ किया न कर सक्या, नां कुछ किया न जाय।
जो कुछ किया स हरि किया, देइय ज आया दाय।
नर चीत हरय नां कर, कहा कर नर चीत्या।
हरि का किया होत है, तांतै रहो नचीता।।

भावार्थ– जीव द्वारा भगवदार्पण करके किए गए कर्म बंधन का कारण नहीं बनते। सब कुछ भगवान की इच्छा से ही हो रहा है, जीव का यह भाव भगवान को बहुत प्रिय है। जीव के चाहने से कुछ होता भी नहीं है, होगा तो भगवद् इच्छा से ही, फिर जीव को भगवद् इच्छा में ही अपनी इच्छा मिलाकर निश्चिंत हो जाना चाहिए।

जा कुं तो कोई नहीं, ताही कुं हरि होय।
हरि हेत ता पर हुवै, ताही का सब कोय।।

भावार्थ– जिसका कोई नहीं होता उसका भगवान होता है। जिस पर भगवान स्नेह करते हैं दुनिया भी उसे आदर देती है।

जीवत म्रतक होय रह, तज जगत की आस।
गउ हेत वछ कर, यो हरि हरिजन पास।।

भावार्थ– जो संसार की आशा त्यागकर जीते–जी जीवनमुक्त हो जाता है उसे भगवान ऐसे स्नहे करते हैं जैसे गाय बछड़े को करती है।

एक गांवण मां रोज है, एक रोवण में राग।
एक वैरागी उग्रह मां, एक घर ही मां वैराग।
एक गायौ पैण पायो नहीं, एक वीण्य गाया भरपूर।
जीन्य गायो ध्यायो विसवास सुं, से हर सुं सदा हजुर।

भावार्थ– एक गाते समय भी बेसुरा है, एक रोता भी राग में है। एक का घर छोड़ने पर भी वैराग्य परिपक्व नहीं हुआ है, एक घर में पक्का वैरागी है। एक ने परमात्मा का बहुत बखान किया परन्तु उसकी प्राप्ति नहीं कर सका, एक ने

चुपचाप उसे पा लिया। जिसने विश्वास पूर्वक भजन किया है भगवान उसके सामने प्रत्यक्ष प्रकट हुए हैं।

मन फाटो सब रस गयो, आदर करइ प्यांण।
गुण तूट सर संधीय, कहि किम लाग बांण।।
काच कटोरो दूध कली, माणक मोती मन।
अतरा भागा न मीलै, करौ ज लाख जतन।।

भावार्थ– जैसे धनुष की डोरी टूटने पर सर संधान नहीं हो सकता तो बाण लक्ष्य भेद कैसे करेगा वैसे ही किसी कारणवश मन टूटने पर आपसी स्नेह और आदर भाव धरा रह जाता। काँच का प्याला, दूध, कली, माणिक्य, मोती और मन ये एक बार टूटने पर लाख प्रयत्न करने पर भी दोबारा पहले जैसे नहीं जुड़ते हैं।

मेर मिटी मुकता भया, पाया हरि विसवास।
अब मन दूजा को नहीं, एक विसन की आस।।
जांकै दिल मां हरि वस, सो नर कलपै कांय।
एक लहरी समंद की, दुख दाल्यद सोह जाय।।

भावार्थ– संसार से अपनापन समाप्त करके भगवान से अपनापन करना ही मुक्ति है। अब हृदय में भगवान के सिवाय किसी के लिए स्थान नहीं है, अब तो केवल उन्हीं की आशा है। जैसे मोतियों से भरी समुद्र की एक लहर किसी के जीवन भर का दु:ख दारिद्रय हर लेती है उसी प्रकार जिनके हृदय में भगवद्प्रेम का सागर उमड़ता है उन्हें कभी दु:खों की प्राप्ति नहीं होती।

अग्न कहया दाझ नहीं, जल कहया त्रखा न जाय।
हेत विहुंणा हरि भजै, तो कैसे हरि कुं पाय।।

भावार्थ– कहने मात्र से अग्नि जलाती नहीं और जल प्यास बुझाता नहीं, इसके लिए अग्नि के सम्पर्क में आना पड़ेगा और जल पीना पड़ेगा। जब तक भगवान के साथ अपनापन मानकर भक्ति नहीं होगी तब तक वह फलीभूत नहीं होगी।

जां आसा हरि नांव की, हेत रहे एक तार।
परमानंद आप तरै, कुल का तारण हार।।

भावार्थ– जो केवल भगवान के ही अनन्याश्रित हैं और भगवान में जिसका दृढ़ विश्वास है, वह स्वयं तो मुक्ति का अधिकारी होता ही है, अपने कुल को भी तार देता है।

कुल तो साइ सराहीयै, हरिजण जां कुल मांहि।
हरि सीवरण हरि भगति विण्य, सुधा जमैपुरि जांहि।।
भजन करत दुखीया भलौ, वसतर मीलै न धान।
मोटो म्यंदर भगति विण्य, से लेखे नहीं भगवान।।

भावार्थ– वही कुल प्रशंसनीय है जिसमें भक्त पैदा होते हैं, भगवान के भजन के बिना तो दुर्गति होगी। घोर गरीबी और दु:ख में जीने वाला भी बड़भागी है अगर वह भजनानंदी है और भक्ति विहीन बड़े–बड़े महल भी भगवान को अभिष्ट नहीं है।

जितनी दीसै आत्मा, तीतनां साल्यगराम।
साधु प्रतक देव है, कहाँ पथर सुं काम।।

भावार्थ– जीव मात्र में भगवान दिखाई देने लग जाए और भगवद्प्रेमी संत देवस्वरूप लगने लगे तो फिर अलग से पत्थर में भगवान को ढूंढने की आवश्यकता नहीं रहती।

जां आसा हरि नांव की, हेत रहे एक तार।
परमानंद आप तरै, कुल का तारण हार।।

भावार्थ– जो केवल भगवान के ही अन्योन्याश्रित है और भगवान में जिसका दृढ़ विश्वास है, वह स्वयं तो मुक्ति का अधिकारी होता ही है, अपने कुल को भी तार देता है।

बाल तरण अर व्रध पैणा, हेत करके हरि ध्याय।
जब लग सांस संसार मां, हरख्य हरख्य गुण गाय।।

भावार्थ– बचपन, युवावस्था या बुढ़ापा कोई भी अवस्था हो भगवान

का भजन करना चाहिए। जब तक संसार में रहते हुए इस शरीर में सांसें चल रही प्रेम और भावपूर्वक भगवान का गुणगान करें।

कंचण काच एक मोल, रतन कोड़ि एक कहीय।
हंस कागा सारीखा, पारस पथर एक लहीय।
पाप पुन्य की पारख नहीं, दया विहुंणा दुरमती।
ग्यानी मुरख एक सा, मरहट संमान्य वा वसती।

भावार्थ– जहाँ सोना और काँच, रतन और कोड़ि, हंस और कौआ, पारस और पत्थर, पाप और पुण्य, दयालु और दुष्ट, ज्ञानी और मुर्ख एक समान गिन जाते हैं वह नगर श्मशान के जैसा है। जहाँ योग्य का अनादर और अयोग्य का सम्मान होता है बुद्धिमान पुरुष को उस स्थान का तुरंत परित्याग कर देना चाहिए।

जल मां वसे कंमोदनी, चंदा वसे अकास।
जो जाहि क मन वस, सो ताही क पास।।
जो गुर वसे बनारसी, सीख समंदा तीर।
विसारसौ नहीं विसरै, जे गुण होय सरीर।।

भावार्थ– चंद्रमा आसमान में उदित होता है, लाखों कोस की दूरी रहने पर भी तालाब की कमलिनी उसे देखकर खिलती है। गुरु काशी में निवास करता है और उसका शिष्य सुदूर समुद्र तट पर रहता है परन्तु गुरु समर्थ और शिष्य सुयोग्य है तो प्रयास करने पर भी वे विस्मृत नहीं होंगे। ऐसे ही कोई जीव अगर ईश्वर से सच्चा प्रेम करता है तो ईश्वर की अदृश्यता उसके आड़े नहीं आती, उसका वह उत्कट प्रेम एक दिन ईश्वर को प्रकट कर देता है।

वेद पुराण ज वाच ही, मन माया की आस।
हिरदै हरि नहीं ओलख्यौ, जांणै लुणीयो सुको घास।।

भावार्थ– जब तक अन्तर्मन में संसार का आकर्षण है। वेद-पुराणादि का वाचन भी फलदायी नहीं हो सकता। भगवान को तत्त्व से जानकर हृदय की गहराइयों से उन्हें प्रेम नहीं किया तो समस्त कार्यों का प्रतिफल सूखे हुए घास को बटोरने के समान है।

हरचंदजी ढुकिया

यह तन जढ़ तूं जान, तिंह इंद्री प्रकासै।
इंद्री ईश्वर मन, मन बुध बिना न भासै।।
बुध को साखी जीव, जीव परै ईस्वर ही जांनौ।
ईस्वर रहै निरधार, जग आधार ही मांनौ।।
हर चंद एसै ईस में, राखे बुध कूं गोय।
तो कामादीक जीत, हो दुरजय बैरी सोय।।

भावार्थ– इस स्थूल शरीर को इंद्रिया गति देती है, इंद्रीयों का राजा मन है, मन से ऊँपर बुद्धि है, बुद्धि की साक्षी जीवात्मा है और जीवात्मा को प्रकाशित करने वाला परमात्मा है। परमात्मा स्वयं तो निराधार है परन्तु सकल जगत का आधार वही है। ऐसे परमात्मा में अपनी बुद्धि को स्थिर रखने से कामादिक जो दुर्जय शत्रु है उनको जीता जा सकता है।

वै महूरत कब होय, वाक विष्णु बखांणै।
चित चितवन सब छाड़, ध्यान घनश्याम ही ठांणै।।
राग द्वेस को त्याग, विस्व एह ब्रह्म ही भासै।
मन इंद्री मृत्यु पाय, कहूँ एक ईसवर को आसै।।
वहै वांण हृदै लगै, साध लक्ष इस विध लहूँ।
हरचंद कहै गुर संत सूं, वार वार वर चहूँ।।

भवार्थ– वह शुभ घड़ी कब आएगी जब मेरी जिह्वा विष्णु नाम का जप करेगी, मेरा चित सांसारिक आकर्षणों को छोड़कर भगवान का ध्यान लगाएगा। किसी से भी राग-द्वेष नहीं रहेगा, सम्पूर्ण विश्व ईश्वरमय ही दिखाई देगा। मन, इन्द्रियाँ आदि का शमन हो जाएगा और केवल एक ईश्वर की ही आशा रह जाएगी। मार्मिक प्रवचन करने वाले तत्त्ववेत्ता संत का सान्निध्य प्राप्त होगा। गुरुदेव से बार-बार यही वरदान मांगता हूँ।

मयारामदासजी

नीण की जोति, गया डंसण झलकंता।
गेंडे की खाल, राजा रांण मन भाई है।
मिरग की मिरग छाला, ओढ़त है जोगी जती।
बकरी की खाल हुतों, पानी भर पाए है।
नेकी ओर बदी, अखी रही जाएगी।
मयाराम मानस की खाल, सो काम न आई है।।

भावार्थ– गेंडे की खाल राजा लोगों के युद्ध के समय पहनने के काम आती है, मृगछाला योगी-यतिों द्वारा प्रयोग की जाती है, बकरी के खाल से पानी भरने की पखाल बनाई जाती है परन्तु मनुष्य की खाल कोई काम नहीं आती, मनुष्य का मृतक शरीर विभिन्न उपायों से यहाँ पर विनाश को प्राप्त होता है, अच्छे और बुरे कर्मों का हिसाब ही साथ जाता है।

खेमदासजी

बातन से देवता रूठे, प्रसन्न होत बातन से।
स्याने लोग लाखन कमाते हैं, बातन से भूत और भवंग बस।
होत बातन सै ग्यांनी, अरु मुरख लखाते है।
बातन से होत प्रीत, बातन से हान लाभ।
बातन से नीचे, ऊँचे चढ़ जाते हैं।
पंडत हूँ जांनै तो, याही में प्रमान जान।
माणस के बात में, एक करामात है।।

भावार्थ– वाणी के दुरुपयोग से देवता रूठ जाते हैं और मीठी वाणी बोलने से वे प्रसन्न हो जाते हैं। बुद्धिमान लोग जुबान से ही लाखों की कमाई कर लेते हैं। बातों (मंत्रशक्ति) से अदृश्य ताकतें और जहरीलें जानवर (सांप) भी वश में हो जाते हैं। बोलने से ही किसी के बुद्धिजीवी और मुर्ख होने का पता चलता है। अच्छी बातों से प्रेम बढ़ता है और बातों से ही हानि-लाभ होता है। बोलने की कला से लोग बहुत ऊँचाईयाँ प्राप्त कर लेते हैं। जैसे मौन मुर्ख का आभूषण है वैसे ही सभा में बोलने से ही विद्वान की विद्वता प्रमाणित होती है। अगर कोई बोल जाने तो मनुष्य की बोली में बड़ी करामात है।

वैण राय बस करूं, नैण बहू रूप निरखै।
नैण राय बस करूं, नास बहु वास परखै।
नास वास बस करूं, कान अहंकार न छझै।
कान राय बस करूं, चित बह चाला मंझै।
चित राजा मन रहै, करके हाथ बहु मानकर।
इतना पिसण लागु, ओर हु आयो सरणागत भाग हर।।

भावार्थ– वाणी को वश में करूं तो आँखें विभिन्न रूपों को निहारने लगती है। आँखें वश में करूं तो नासिका अनेकों प्रकार की गंध की ओर आकर्षित हो जाती है, नासिका वश में करूं तो कान प्रशंसा सुनने के लिए लालायित हो उठते हैं। कान वश में करूं तो चित चंचल हो जाता है। चित, मन के आश्रित रहता है, मन इन्द्रियों का राजा है जो बहुत शक्तिशाली है। इतने दुश्मन पीछे लगे हैं कैसे बचाव होगा? इनसे बचने के लिए मैं भागकर भगवान की शरण आया हूँ।

उदोजी अड़ींग

जा मुखि विसन न औचरयो, ज्यण्य उंदिर बिल सुनौ।

भावार्थ– जिस मुख से विष्णु नाम का जप नहीं होता वह चूहे के बिल के समान केवल एक खड्डा मात्र है।

बुढ़ापो

इस विध बुढ़ापो आय, सुत वित बंध्यो मन माय।
चिंता करण अब लागौ, घर को काम सब भागौ।।
कहो अब कांह कीजै, देही सोच सूं छीजै।
मन में रीस बहु आवै, कर कर क्रोध दुःख पावै।।
सूझै धुंधलौ नैणा, बहरो हो गया कानां।
लुकटी हाथ में लेरै, पगला ठाय नहीं ठहरै।।
डहेली पाहड़ सी लागै, चाल्यो जाय नहीं आगै।
मांची पौळ में घाती, है जक नहीं दिन राती।।
खांसी चलै अरू खुलकै, दम चड़ जाय जब हलकै।

मुख सूं थूकतो रैहै, नैना नाक जल वैहै।।
बिगाड़ी ठोड़ सब भिष्टी, अजहुं मरै नहीं दुष्टी।
टूको स्वान ज्युं देवै, दुःख सुख खबर नहीं लैवे।।
परबस दुःख बहु पावै, नेड़ो कोय नहीं आवै।
धिग एहि जीवणौ जीकौ, यातै मरण है नीकौ।।

भावार्थ– इस प्रकार बुढ़ापा आता है। पुत्र और धन में मन बँधा हुआ है। चिंता बहुत करने लगा है। गृहकार्य सब छूट गया है। अब बताओ क्या करे? शरीर चिंता से क्षीण हो रहा है। क्रोध बहुत आता है परन्तु कोई उपाय नहीं देखकर मन में दुःख पाता है।आँखो से दिखाई नहीं देता और कानों से सुनाई नहीं देता। हाथ में लाठी लेकर चलता है, पैर डगमगाने लगे हैं। घर की चौखट भी पहाड़ जैसी लगती है और उसे पार करना मुश्किल हो जाता है। अब बाहर दरवाजे में चारपाई डाल दी गई है, उसपर दिन-रात कभी चौन नहीं पड़ता। खाँसी बहुत आती है, हर वक्त खाँसता रहता है और बार-बार साँस फूल जाती है।मुख से धूकता रहता है,आँख और कान बहते रहते हैं। घर वाले कहते हैं कि इसने सारा घर गंदा कर दिया है, यह दुष्ट पता नहीं कब मरेगा। घर वाले कुत्ते की तरह रोटी का टुकड़ा दे देते हैं, सुख-दुख की कोई खबर नहीं लेता। पराये वश होकर बहुत दुःख पाना पड़ता है, सार पूछने कोई नजदीक नहीं आता। धिक्कार है ऐसे जीवन पर, इससे तो मरना अच्छा है।

उधव औसर बीचगौ, चेत्यौ नहीं गींवार।
सुकरत कियो न हरि भज्यौ, गयो जमारौ हार।।

भावार्थ– यह मानव शरीर मुक्ति प्राप्ति का सुअवसर है, जिसने इस अवसर को नहीं पहचाना वह गंवार है। परमार्थ और हरि भजन से रहित यह जीवन व्यर्थ है।

गरब कहा करे रे गींवार, तू जल बूदबूदा के वार।
गरब गंजण भगवान, मारे बड़ो बड़ा के मान।।

भावार्थ– इस त्रिलोकी पर राज करने वाले बड़े-बड़े बलवानों का भी अभिमान स्थिर नहीं रहा। फिर कलियुग में अल्पकाल के इस क्षणभंगुर जीवन में मिली थोड़ी सी धन-सम्पत्ति और मान-सम्मान पाकर क्या अभिमान करना।

पुत्र विना नहीं वंस, नहीं तया विन गेह।
नीत विनां नहीं राज, प्राण विना नहीं देह।।
धीरज विना नहीं ध्यान, भाव विन भगति न होय।
गुरु विना नहीं ज्ञान, जोग विन जुगति न कोय।।
संतोष विना कहूं सुख नहीं, कोट उपाय कर देखो किना।
विसन भगत उधै कहै, मुक्ति नहीं हरि नाम विना।।

भावार्थ– पुत्र के बिना वंश, स्त्री के बिना घर, नीति के बिना राज, प्राण के बिना शरीर, धैर्य के बिना ध्यान, भाव के बिना भक्ति, गुरु के बिना ज्ञान, युक्ति के बिना योग, संतोष के बिना सुख और कोई चाहे करोड़ उपाय कर ले परन्तु हरि नाम के बिना मुक्ति असम्भव है।

तां मेली करतार, जहां धरम का नहीं धोखा।
तां मेली करतार, साध मोमण दिल चोखा।।
सती संतोषी सीलवंत, सद पूछै पर वेदना।
विसन भगत उदो कह, तां मेली मदसूदना।।

भावार्थ– जहां धर्म के नाम पर धोखा नहीं है, जहां शुद्ध अन्तःकरण वाले साधक, उज्जवल चरित्र की स्त्रियां, संतोषी, शीलवान लोग निवास करते हैं। आत्मीयतापूर्ण लोग जहां परपीड़ा निवारण के लिए तत्पर रहते हैं। हे भगवान! मुझे ऐसे स्थान पर वास देना।

जीव मारंता देख, जाय के आंण दिरावै।
आप लोप जै मार है, अपणो सीस दिरावै।।
आप मरंता मरण न देह, हर हेतारथ खड़े सही।
एह धरम विश्नोईयां तणां, विसन भगत उदो कही।।

भावार्थ– विष्णु भक्त उदोजी कहते हैं कि विश्नोईयों का यही धर्म है की शपथपूर्वक जीव हत्यारे को इस जघन्य पाप से निवृत्त होने के लिए कहना चाहिए, अगर वह फिर भी वह अपनी जिद्द पर अड़ा रहे तो जीव रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर देने चाहिए। अपने मरने से कोई जीव बचता है तो परमात्मा की प्रसन्नता हेतु अपना बलिदान दे देना चाहिए।

विशेष– उदोजी यहां (आण) शब्द का बहुत युक्ति पूर्वक प्रयोग कर रहे हैं की जीव हिंसा को रोकने के लिए प्रथम प्रयास समझाने का करना चाहिए,

आज के परिप्रेक्ष्य में कानून का सहारा लेना चाहिए, जब सब रास्ते बन्द हो जाए तो किसी तरीके से जीवरक्षा होती नहीं दिखे तो अन्तिम कदम में अपने प्राण अर्पण कर देने चाहिए। यह परमात्मा की प्रीति, प्रसन्नता और उसकी प्राप्ति का विलक्षण मार्ग है। यह सत्याग्रह है, इसमें किसी के प्रति कोई द्वेष नहीं है, प्रतिहिंसक भाव तो बिल्कुल नहीं है।

विषै की लहर म भूल्यौ, कडूंबो देख कै फूल्यौ।
नेकी बदि नहीं देखे, स्वारथ आपणो पेखे।।
कुबदी कुबद नहीं छांडै, कूड़ा झगड़ा मांडे।
पख अरू पात बहु भारी, संपत कहत सब म्हारी।।

भावार्थ– विषय-विकारों के वशीभूत हुआ मनुष्य स्वयं की तथा परिजनों की स्वार्थ सिद्धि के लिए अच्छाई-बुराई का भेद भी भूल जाता है। वह अपनी नीच बुद्धि का परित्याग नहीं करता, अकारण ही दूसरों से झगड़ता है, न्याय की बात न कहकर भयंकर पक्षपात करता है तथा पराई सम्पत्ति को हड़पने का हरसंभव प्रयास करता है।

हरि के हेत नहीं कर है, ओदर पसू ज्यूं भर है।
दिल म साम सेती दूज, निसदिन रहयो आंन ही पूज।।
साधु कहै जो समझाय, मुरख रूष मन म जाय।
सुण रे मूढ़ मति के हीन, वाचा साम सेती कीन।।

भावार्थ– दिग्भ्रमित जीव भगवान से प्रेम नहीं करता। केवल पेट भरने के लिए पशु की तरह उपक्रम करता है। हृदय में भगवान की जगह कोई दूसरा बैठा है और रात-दिन उसी की उपासना कर रहा है। सत्पुरुष उसे समझाते हैं तो वह उन्हीं से रूठ जाता है। अरे मूढ़मति! तूं अपना भला चाहता है तो भगवान का भजन कर।

खोज रहे सब माघ पिराणी, गुरु बिन लहै न आसै।
चकमक कड़े अग्न प्रजले, यूं गुरु ज्ञान प्रकासै।।

भावार्थ– सभी ज्ञान पिपासु लोग ज्ञान मार्ग की खोज करते हैं परन्तु वह मार्ग गुरु के बिना नहीं मिलता। जैसे दो चकमक पत्थरों के आपस में टकराने पर अग्नि प्रज्वलित हो जाती है वैसे ही ज्ञानी गुरु को जिज्ञासु शिष्य मिलने पर ज्ञान का प्रकटीकरण होता है।

साचौ मन सूं सेव निरंतर, सतगुरु किरपा करसी।
ज्ञान भगती वैराग दिढ़वै, आवागवण जु टरसी।।

भावार्थ– सच्चे मन की गई सेवा से संतुष्ट होकर सतगुरु कृपा करते हैं जिससे शिष्य के जीवन में ज्ञान, भक्ति और वैराग्य को दृढ़ता से धारण करने की शक्ति मिलती है जो उसके आवगमन के चक्र को मिटा देती है।

और न चाले साथ जीव के, कै सुकरत हरि नाम।
नाम विना भवसागर भरमै, और न आगे ठांम।।

भावार्थ– जीव के संसार से जाते समय भगवान का नाम और शुभ कर्मो का फल ही उसके साथ जाता है। भगवन्नाम की कमाई का बिना वह भवसागर में भटकता रहता है उसे मुक्ति नहीं मिलती।

उधव दास प्रीत कर हरी सूं, गऊ धावै ज्यूं बछा।
दीनदयाल द्रवेगा तबही, छल बल तजीयै छछा।।

भावार्थ– जैसे बछड़े का गाय के साथ अनन्य आश्रय का सम्बन्ध होता है वैस ही जीव का भगवान के साथ होना चाहिए। दीनदयाल भगवान तभी कृपा करते हैं जब जीव छल-कपट छोड़कर उन्हें पुकारता है।

जाता वार न लागै जीव कूं, नहीं भरोसा तन का।
सांसो सांस सिंवर ले साहब, छाड़ मनोरथ मन का।।

भावार्थ– यह शरीर नश्वर है, इसके नष्ट होते देर नहीं लगेगी, इसलिए मनचाही छोड़ दे, एक भी श्वास व्यर्थ मत गंवा और भगवान का स्मरण कर।

खरो गिणौ संसारि, पहल्य पावण जीमावै।
खरो गिणौ संसारि, मुहरि झुंझतो आवै।।
कारण क्रिया नेम धरम, आंगी वहजै आकरौ।
विसन भगत उदो कह, सो जन कंचण ता खरो।।

भावार्थ– जो स्नेह के साथ आथित्य सत्कार करता है, जो संकट के समय आगे बढ़कर दूसरों की रक्षा करता है, अपने नित्य कर्मों में धर्म-नियमों का ढ़ता से पालन करता है। विष्णोई उदोजी कहते हैं वह शुद्ध सोने की तरह खरा इन्सान है।

खोटो सो संसारि, कियौ उपगार न मानै।
खोटो सो संसारि, कुबात कहि पर घर भानै।।

भावार्थ– जो किसी के उपकार बदला न चुकाकर कृतघ्नता करता है तथा चुगली करके दूसरों की गृहस्थी में आग लगा देता है, संसार में वह मनुष्य नीच है।

आठौ पहर जक नहीं होय, दिन दिन दुख इधको होय।
दुखियो करत है पुकार, महादुख मेटे सिरजणहार।।

भावार्थ– ईश्वर से जीव का वियोग होने के बाद वह विभिन्न योनियों में भटकता है और भयंकर दु:ख पाता है। उसका दु:ख तभी मिटता है जब वह आर्त होकर भगवान से पुन: प्राप्ति की प्रार्थना करता है और भगवान कृपा करके उसे स्वीकार कर लेते हैं।

देखण के दिन दोय छबीला, जिसा काच का सीसा।
यो तन मोती ओस का, तुम क्युं न भजो जगदीसा।।

भावार्थ– यह शरीर कांच के शीशे की तरह नाजुक ओर ओस की बूंद की क्षणभंगुर है। ऐसे अल्पकालिक जीवन को पाकर तुम भगवान का भजन क्यों नहीं करते?

बांझ नार घर वास, कहो क्या पुत्र खिलावै।
प्यासो मृग जल ध्याय, कहो क्या नीर पिलावै।
ऊसर भूंम खिंण कूप, नीर मीठा कहां आवै।
सूवौ संबळ सेय, कहो किसा फळ पावै।
मुरख संगत पाय कै, उधव यूं खाली रयौ।
मिनखा देह हरि भजन बिन, नर पापी निरफळ गयौ।।

भावार्थ– बांझ स्त्री से शादी करने पर संतान की प्राप्ति नहीं होती, मृगतृष्णा के जल से प्यास नहीं बुझती, ऊसर भूमि में कुआं खोदने पर मीठे जल की प्राप्ति की संभावना नहीं रहती, सेमल के फल में चोंच मारने पर तोते को निराशा ही हाथ लगती है। इसी तरह मुर्ख की संगति में रहकर कोई भला चाहता है तो यह असंभव है। मनुष्य का शरीर तो केवल भगवद् प्राप्ति के लिए मिला है, अगर जीव इस शरीर से यह प्रयोजन सिद्ध नहीं करता तो वह पाप का भागीदार बनेगा, उसने अनमोल मनुष्य जन्म व्यर्थ में ही गंवा दिया है।

कालर करसन बाय, कहो क्या कृषी निपावै?
पण आगै जांच, कहो क्या दाळद खोवै?
ज्ञांन हीन सठ संग तै, उधव क्या फळ पाय है?
यूं मिनखा देह हरि भजन बिन, जन्म इकारथ जाय है?

भावार्थ– बंजर भूमि में बीज बोने से खेती कैसे होगी? कंजूस के आगे याचना करने गरीबी दूर कैसे होगी? मुर्ख का संग करने से भला क्या फल प्राप्त होगा? इसी प्रकार मनुष्य शरीर मिलने के बाद भजन नहीं किया तो यह जन्म बेकार चला जाएगा।

कुढोर हरियाय ताय, संग दूजो जावै।
संग सूं खावै मार, डींगरो गळै बंधावै।
कदली काटै बैर, संग सूं पांन चिरावै।
बंस वीड़ौ बन मांय, ताह संग सकळ जरावै।
नीच करम कर नरक जैह, और बूडै संग लेह।
जन उधव नहीं जाइयै, कुसंगत फल एह।।

भावार्थ– आवारा पशु के साथ कोई पालतू पशु दूसरों के खेतों में चरने जाता है तो मार खाता है और गले में डींगरा (लकड़ी का खूंटा) लटका दिया जाता है जो चलते समय पैरों पर चोट करता है। बेर के वृक्ष के पास लगा हुआ केले का पौधा उसके कांटो के प्रहार से नष्ट हो जाता है। वन में लगे बांस के वृक्ष के घर्षण से प्रकट हुई अग्नि समस्त वन को जलाकर भस्म कर देती है। नीच कर्म करने वाला स्वयं तो नरक जाता ही है उसका संग करने वाला भी डूब जाता है। कुसंगति के ऐसे दुष्परिणामों को देखते हुए उससे बचने का भरसक प्रयास करना चाहिए।

क्यूं परचौ कोटिक मुगध, काफर क्यूं धीजै।
बद्ध विकरमी चोर, साधु लोलुप्त कीजै।
अबूझ बूझावै कूंण, कूंण भूंछ जिकार बुलावै।
विस्नु बिन केवलज् ज्ञान, ओर कुण दूजो लावै।
कुण हुवै निरहार ऊदा, अकथ कथा कुंण कही।
नव अवतार आगी हुवा, दसवों ओ सार गुर जांभो सही।।

भावार्थ– करोड़ों आत्ममुग्ध लोगों को परिचय प्राप्त हुआ। नास्तिक मनुष्य आस्तिक बने। संसार में बद्ध, पापों में रत रहने वाले, चोर और साधु सभी उनकी ओर आकर्षित हुए। उनके बिना जिज्ञासाओं का समाधान कौन करता? मूढ़ लोगों को विनम्र और सभ्य कौन बनाता? विष्णु के बिना केवल्य ज्ञान का बखान दूसरा कोन करता? निराहार रहकर अलौकिक विलक्षण बातें हमें बताने वाला कौन है? ये तो वही है जिन्होंने पूर्व में धर्म संस्थापना के लिए नौ बार अवतार ग्रहण किये थे और अब दसवीं बार ग्रह जाम्भोजी के रूप में आए हैं।

जे नर हतता जीव, जीण पण हतै नांहि।
जे नर कथता कूड़, कूड़ पण कथै नांहि।
जे हूंता जड़ जाचंत, ते हुवा गुर ज्ञानी।
जे हुंता सदा असुच, ते हुवा सुचील सिनानी।
मधम तां उत्तम किया, ज्ञान खड़ग निवाया अति।
उत्तम पंथ बताावियो, उदा पिरथी पातकां डूबती।।

भावार्थ– जीवहत्यरों ने जीव हत्या करनी छोड़ दी, झूठे लोगों ने झूठ बोलना छोड़ दिया, मुर्ख लोग ज्ञानी बन गए, मलीनता में रहने वाले परम पवित्र बन गए। अधम लोगों को उत्तम बनाया, अहंकारी शक्तिमानों को ज्ञान की तलवार से झुका दिया। ऐसे विलक्षण पंथ का प्रवर्तन करने वाले श्री जाम्भोजी अगर अवतार नहीं लेते तो यह धरती पाप में डूब जाती।

चोरी जारी हिंसकता, तन दोष है तीन।
निंदा झूठ कठोरता, बाक चाल बक चीन।
तृष्णा चितवन दोषबुध, नर संग तृय मन दोष।
कायक बायक मानसी, दसू दोष तज मोख।।

भावार्थ– चोरी, व्यभिचार और हिंसा ये तीन तन के दोष है। निंदा, झूठ और कटु वचन से तीन वाणी के दोष हैं। तृष्णा, पराई आस और खोटी बुद्धि ये तीन मन के दोष है। ये नौ मन, तन और वचन के दोष है। ऐसे दोषों से ग्रसित व्यक्ति का संग करना दसवां दोष है। जो इन दस दोषों का परित्याग कर देता है वह मोक्ष का अधिकारी हो जाता है।

एक हरि की भक्ति विन, नुगरो सब सैंसार।
सुगरो सोई जानीयै, सिंवरै सिरजण हार।।

भावार्थ– जो भगवान का भजन नहीं करता वह निगुरा है, सुगरा वही है जो भगवान को भजता है।

संत बैर छुटै नहीं, द्रोह करौ जिन कोई।
होली जुग-जुग जलत है, प्रतक देखो लोई।।

भावार्थ– सज्जन लोगों से वैरभाव रखने वाले का अन्त बुरा होता है, आप प्रत्यक्ष देख सकते हैं कि प्रहलादजी का अहित करने वाली होलिका को युगों-युगों से प्रति वर्ष जलाया जाता है।

खड़ग लियो उण हाथ, पाँच करोड़ परलय करया।
पकड़ लियो प्रहलाद, संत सकल मन में डरया।
संत सकल मन में डरया, भागा आठ अरु बीस।
कंठ पकड़यो पहलाद को, कहां तेरो जगदीश।
मो में तो में खड़ग खंभ में, तब निकल्यो भभकार।
पकड़ पिछाड़यो चौक में, जाणे सब संसार।।

भावार्थ– हिरण्यकश्यपु ने प्रहलाद जी के पाँच करोड़ साथियों को मार डाला और जब उसने मारने के लिए प्रहलादजी का गला पकड़ा तो अठाईस करोड़ प्रहलाद पंथी भयभीत होकर भाग खड़े हुए। हिरण्यकश्यपु क्रोधित होकर कहता है कि– बता तेरा भगवान कहाँ है? तब प्रहलादजी कहते है– तेरे में, मेरे में, इस तलवार में और इस खंभे में भी भगवान है। हिरण्यकश्यपु खंभे पर प्रहार करता है, भयानक विस्फोट के साथ खंभा फटता है और नरसिंह अवतार के रूप में भगवान प्रकट होकर हिरण्यकशिपु का वध करते हैं।